INTERNATIONAL MAGAZINE
RNI No. 64884/96
ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ।।
आतम पसारा करण हारा प्रभ बिनां नहीं जाणीऐ।।
आत्म मार्ग
Aug. 2018
जनम मरण दुहहू महि नाही
जन परउपकारी आए।।
धन्य धन्य सन्त ईशर सिंह जी महाराज, राड़ा साहिब
( मृत्यु लोक यात्रा: 5 अगस्त 1905 से 26 अगस्त 1975 )

# आत्म मार्ग

वर्ष तेइसवां - अंक सातवां, अगस्त 2018

गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब

**संचालक**

श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज ( ब्रह्मलीन )
तथा संत माता ( बीजी ) रणजीत कौर जी ( ब्रह्मलीन )

| चेयरमैन | एडिटर-इन-चीफ |
|---|---|
| सन्त बाबा लखबीर सिंह जी | सन्त बाबा हरपाल सिंह जी |
| **प्रबन्ध सम्पादक** | **मुख्य सम्पादक** |
| भाई ( डा. ) सुखविंदर सिंह | डा. जगजीत सिंह ( 97798 16909 ) |


## मासिक पत्रिका न पहुँचने सम्बन्धी पूछताछ

यदि आपको माह की 15 तारीख तक आत्म मार्ग पत्रिका प्राप्त नहीं हो पाती है तो आप कृप्या निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों पर कार्यलय समय प्रातः 10.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक सम्पर्क करने की कृपा करें -

सम्पर्क न. - **84378-12900, 94172-14391, 94172-14379**

**Email : atammarg1@yahoo.co.in**

**Postal Address for any Enquiry, Money Order's :**

**'ATAM MARG' MAGAZINE**
**Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib (New Chandigarh) P.O. Mullanpur Garibdas, Teh. Kharar, Distt. S.A.S. Nagar (MOHALI) - 140901, Pb. India**

## SUBSCRIPTION - शुल्क ( देश )

| वार्षिक | आजीवन सदस्यता | प्रति कापी |
|---|---|---|
| 300/- | 3000/- | 30/- |
| 320/- | 3020/- (For outstation cheques) | |

## SUBSCRIPTION FOREIGN ( विदेश )

| | Annual | Life |
|---|---|---|
| U.S.A. | 60 US$ | 600 US$ |
| U.K. | 40 £ | 400 £ |
| Canada | 80 Can $ | 800 Can $ |
| Australia | 80 Aus $ | 800 Aus $ |


*प्रकाशन के समस्त अधिकार सुरक्षित हैं।*



प्रकाशक, मुद्रक एवं सम्पादक सन्त बाबा हरपाल सिंह जी ने 'आत्म मार्ग' जै आफ सैट प्रिंटर्ज, 905 इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज़-2, चण्डीगढ़ से छपवा कर मुख्य कार्यालय 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब, डाकखाना मुल्लांपुर, तहसील खरड़, एस.ए.एस. नगर ( मोहाली ), पंजाब से प्रकाशित किया।


**Please visit us on internet at :-**
**For Atam Marg Email : atammarg1@yahoo.co.in,**
**Website & Live video -**

**www.ratwarasahib.in**
**www.ratwarasahib.org** } **(Every sunday)**

**Email :sratwarasahib.in@gmail.com**

## विदेशों में आत्म मार्ग की शाखाएँ

अमेरिका - बाबा सतनाम सिंह अटवाल
फोन तथा फैक्स : 001-408-263-1844

कैनेडा - भाई सरमुख सिंह पंनू, वैनकूवर
फोन : 001-604-433-0408

भाई तरसेम सिंह बैंस - मोबाइल 001-604-862-9525
फोन : 001-604-288-5000

भाई जसबीर सिंह राणू - फोन : 001-604-589-9189

इंगलैंड - बीबी गुरबख्श कौर तथा भाई जगतार सिंह जग्गी
फोन:0044-121-200-2818 फैक्स :0044-121-200-2879,

भाई अरविंदर सिंह ( राज ) मोबाइल:0044-7968734058

आस्ट्रेलिया : बीबी जसप्रीत कौर: मोबाइल-0061-406619858

## रतवाड़ा साहिब की संस्थाओं के सम्पर्क नम्बर

* आत्म मार्ग मैगज़ीन ( पंजाबी, हिन्दी तथा अंग्रेजी )
**9417214391, 9417214379, 8437812900**

* गुरू गोबिंद सिंह विद्या मन्दिर सीनियर सैकण्डरी स्कूल **(CBSE) - 0160-2255003**

* माता साहिब कौर मुफ्त सिलाई सैंटर - **96461-01996**

* सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल **(PSEB)** अंग्रेजी माध्यम - **95920-55581**

* सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल ( मुफ्त )
**98786-95178, 92176-93845**

* इंटरनैशनल डिवाइन स्कूल आफ़ नर्सिंग - **94172-14382**

* इंटरनैशनल डिवाइन कालेज आफ़ ऐजूकेशन ( बी. एड. ) **94172-14382**

* अकाल वृद्ध आश्रम ( मुफ्त ) **98157-28220**

## विशेष जानकारी के लिए

| | | |
|---|---|---|
| श्री मान जी | - | 98551-32009 |
| श्री आखण्ड पाठ साहिब बुकिंग | - | 94647-12900 |
| आडियो-वीडियो लाईब्रेरी | - | 98728-14385, 98555-28517 |
| केवल टी.वी. नेटवर्क | - | 94172-14385 |

**अन्य सम्पर्क नम्बर**

**98889-10777, 96461-01996, 9417214381**

## विषय-सूची

1. सम्पादकीय 5
*भाई ( डा. ) सुखविन्दर सिंह*

2. बारहमाहा 7
*डा. जगजीत सिंह*

3. धंनु धंनु धंनु जनु आइआ॥ 10
*सन्त बाबा वरियाम सिंह जी*

4. जिन सतिगुर की आगिआ ....।। 33
*सन्त बाबा वरियाम सिंह जी*

5. संतु का मारगु धरम की पउड़ी 35
*सन्त बाबा हरपाल सिंह जी*

6. आदर्श माताएँ 38
*भाई ( डा. ) सुखविन्दर सिंह*

7. बतीह सुलखणी सचु संतति पूत।। ... 40
*प्रो. जसमेर सिंह*

8. श्री हरिक्रिशन धिआईऐ ... 47
*प्रि. हरिभजन सिंह*

9. नौवें रत्न - सन्त ईशर सिंह जी महाराज, राड़ा साहिब 49
*ज्ञानी मेहर सिंह जी*

10. स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार 53
*डा. स्वामी राम जी*

11. विशेष जानकारी - बैंक खाता, आत्म मार्ग मैगजीन सदस्यता प्रारूप, अस्पताल जानकारी, तथा पुस्तक सूची 55

# सम्पादकीय

*( डा. ) भाई सुखविन्दर सिंह*

*संसार विच जद खुदा दे भगत आउंदे हन,*
*उह भुलड़ाँ नूं राह दसण आउंदे हन।*
*गोया! जेकर तेरी इह अख*
*रब दी ताँघ वाली होवे,*
*ताँ समझ कि रब दे भगत*
*रब नूं विखाउण लई आउंदे हन।*

भाई नन्द लाल जी ने इस रुबाई में परमात्मा के प्यारों की महिमा को कथन किया है। समय समय पर परमात्मा या वाहिगुरू जी इस संसार में ऐसे आत्मिक रसिकों को भेजते रहे हैं, जिन्होंने इस मृत्युलोक में आकर अन्धकारयुक्त लोकाई को रौशन किया। इस प्रकाश के आनन्द को पहले उन्होंने अपनी जन्म-जन्मान्तरों की तपस्या के फलस्वरूप स्वयं अनुभव किया या जिया और उसके बाद जन साधारण को वितरित किया। इस प्रकाश को या ईश्वरीय नूर को वे परमात्मा से ही प्राप्त करते हैं। एक नहीं बल्कि अनेकों आत्मदर्शी परमात्मा के प्यारे संसार मंच पर आए और संसार का शाश्वत मार्गदर्शन करते हुए संसार से अलोप हो गए और फिर शारीरिक रूप से अलोप होते हुए भी वे आत्मिक रूप से अमर हो गए। क्योंकि 'ब्रहमगिआनी सद जीवै नहीं मरता।।' ( अंग - 273 ) नूरों के नूर व प्रकाश के श्रोत, अकाल पुरुष वाहिगुरू जी के पावन स्वरूप गुरवाणी के अनुसार इस प्रकार के अभेद महापुरुषों ने पहले स्वयं गुरू जी से जीवन युक्ति प्राप्त की और दिव्य प्रकाशमयी जीवन संसार को जीकर दिखलाया।

*गुरबाणी इसु जग महि चानणु.......॥ अंग - 67*

*कबीर सेवा कउ दुइ भले एकु संतु इकु रामु ॥*
*रामु जु दाता मुकति को संतु जपावै नामु ॥*
*अंग - 1373*

गुरवाणी की पावन पंक्तियाँ उपर्युक्त सारी विचार की पुष्टि कर रही है। धन्य श्री गुरू गोबिंद सिंह महाराज जी के प्यार में लबालब भरे हुए भाई साहिब भाई नन्दलाल जी ने अपनी सातवीं रूबाई में ऐसा ही वर्णन किया है। आप जी ने फुरमान किया है कि -

*दर दहिर कि मरदानि खुदा आमदा अंद*
*बर गुम-शदगानि रहिनुमा आमदा अंद*
*गोया अगर ईं चशमि तू मुशताकि खुदा असत*
*मरदानि खुदा खुदा-नुमा आमदा अंद।*

इस रुबाई में उन्होंने परमात्मा में अभेद महापुरुषों की महिमा को ही वर्णित किया है। एक अन्य रुबाई में आप जी आत्म रसिकों की महिमा का वर्णन करते हुए फुरमान करते हैं कि -

*कलप ब्रिछ दे छावें*
*ताँ तैनूं दिल दीआँ मुरादाँ मिलदीआँ हन।*
*पर रब दे बंदिआँ दी छाँ हेठ*
*तूं रब नूं प्रापत कर लवेंगा।*

नि:शंक रूप से परमात्मा के उपहारों को सहज में ही प्राप्त किया जा सकता है लेकिन परमात्मा को पाना और परमात्मा के प्यार में जीना, यह विरले लोगों के ही भाग्य में आया है।

रुबाई के शब्द इस प्रकार से हैं -

*बजेरि साइआइ तूबा मुराद हा याबी।*
*बजेर साइआ मरदानि ह्क खुदा याबी।*

कल्पवृक्ष की छाया में दिल की इच्छाओं की पूर्ति है और परमात्मा के लोगों की छाया में परमात्मा की प्राप्ति होती है -

*आवै साहिबु चिति तेरिआ भगता डिठिआ ॥*
*मन की कटीऐ मैलु साधसंगि वुठिआ ॥*
*अंग - 520*

*जिना दिसंदड़िआ दुरमति वंञै मित्र असाडड़े सेई ॥ हउ ढूढेदी जगु सबाइआ जन नानक विरले केई ॥*
*अंग - 520*

*इह नीसाणी साध की जिसु भेटत तरीऐ ॥*
*अंग - 320*

उपर्युक्त आत्मिक रसिकों, तत्व वेत्ताओं व परमात्मा के प्यारों की महिमा को पढ़ व सुनकर मन के अन्दर सहज में है ख्याल उत्पन्न होता है कि इस प्रकार की आत्माएँ क्या आज के समय में भी हो सकती हैं, जो कि जन साधारण के लिए सदैव ही प्रकाश स्तम्भ बनकर अपने प्रकाशमयी जीवन

के द्वारा संसार को प्रकाशित करती हों? इस इच्छा की पूर्ति सम्भव है असम्भव नहीं। इस प्रश्न का जवाब सकारात्मक यानि कि 'हाँ' में है।

समर्थ सद्गुरु श्री गुरू नानक देव महाराज जी की निरंकारी ज्योति के ग्याहरवें स्वरूप, युगों युग अटल धन्य-धन्य श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी महाराज जी से आशीर्वाद प्राप्त करके एक नहीं अपितु अनेकों महापुरुषों ने इस लोकाई को परमात्मा के प्रेम में जोड़ा। गुरवाणी की इस अनुपम जीवन युक्ति के अनुसार उन्होंने स्वयं जीवन जिया और इस प्रकार का जीवन जीने की प्रेरणा आजीवन देते रहे। धन्य श्री गुरू गोबिंद सिंह महाराज जी का आशीर्वाद प्राप्त करके अनेकों ही सम्प्रदाय व टकसालें अस्तित्व में आई। दास, इनमें से एक सम्प्रदाय का जिक्र करना इस माह में आवश्यक समझता है। यह सम्प्रदाय होती मरदान या राड़ा साहिब सम्प्रदाय के नाम से सारे संसार में विख्यात है। पाँचों प्यारों के मुखी भाई साहिब भाई दया सिंह महाराज जी को धन्य श्री गुरू गोबिंद सिंह महाराज जी का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। भाई साहिब भाई दया सिंह जी से आशीर्वाद प्राप्त इस सम्प्रदाय में अनेकों महापुरुषों ने संसार मंच पर आकर अपने हिस्से की भूमिका अदा की, जिनके बारे में पावन गुरवाणी का कथन है -

*जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए ॥*
*जीअ दानु दे भगती लाईन हरि सिउ लैनि मिलाए॥*
*अंग - 749*

इस सम्प्रदाय की माला के पावन मोती हैं - श्रीमान सन्त बाबा ईशर सिंह जी महाराज राड़ा साहिब वाले। आपका जन्म 5 अगस्त सन् 1905 ई. में तथा भौतिक शरीर का अन्त 26 अगस्त सन् 1975 ई. में हुआ। भावार्थ आपका संसार में आना भी अगस्त माह में हुआ तथा जाना भी अगस्त माह में ही हुआ। आपका सारा जीवन नाम वाणी के साथ शरशार है। आपने लगभग आधी सदी से भी अधिक समय तक गुरमति का प्रचार देश व विदेशों में किया तथा इस दौरान आपने लाखों प्रेमीजनों को खण्डे-बाटे का अमृतपान करवा कर उन्हें शब्द गुरू श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के साथ जोड़ा। आप जी के अन्दर का आत्मिक रस, आप जी के कीर्तन, प्रवचनों व दर्शनों में से स्वतः ही परिलक्षित होता था। आज भी उन्हें प्यार करने वाली आत्माओं की आँखें उन्हें याद करके सजल हो जाती हैं। आत्म रस का आनन्द व आत्म स्वरूप का साक्षात्कार, आपको पूर्णरूपेण था यानि कि आप आत्मिक मण्डल के वासी थे। गुरवाणी के अन्दर एक नहीं वरन अनेकों प्रमाण इस प्रकार की आत्माओं के सम्बन्ध में प्राप्त होते हैं -

*जिना न विसरै नामु से किनेहिआ ॥*
*भेदु न जाणहु मूलि साँई जेहिआ ॥ अंग - 397*

*आठ पहर प्रभ बसहि हजूरे ॥*
*कहु नानक सेई जन पूरे ॥ अंग - 286*

*जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामाँ मनि मंतु ॥*
*धंनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु ॥ अंग - 319*

इस प्रकार के महापुरुषों की संगत करने की ताकीद गुरवाणी के अन्दर बार-बार की गई है -

*मेरे माधउ जी सतसंगति मिले सु तरिआ ॥*
*अंग - 10*

*कबीर इहु तनु जाइगा कवनै मारगि लाइ ॥*
*कै संगति करि साध की कै हरि के गुन गाइ ॥*
*अंग - 1365*

आप जी नाम का जप कर करके नामी का रूप ही हो चुके थे। भाई नन्दलाल जी, इस प्रकार की आत्मिक अवस्था का जिक्र अपनी रुबाई में बखूबी करते हैं कि -

*दिल सूजण दे चरनाँ दी धूड़ हो जावे*
*अते इह शोख अ्ख र्ब दा राह द्सण वाली हो जावे।*
*खाकि पाइ दोसतऐ दिल बवद*
*हादऐ राहि खुदा ईं चशमि शोख।*

जो गुरु के प्यार में लबालब भरे होते हैं और जिनके दिल की यह भावना होती है कि -

*साजन तेरे चरन की होइ रहा सद धूरि ॥*
*नानक सरणि तुहारीआ पेखउ सदा हजूरि ॥*
*अंग - 518*

इस प्रकार के महापुरुष जन साधारण को परमात्मा का मार्ग बतलाने वाले हो जाते हैं और उनकी दृष्टि, संसार का मार्ग दर्शक बन जाती है। संसार उनके माध्यम से आत्म रस प्राप्त करके आनन्दयुक्त जीवन व्यतीत करता है। ऐसे थे सन्त महाराज जी राड़ा साहिब वाले। उनका पावन जन्म दिवस तथा उनकी पावन याद इसी माह में उनके प्यार में सराबोर प्रेमीजनों द्वारा मनाई जा रही है। अनेकों श्रद्धालुजन उनके आत्म रसिक जीवन से प्रेरणा लेकर नाम-वाणी के साथ जुड़ते हैं तथा अपने जीवन के अन्दर प्यार, वैराग्य व श्रद्धा भावना में वृद्धि करते हैं। उनके जन्म दिवस तथा पावन याद के सम्बन्ध में रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट के संस्थापक, प्यारे महापुरुषों द्वारा किसी समय में उनकी याद में किए गए प्रवचनों का एक संग्रह, एक लेख के रूप में प्रस्तुत अंक में प्रकाशित किया जा रहा है। उम्मीद है श्रद्धालुजन, उनके जीवन को पढ़कर जरूर ही अपने अन्दर भी प्यार, श्रद्धा व नाम वाणी के साथ जुड़ने की अरदास

( शेष पृष्ठ 32 पर)

# से भादुइ नरकि न पाईअहि गुरु रखणवाला हेतु।।

## ( भाद्रपद माह की संक्रान्ति - 17 अगस्त, दिन शुक्रवार )

*( डा. ) जगजीत सिंह*

*बारह माहा माँझ महला ५ घरु ४*

*भादुइ भरमि भुलाणीआ दूजै लगा हेतु ॥*
*लख सीगार बणाइआ कारजि नाही केतु ॥*
*जितु दिनि देह बिनससी तितु वेलै कहसनि प्रेतु ॥*
*पकड़ि चलाईन दूत जम किसै न देनी भेतु ॥*
*छडि खड़ोते खिनै माहि जिन सिउ लगा हेतु ॥*
*हथ मरोड़ै तनु कपे सिआहहु होआ सेतु ॥*
*जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ॥*
*नानक प्रभ सरणागती चरण बोहिथ प्रभ देतु ॥*
*से भादुइ नरकि न पाईअहि गुरु रखण वाला हेतु ॥*

*अंग - 134*

ज्येष्ठ माह की तीव्र गर्मी के बाद सावन माह की सुहावनी ऋतु, छर्राटेदार व निरन्तर पड़ते रहने वाली वर्षा ठंडक लाती हुई सबके लिए रस रंग व राहत का सन्देश लेकर आती है, खूब वर्षा पड़ती है। पशु, पक्षी व मनुष्य तो क्या सारी वनस्पति भी लहलहा उठती है। ऐसी ऋतु में जीव रूपी स्त्री का हृदय भी खिल जाता है और उसका मन प्रभु चरणों के साथ जुड़ जाता है ( सावणि सरसी कामणी चरन कमल सिउ पिआरु।। अंग - 134 ) लेकिन जब भादों का महीना अत्यन्त गर्म, हुमस भरा व घबराहट वाला आता है तो ठंडी हवा के झोंके को भी व्यक्ति तरसता है उसका दम घुटने लगता है। वर्षा की उम्मीद में मनुष्य आकाश की तरफ देखता है, बादल आते हैं, वर्षा का भ्रम उत्पन्न होता है, लेकिन बादल इधर उधर बिखर जाते हैं, और पुनः उसी घबराहट पैदा करने वाली गर्मी व हुमस भरे वातावरण से दो चार होना पड़ता है। इसी प्रकार से जीव रूपी स्त्री की भ्रमों व शंकाओं भदी दशा भादों के महीने में कथन की गई है -

**भादुइ भरमि भुलाणीआ दूजै लगा हेतु ॥**
**लख सीगार बणाइआ कारजि नाही केतु ॥**

अर्थात भाद्रपद मास में गुम कर देने वाली व घबराहट उत्पन्न करने वाली तथा विह्वलता पैदा कर देने जैसी दशा उस जीव रूपी स्त्री की होती है, जिसका मन प्रभु पति के प्यार को भूल कर माया के मनमोहक व दुनियावी पदार्थों, रिश्तों व पदवियों के जाल में फँस जाता है। अज्ञानवश मनुष्य अपने निज स्वरूप को भूल कर, मायावी रसों में उलझ जाता है तथा दुखी होता है। मनुष्य की वास्तविकता क्या है तथा उसका लक्ष्य क्या है? गुरवाणी समझ प्रदान करती है -

*मन तूं जोति सरुपु है आपणा मूलु पछाणु ॥*
*मन हरि जी तेरै नालि है गुरमती रंगु माणु ॥*

*अंग - 441*

लेकिन जिस प्रकार से भादों भ्रमों व शंकाओं भरा महीना है, बादल आए, उम्मीद जगी कि वर्षा होगी ठंडक मिलेगी लेकिन थोड़ी से देर में ही बादल गायब हो जाते हैं और पुनः वही हुमस, धूप व घबराहट। यही दशा भ्रमों व शंकाओं में पड़े हुए मनुष्य की होती है जिसे कि प्रभु विस्मृत हो चुका है और द्वैत भाव में संसार का मोह व्याप्त हो गया है ( दूजै लगा हेत )। सही मार्ग से भटकी हुई जीव रूपी स्त्री भले ही लाखों हार-श्रृंगार कर ले लेकिन उसका कोई भी कर्म पति मिलाप में सहायक नहीं हो सकता है। प्रभु जी को विस्मृत करके सांसारिक काम-धन्धों, पदार्थों पदवियों आदि से सुख की उम्मीद करनी बहुत बड़ी अज्ञानता है। अहंभाव का संसार, संयोग-वियोग का, मिलाप व बिछुड़ने का राग-द्वैष का, संसार है। इसमें काम, क्रोध, लोभ, मोह, वैर, विरोध, ईर्ष्या, निन्दा, आशा, तृष्णा, शंका, भय आदि विषय विकार व्याप्त हैं, जिसके चक्रव्यूह में फँस कर सुख की उम्मीद करनी मूर्खता है। माया के मोह व लालच में रंगे हुए चोले को धारण करते हुए जीव रूपी स्त्री, प्रभु जी के प्रेम का पात्र कैसे बन सकती है -

*इहु तनु माइआ पाहिआ पिआरे लीतड़ा लबि रंगाए॥*
*मेरै कंत न भावै चोलड़ा पिआरे किउ धन सेजै जाए॥*

*अंग - 721*

**जतु दिनि देह बिनससी तितु वेलै कहसनि प्रेतु ॥**
**पकड़ि चलाईन दूत जम किसै न देनी भेतु ॥**
**छडि खड़ोते खिनै माहि जिन सिउ लगा हेतु ॥**

कुदरत का यह एक शाश्वत नियम है कि जो भी वस्तु उत्पन्न होती है, वह बढ़ती, फूलती, फलती व विकास करती है तथा समाप्त हो जाती है, प्रत्येक वस्तु का आदि, मध्य व अन्त प्रकृति का नियम अथवा ईश्वरीय सिद्धान्त है -

*जो आइआ सो चलसी सभु कोई आई वारीऐ ॥*
*अंग - 474*

यहाँ गुरु महाराज जी बतलाते हैं कि जिस दिन मनुष्य का शरीर समाप्त हो जाएगा, अर्थात जब मनुष्य मर जाता है, तो उस समय सारे निकटवर्ती सम्बन्धी, माता-पिता, पत्नी-पति, बहिन-भाई, पुत्र-पुत्री सारा परिवार तथा मित्रगण आदि कहेंगे कि यह प्राणी अब मर गया है और अब इस अपवित्र पड़ी देह को जल्दी बाहर ले चलो। उस समय भगवान के यमदूत उस जीव की आत्मा को पकड़ कर आगे-आगे चला लेते हैं और किसी को भी इस बात का भेद नहीं देते हैं कि वे उसे कहाँ पर लेकर जा रहे हैं और यह एक रहस्य ही बना रह जाता है ( किसै न देनी भेतु )।

*कोई जानै कवनु ईहा जगि मीतु ॥*
*जिसु होइ क्रिपालु सोई बिधि बूझै ता की निरमल रीति॥*
*मात पिता बनिता सुत बंधप इसट मीत अरु भाई ॥*
*पूरब जनम के मिले संजोगी अंतहि को न सहाई ॥*
*अंग - 700*

**हथ मरोड़ै तनु कपे सिआहहु होआ सेतु ॥**
**जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ॥**

सामने आई मृत्यु को देखकर मनुष्य घबराता है, पछताता है, उसका शरीर कष्टमय होता है, घबराहट के कारण उसके ऊपर एक रंग आता है और एक जाता है, शरीर काले से सफेद होना शुरू हो जाता है। इस समय जब मृत्यु सामने दिखाई पड़ती है तो मनुष्य को अपने किए हुए बुरे कर्मों की श्रृंखला सामने दिखाई पड़ने लगती है। व्यर्थ के कार्यों में नष्ट किए समय को याद करके उसे बहुत अधिक पाश्चाताप होता है लेकिन अब पाश्चाताप करने का क्या लाभ रह जाता है? जब समय था, तब गुरु जी के उपदेश, गुरवाणी व महापुरुषों के उपदेश को सुनकर भी अनुसना करता रहा तथा उस समय माया रूपी शैतान ने अन्य कार्यों में उलझा कर रखा। और-और माया को एकत्र करने में, कोठियां, कारें, कारखाने, जमीनें और अधिक खरीदने में व्यस्त रहा यही नहीं अपितु इन सबकी प्राप्ति के लिए झूठ, फरेब, धोखे, ठगी आदि बुरे कार्यों को करने से भी पीछे नहीं हटा। श्री गुरु जी फुरमान करते हैं -

*पापा बाझहु होवै नाही मुइआ साथि न जाई ॥*
*अंग - 417*

लेकिन माया के जाल में उलझा हुआ मनुष्य परमार्थ की बातें सुनने के लिए तैयार ही नहीं होता है -

*फरीदा कूकेदिआ चाँगेदिआ मती देदिआ नित ॥*
*जो सैतानि वंञाइआ से कित फेरहि चित ॥*
*अंग - 1378*

यह अटल सच्चाई है कि मनुष्य जिस प्रकार के कर्म करता है वह वैसे ही प्रतिकर्म भोगता है। यह शरीर निःसन्देह किए हुए कर्मों की खेती ही है। मनुष्य जो कुछ भी इसमें बोता है, वही फल पाता है *( जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेत।।)*।

यह तो प्रत्यक्ष बात है कि जमीन में हम जिस प्रकार के बीज बोएंगे, फसल उसी प्रकार की उगेगी। बाबा फरीद जी कहते हैं कि यदि कोई किसान बीज तो बबूल के बोए लेकिन माँगने लगे उससे अंगूर या फिर वस्त्र बुनवाने के लिए हाथ में लिए रहे ऊन और कहे कि मेरे लिए रेशम के वस्त्र बना दो तो यह उसकी बहुत बड़ी भूल होगी -

*फरीदा लोड़ै दाख बिजउरीआँ किकरि बीजै जटु ॥*
*हंढै उंन कताइदा पैधा लोड़ै पटु ॥ अंग - 1379*

विषय विकारों के बीज बो-बोकर नाम रस की फसल प्राप्त नहीं की जा सकती है। लेकिन -

**नानक प्रभ सरणागती चरण बोहिथ प्रभ देतु ॥**
**से भादुइ नरकि न पाईअहि गुरु रखण वाला हेतु॥**

अन्त में श्री गुरु जी भूले भटके जीव को जीवन यात्रा रूपी फसल बोने के लिए दिशा-निर्देश देते हुए प्रेरणा देते हैं कि मोह-माया की झूठी दुनिया में अमूल्य जीवन को बरबाद मत करो, प्रभु जी की शरण में आओ। प्रभु जी से बिछुड़े हुओं को गुरू, मिलाप का मार्ग बतलाता है। गुरु की कृपा की बदौलत ही मनुष्य नाम के साथ जुड़ता है और नाम रूपी जहाज में चढ़कर मनुष्य भवसागर से पार हो जाता है यानि कि उसका कल्याण हो जाता है। गुरु जी अपने सेवकों का रक्षक व हितैषी बनकर, नर्क की आग को उनके पास नहीं फटकने देते हैं, प्रभु जी की दरगाह में गुरु के प्रेमीजनों को पूरा मान सम्मान मिलता है -

*रे रे दरगह कहै न कोउ ॥*
*आउ बैठु आदरु सुभ देउ ॥ अंग - 252*

जब मनुष्य अपने अहंभाव व बल तथा बुद्धि को त्याग कर, अपने आप को गुरु के चरणों में अर्पित कर देता है

और उसकी रजा (आज्ञा) के अनुसार क्रियाशील होता है, तो बख्शनहार गुरु अपने शरणागत की लाज रखता है और प्रभु का मिलाप पूर्णानन्द एवं दिव्यावस्था में लीन करने की कृपा करता है -

*जो सरणि आवै तिसु कंठि लावै इहु बिरदु सुआमी संदा॥ बिनवंति नानक हरि कंतु मिलिआ सदा केल करंदा ॥ अंग - 544*

अतः भादों के महीने में गुरु जी का सम्पूर्ण उपदेश यह है कि यह जीवन, प्रभु जी द्वारा प्राप्त अमूल्य वस्तु है यह एक ऐसा अवसर है, जिसमें हम गुरु की शरण में जाकर प्रभु से बिछुड़े हुए, दोबारा मिलाप हासिल कर सकते हैं। संचित कर्मों के कारण हम प्रभु जी से बिछुड़ कर द्वैत भाव में, सांसारिक पदार्थों में से सुख की तलाश करते हैं। यह भटकन ही हमें नर्कों का अधिकारी बनाती है। गुरु की शरण में सारे सुख, शान्ति व सहजानन्द है। चौरासी लाख योनियों की भटकन के बाद मनुष्य जन्म प्राप्त होता है। गुरु की शरण में पड़ने के बाद ही इसकी कीमत का अहसास होता है, गुरु की शरण में आए हुए मनुष्य का शरीर तथा मन प्रभु-प्रेम के गहरे लाल रंग में रंगा जाता है। ऐसा गुरमुख नाम के सौदे का व्यापार करके, अपने जीवन को सफल करके यहाँ से परलोक के लिए प्रस्थान करता है तथा परमात्मा की दरगाह में भी सम्मान हासिल करता है -

*माणस जनमु दुलंभु गुरमुखि पाइआ ॥*
*मनु तनु होइ चुलंभु जे सतिगुर भाइआ ॥ १ ॥*
*चलै जनमु सवारि वखरु सचु लै ॥*
*पति पाए दरबारि सतिगुर सबदि भै ॥ १ ॥ रहाउ ॥*
*मनि तनि सचु सलाहि साचे मनि भाइआ ॥*
*लालि रता मनु मानिआ गुरु पूरा पाइआ ॥ २ ॥*
*हउ जीवा गुण सारि अंतरि तू वसै ॥*
*तूं वसहि मन माहि सहजे रसि रसै ॥ ३ ॥*
*मूरख मन समझाइ आखउ केतड़ा ॥*
*गुरमुखि हरि गुण गाइ रंगि रंगेतड़ा ॥ ४ ॥*
*नित नित रिदै समालि प्रीतमु आपणा ॥*
*जे चलहि गुण नालि नाही दुखु संतापणा ॥ ५ ॥*
*मनमुख भरमि भुलाणा ना तिसु रंगु है ॥*
*मरसी होइ विडाणा मनि तनि भंगु है ॥ ६ ॥*
*गुर की कार कमाइ लाहा घरि आणिआ ॥*
*गुरबाणी निरबाणु सबदि पछाणिआ ॥ ७ ॥*
*इक नानक की अरदासि जे तुधु भावसी ॥*
*मै दीजै नाम निवासु हरि गुण गावसी ॥ अंग - 751*

**रागु तुखारी छंत महला १**

*भादउ भरमि भुली भरि जोबनि पछुताणी ॥*
*जल थल नीरि भरे बरस रुते रंगु माणी ॥*
*बरसै निसि काली किउ सुखु बाली दादर मोर लवंते ॥*
*प्रिउ प्रिउ चवै बबीहा बोले भुइअंगम फिरहि डसंते ॥*
*मछर डंग साइर भर सुभर बिनु हरि किउ सुखु पाईअै॥*
*नानक पूछि चलउ गुर अपुने जह प्रभु तह ही जाईअै॥*

*(भादुई भरमि भुली भरि जोबनि पछुताणी।।)* भादों का महीना भ्रमों से भरा हुआ महीना है। बादल आते हैं, मनुष्य समझता है कि वर्षा अवश्य होगी लेकिन क्षण भर में ही बादल लुप्त हो जाते हैं। इसी प्रकार से माया के छल के कारण मनुष्य भटकता रहता है और आत्म मार्ग से भटक जाता है। जो जीव रूपी स्त्री यौवन के अहंकार में भटक जाती है उसे फिर पति के विरह का पाश्चाताप करना पड़ता है। *(जल बल नीरि भरे बरस रुते रंग माणी।।)* दूसरी तरफ भादों के महीने में ही वर्षा के कारण गड्ढे व नीची जगहें पानी से भर जाती हैं। प्रभु प्यार करने वाली जीव रूपी स्त्री इन नजारों की अनुभूति करती है। *(बरसै निसि काली किउ सुखु वाली दादर मोर लवंते।।)* इस महीने काली रात को जब वर्षा होती है, मेंढक टर्र-टर्र करते हैं, मोर आवाजें निकालते हैं, तो पति से बिछुड़ी स्त्री को इस सुहावने रंग से आनन्द नहीं मिलता है, बल्कि बिछोड़े का दुख और अधिक बढ़ जाता है। *(प्रिउ प्रिउ चवै बबीहा बोले भुइअंगम फिरहि डसंते।।)* पति से बिछुड़ी स्त्री को यही दिखाई पड़ता है कि इस मौसम में साँप डसते घूम रहे हैं तथा पीउ-पीउ बोलता हुआ बाबीहा भी उसके बिछोड़ी की व्यथा को और अधिक बढ़ाता है। *(मछर डंग साइर भर सुभर बिनु हरि किउ सुखु पाइअै।।)* चारों तरफ तालाब व गड्ढे पानी के साथ पूरे ऊपर तक भरे हुए हैं, लेकिन विरहिनी स्त्री को इससे कोई भी सुख नहीं मिलता है और उल्टा उसे मच्छर के डंक पीड़ा पहुँचाते हैं। जिस जीव स्त्री को प्रभु पति के बिछोड़े का अहसास हो जाता है उसे फिर प्रभु जी की याद के बिना किसी अन्य रंग तमाशे में से आत्म आनन्द नहीं मिलता है। *(नानक पूछि चलउ गुर अपने जह प्रभ तहे ही रहीअै।।)* गुरु जी फुरमान करते हैं कि अपने गुरु की शिक्षा पर चल कर उसके द्वारा बताए गए मार्ग पर चलकर, जहाँ से कि प्रभु पति मिल सकता है, उस मार्ग पर जाना ही हम जीव स्त्रियों को शोभा देता है।

# धंनु धंनु धंनु जनु आइआ॥

## ( श्रीमान सन्त ईशर सिंह जी महाराज, राड़ा साहिब )

## ( 5 अगस्त 1905 - 26 अगस्त 1975 )

*सन्त वरियाम सिंह जी*
*संस्थापक वि. गु. रू. मिशन*

*सतिनाम श्री वाहिगुरू,*
*धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज*
*डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ॥*
*डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ अंग - 256*

*धारना - धूड़ी मुख लावां जी,*
*संता नूं बंदना कर के।*

*जलु डोवउ इहु सीस करि कर पग पखलावउ॥*
*बारि जाउ लख बेरीआ दरसु पेखि जीवावउ॥*
*करउ मनोरथ मनै माहि अपने प्रभ ते पावउ॥*
*देउ सूहनी साध कै बीजनु डोलावउ॥*
*अंम्रित गुण संत बोलते सुणि मनहि पीलावउ॥*
*उआ रस महि सांति त्रिपति होइ बिखै जलनि बुझावउ॥ अंग - 813*

*धारना - तिन मिल हरि गावहु जी,*
*जब भगत करे संत मंडली।*

*जब भगति करहि संत मंडली तिन मिलि हरि गावउ॥*
*करउ नमसकार भगत जन धूरि मुखि लावउ॥*
*ऊठत बैठत जपउ नमु इह करमु कमावउ॥*
*नानक की प्रभ बेनती हरि सरनि समावउ॥*
*अंग - 813*

साधु संगत जी! उच्च स्वर में बोलो सत्तनाम श्री वाहिगुरू। आप सब सुदूरवर्ती स्थानों से, रक्षाबन्धन, पूर्णमाशी के अवसर पर श्री गुरू महाराज जी के दरबार में उपस्थित हुए हो। आज पूर्णमाशी का दिवस है तथा भारतीय संस्कृति के अनुसार रक्षाबन्धन का त्यौहार है। राखी बाँधने का तात्पर्य यह था कि बहनें बहुत तप साधना व भजन बन्दगी करके, ईश्वर के चरणों में यह प्रार्थना किया करती थीं कि हे ईश्वर! मेरे भाई की रक्षा प्रत्येक स्थान पर करना। क्योंकि बहन का प्यार अपने भाई से अथाह था। वह स्वयं तो अपने जीवन को समाप्त करने के लिए तैयार थी लेकिन अपने भाई को, अपनी आँखों से कभी भी दूर होने देने के लिए कदापि भी तैयार नहीं थी। अत: यह गहरे प्यार भाव वाला त्यौहार है। हम सभी लोग इसे हर्षोल्लास से मनाते हैं। लेकिन श्री गुरू जी ने जिस राखी के बारे में हमें बताया है वह इस प्रकार है-

*ताती वाउ न लगई पारब्रहम सरणाई॥*
*चउगिरद हमारै राम कार दुखु लगै न भाई॥*
*अंग - 819*

परमेश्वर के नाम की जो राखी है, उसके माध्यम से सारे दुखों की समाप्ति हो जाती है -

*रोगन ते अर सोगन ते जल जोगन ते बहु भांति बचावै॥*
*सत्रु अनेक चलावत घाव तऊ तन एक न लागन पावै॥*
*राखत है अपनो कर दै कर पाप समूंह न भेटन पावै॥*
*और की बात कहा कह तो सों, सु पेट ही के पट बीच बचावै॥*

*गुर का सबदु रखवारे॥ चउकी चउगिरद हमारे॥*
*राम नामि मनु लागा॥ जमु लजाइ करि भागा॥*
*प्रभ जी तू मेरो सुखदाता॥ बंधन काटि करे मनु निरमलु*
*पूरन पुरखु बिधाता॥ नानक प्रभु अबिनासी॥*
*ता की सेव न बिरथी जासी॥ अनद करहि तेरे दासा॥*
*जपि पूरन होई आसा॥ अंग - 626*

अत: यह एक चौकी है, जो कि यहाँ पर भी रक्षा करती है तथा दरगाह में जाकर भी रक्षा करती है। जब राम का नाम हृदय में बस जाता है तो फिर जो यमदूत होता है, वह भी पास तक आने का साहस नहीं जुटा पाता है, बल्कि वह दूर भाग जाता है।

*जमु लजाइ करि भागा॥ अंग - 626*

इस प्रकार वह गुरू शब्द की रक्षा पांच प्यारों के माध्यम से मिल पाती है। जब हम उनके द्वारा बताए गए मार्ग का अनुसरण करते हैं तो फिर उसके द्वारा एक ऐसी अवस्था की प्राप्ति हो जाती है, जिसमें सोते अथवा जागते यानि कि क्षण मात्र के लिए भी वाहिगुरू विस्मृत नहीं होता है। बस करना यह है कि जिह्वा के द्वारा नाम का जप करो, कानों के द्वारा, आँखों के द्वारा, प्रत्येक रोमकूप के द्वारा, श्वास-

श्वास के द्वारा नाम का जप करता रहे। यानि कि प्रत्येक प्रकार से उसका ध्यान वाहिगुरू जी में ही रहे। कई प्रेमीजनों का यह ख्याल होता है कि क्या कानों के द्वारा भी नाम का जप होता है? साधु संगत जी! कान भी नाम को श्रवण करते हैं। ये सब नाम की अवस्थाएं हैं।

इस प्रकार से जिसे क्षण मात्र के लिए भी नाम विस्मृत नहीं होता है, उसे साधु का दर्जा प्राप्त होता है।

*जिना सासि गिरासि न विसरै*
*हरि नामां मनि मंतु॥*
*धंनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु॥ अंग - 319*

सन्तजन संसार में आते ही इसलिए हैं -

*कबीर सेवा कउ दुइ भले एकु संतु इकु रामु॥*
*रामु जु दाता मुकति को संतु जपावै नामु॥*
*अंग - 1373*

दोनों भले क्यों हैं? क्योंकि -

*रामु जु दाता मुकति को संतु जपावै नामु॥*
*अंग - 1373*

सन्तजनों का कार्य है, नाम का जप करवाना और मुक्ति को प्रदान करना, परमेश्वर का कार्य है। इस प्रकार संसार में जो सन्तजन आते हैं, वे परमेश्वर द्वारा भेजे हुए होते हैं लेकिन जो सारा संसार है, वह कर्मों के बन्धन से बन्धा हुआ आता है। कोई दुख भोगने के लिए आता है, कोई सुख भोगने के लिए आता है, कोई कर्जा देने के लिए आता है, कोई कर्जा लेने के लिए आता है। इस प्रकार से सन्तजनों के आने में और जन साधारण के आने में बहुत बड़ा फर्क है। अब हम लोगों (जन साधारण) के संसार में आने से संसार को कोई विशेष लाभ नहीं होता है बल्कि हम तो संसार के वातावरण को और भी अधिक दूषित कर देते हैं। हम यहाँ की शान्ति को भंग करने में ही अपना योगदान देते हैं। लड़ाई-झगड़े, दंगे-फसाद आदि करके हम यहाँ अपनी बुरी छाप छोड़ जाएंगे। यही नहीं बल्कि हम यहाँ पर इस प्रकार की गतिविधियां कर जाएंगे जिनके प्रभाव से यह संसार, वर्तमान में भी दुखी होता रहे और भावी पीढ़ियां भी उनके गलत परिणामों को भुगतने के लिए विवश हो जाएं।

इस सबके विपरीत साधू उस समय आते हैं जबकि संसार बहुत अधिक दुखी होता है और उन्हें शान्ति व सुख की बहुत तलाश होती है। उस समय साधू विभिन्न प्रकार से संसार का मार्ग दर्शन करके, उन्हें ज्ञान व सुख प्रदान करते हैं। उनके वचनों या उपदेशों पर जो अमल करता है, उनका तो कल्याण होता ही है, उनके शरीर के बाद भी, उनके वचनों पर जो भी प्राणी अमल करते हैं, उनका हजारों सालों तक कल्याण होता ही रहता है। इस प्रकार हम लोगों (जन साधारण) व उन लोगों (सन्त जनों) में कितना बड़ा फर्क है? वैसे आते हम लोग भी वैसे ही हैं, तथा वे लोग भी उसी प्रकार से आते हैं लेकिन दोनों के आने में बहुत बड़ा फर्क हुआ करता है। वे भी खाते हैं, पीते हैं, सोते हैं, आराम करते हैं, लेकिन फर्क बहुत होता है। संसार के अन्दर उनके आने को धन्य धन्य कहा जाता है और केवल उन्हीं को धन्य नहीं कहा जाता है बल्कि उनकी माता को भी धन्य कहा जाता है।

*तिन धंनु जणेदी माउ आए सफलु से॥ अंग - 488*

इसके विपरीत हम लोगों के संसार में आने को उलाहना मिलता है -

*जिह कुलि पूतु न गिआन बीचारी॥*
*विधवा कस न भई महतारी॥ अंग - 328*

सबसे पहले तो मां को ही अपशब्द सुनने पड़ गए। यह तो बहुत गलत बात हो गई। कोई भी व्यक्ति अपनी मां के लिए अपशब्दों को सुनना पसन्द नहीं करता है लेकिन इस प्रकार के अपशब्द तो परमेश्वर ने स्वयं कह दिए हैं। वे कहते हैं कि इस प्रकार की मां तो विधवा ही हो जाती। प्रभु जी ने ऐसा क्यों कहा? क्योंकि हमने परमेश्वर का नाम नहीं जपा। इसलिए जो माँ बेचारी बेकसूर थी, निर्दोष थी, उसे भी उलाहना सहन करना पड़ा। गुरू जी कहते हैं ऐ भद्रपुरुष! यह उलाहना तुम्हारे लिए भी है। यथा -

*जिह नर राम भगति नहि साधी॥*
*जनमत कस न मुओ अपराधी॥ अंग - 328*

ऐ अपराधी व्यक्ति! अच्छा होता यदि तुम जन्म लेते ही मर जाते क्योंकि जब तुमने नाम का जप ही नहीं करना था तो फिर तुम्हारे जन्म लेने का ही क्या लाभ है? इस प्रकार हमारा व उनका बहुत फर्क होता है।

*जो जानै तिसु सदा सुखु होइ॥*
*आपि मिलाइ लए प्रभु सोइ॥*
*ओहु धनवंतु कुलवंतु पतिवंतु॥*
*जीवन मुकति जिसु रिदै भगवंतु॥ अंग - 294*

*धंनु धंनु धंनु जनु आइआ॥*
*जिसु प्रसादि सभु जगतु तराइआ॥*

*जन आवन का इहै सुआउ॥*
*जन कै संगि चिति आवै नाउ॥*
*आपि मुकतु मुकतु करै संसारु॥*
*नानक तिसु जन कउ सदा सदा नमसकारु॥*
*अंग - 295*

इस प्रकार के महापुरुष संसार का कल्याण करने के लिए समय-समय पर आते रहते हैं। संसार के अन्दर उनका

आना धन्य हुआ करता है। वे परमेश्वर द्वारा भेजने पर आते हैं तथा बुलाने पर वापिस निजधाम की ओर प्रस्थान कर जाते हैं। इसके विपरीत हम लोग कर्मबन्धन के चक्रव्यूह में पड़कर ही, अपने कर्मों के फल भोगने के लिए आते हैं। महापुरुषों के लिए कोई भी कर्मबन्धन नहीं होता है, संसार पर उनका आना धन्य हुआ करता है।

जैसे कि अधिकांश प्रेमीजन जानते ही हैं कि आज के दिन यानि कि 4 अगस्त वाले दिन (सन 1905 ई. में) श्रीमान सन्त बाबा ईशर सिंह जी महाराज, जिन्हें आमतौर पर लोग 'राड़ा साहिब वाले महापुरुष' कहते हैं, का इस संसार में आना हुआ। उन्होंने यहाँ पर आकर एक अद्‌भुत प्रकार का जीवन नाट्य किया। यदि हम उनकी जीवन लीलाओं का वर्णन करने लग पड़ें तो शायद सालों साल का समय भी कम ही पड़ेगा। वे हृदय के व्यापारी थे। वे हृदय को ही गिरवी रख लेते थे और बदले में उसे नाम प्रदान कर देते थे। सांसारिक बन्धनों को तोड़ देते थे, उनका ऐसा प्यार लोगों के हृदयों में बसा कि आज उनको यहाँ से गए हुए कई दशक बीत चुके हैं, लेकिन किसी के हृदय में उनका प्यार कम नहीं हुआ है। आज जिज्ञासुओं के मनों में प्रायः एक विरह व्यथा की आवाज इस प्रकार से उठती रहती है –

*साजन चले पिआरिआ किउ मेला होई॥*
*जे गुण होवहि गंठड़ीऐ मेलेगा सोई॥* अंग – 729

क्योंकि वे असली सज्जन होते हैं, उनके साथ हार्दिक प्यार होता है। सज्जन दो प्रकार के होते हैं, एक असली सज्जन होते हैं और दूसरे नकली सज्जन होते हैं। असली सज्जनों को पक्के सज्जन कहा जाता है, तथा नकली सज्जनों को कच्चे सज्जन कहा जाता है। जो सज्जन यहाँ से जाने के बाद भी नहीं छोड़ता है बल्कि फिर भी प्रतीक्षा करता रहता है, वह गुप्त रूप से साथ में रहता है और मदद करता है, वही असली सज्जन होता है। गुरू जी कहते हैं –

*नानक कचड़िआ सिउ तोड़ि ढूढि सजण संत पकिआ॥*
*ओइ जीवंदे विछुड़हि ओइ मुइआ न जाही छोड़ि॥*
अंग – 1102

कच्चे व पक्के, दोनों में ही फर्क है। ये जो दुनिया के सज्जन हैं, ये सब माया के सज्जन हैं, प्रभुता के सज्जन हैं। यदि कोई विपत्ति आ जाए तो इनमें से कोई भी तुम्हारी मदद नहीं कर पाएगा। उस समय तुम अकेले ही रह जाओगे। संसार के अन्दर तो तुम अकेले रह ही जाओगे साथ ही तुम जब संसार से परलोक गमन करोगे तब भी तुम केवल अकेले व असहाय रह जाओगे। गुरू जी कहते हैं कि इस प्रकार के तथाकथित सज्जनों का फिर क्या लाभ है?

*सजण सेई नालि मै चलदिआ नालि चलंनि॥*
*जिथै लेखा मंगीऐ तिथै खड़े दिसंनि॥* अंग – 729

वास्तविक सज्जन तो वही होता है जो कि प्रत्येक संकट की स्थिति में मददगार हो। यथा –

*नानक कचड़िआ सिउ तोड़ि ढूढि सजण संत पकिआ॥*
*ओइ जीवंदे विछुड़हि ओइ मुइआ न जाही छोड़ि॥*
अंग – 1102

अब सवाल यह उठता है कि क्या आगे जाकर कोई मिलाप हो भी सकता है, अथवा जो बिछुड़ गया तो बिछुड़ गया?

*पुछहु जाइ सिआणिआ आगै मिलणु किनाह॥*
अंग – 595

गुरू जी कहते हैं कि ऐसी कोई बात नहीं है। बस शर्त यह है कि यदि इस संसार में रहते हुए उसके सदृश्य गुण हमारे अन्दर आ जाएं तो संसार में रहते हुए भी उसके साथ मिलाप रहता है और संसार से जाने के बाद भी उनके साथ मिलाप पूर्ववत् बना ही रहता है। अतः इस प्रकार के महापुरुषों ने 26 अगस्त को दिन के दो बजे, अपने पार्थिव शरीर का परित्याग इंग्लैंड में कर दिया। इंग्लैंड के समयानुसार उस समय प्रातः पौने आठ का समय था। लेकिन एक दिन पहले ही उनकी याद मनाई जाती है।

दस गुरुओं के बाद पांच प्यारों के मुखी जत्थेदार भाई दया सिंह जी की याद भी हमारे हृदय में सदैव ही ताजी रहती है क्योंकि जो ज्ञान दशमेश जी ने भाई दया सिंह जो को प्रदान किया, वह ज्ञान सरिता समाप्त तो नहीं हो गई? वह तो आगे बढ़ती ही गई। जिस प्रकार से हमारे खिलाड़ी बच्चे खेलते हैं। वे प्रज्जवलित ज्योति को इटली से लेकर आते हैं, फिर वह न जाने कितने हाथों से निकल कर आती है और पुनः प्रज्जवलित हो जाती है। इसी प्रकार भाई दया सिंह के बाद बाबा शोभा सिंह जी हुए आपने आनन्दपुर साहिब बैठकर सेवा की तथा पाखण्ड को बढ़ने से रोककर रखा। उस समय भी बहुत से गुरू बन गए थे क्योंकि मैदान खाली था। जिस समय मैदान खाली नहीं था, उस समय भी तो 22 गुरू बन गए थे। हालांकि उस समय गुरू तेग बहादुर जी हाजिर थे। एक ऐसा भी आया था जिसने आनन्दपुर साहिब में आकर गद्दी लगा ली थी। उनके बाद सन् 1906 में भी ऐसा ही हुआ। रोपड़ जिले का एक साधारण सा व्यक्ति गांवों के अन्दर घूमा करता था। वह एक ही बात कहता रहता था, आ गई! आ गई! लोग सोचते थे कि न जाने यह क्या कहता रहता है, दैवनेत से प्लेग की बीमारी का प्रकोप हुआ और बहुत लोग काल को प्यारे हो गए। लोग कहने लगे कि संत जी तो पहले ही कहा करते कि आ गई! आ गई! फलस्वरूप बहुत मान्यता हो गई। साधु संगत जी! हम लोग सोच विचार तो करते ही

नहीं हैं क्योंकि परख करने वाली हमारे अन्दर आंख ही नहीं है। हम लोग तो वैसे ही पीछे लग जाते हैं। हम तो कहते हैं कि तुम लोग वैसे ही किसी के पीछे मत लग जाओ। तुमने श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी का पल्लू पकड़ा है तो उसके बने रहो, कभी भी धोखा नहीं खाओगे। व्यक्तियों तथाकथित प्रसिद्ध लोगों के पीछे मत लगा करो। यदि कोई पूरा भी है तो भी वह श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी से बाहर नहीं है बल्कि इसके अन्दर ही है। यदि हम श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी लक्षमण रेखा से बाहर जाएंगे तो तुरन्त ही हम धोखा खा जाएंगे क्योंकि हम लोग अनजान लोग हैं, हमें कोई परख नहीं है। हमें यह नहीं पता चल पाता है कि कौन किस अवस्था का स्वामी है? क्योंकि हमें तो अपनी अवस्था का ही पता नहीं है तो फिर हम दूसरे की अवस्था की गणना कैसे कर पाएंगे? जो ज्ञानवान है, समझदार है, उसी को पता चल पाता है। वह नमस्कार भी करता है, चरण-रज की याचना भी करता है। इस प्रकार बाबा जी (बाबा शोभा सिंह जी) ने बहुत अधिक सेवा की। उनके बाद बाबा साहिब सिंह जी ऊना साहिब वालों ने, जो कि गुरू नानक देव की पीढ़ी में दसवें स्थान पर थे, इस ज्ञान ज्योति को प्रज्वलित करके रखा। आपने, महाराजा रणजीत सिंह के शासन काल में असंख्य लोगों को अमृतपान करवाकर सत्य के साथ सम्बद्ध किया। क्योंकि साधु संगत जी! जब राजसत्ता अपने हाथ में आई तो इन अमीरों वजीरों व बड़े-बड़े सरदारों का धार्मिक पतन होना शुरू हो गया, वे उस संकटकालीन समय को पूर्णतः भूल चुके थे जबकि सिक्खों के सिरों के मूल्य लगा करते थे। वे उन सिक्खों की साधनाओं को भूल गए जो कि श्वास-श्वास गुरवाणी का पाठ करते रहते थे। नादिरशाह को एक बार बताया गया कि ये लोग प्रत्येक समय अपना मुँह हिलाते रहते हैं। न जाने ये कौन सा कलाम पढ़ते रहते हैं। इस प्रकार जब अमहदशाह अब्दाली को बताया गया तो उसने कहा कि ये जिन लोगों के बारे में तुमने हमें बताया है (बह बहुत लम्बी चौड़ी वार्ता है) ये लोग किसी दिन इस देश के शासक बनेंगे। कारण यह है कि इन लोगों कि तप साधना इतनी बढ़ चुकी है कि वह बड़े-बड़े पीर फकीरों से भी अधिक हो चुकी है। पीर जो होता है, वह आराम से अपने आसन पर बैठा रहता है लेकिन ये लोग प्रत्येक समय अपने शीश को तली पर रखकर अपने धर्म की रक्षा करते घूमते रहते हैं। इस प्रकार बहुत कठिन साधना के बाद राजभाग की प्राप्ति हुई थी लेकिन राजसत्ता के सुख को पाकर लोग अपने धर्म से विमुख होने लगे थे। इस प्रकार बाबा साहिब सिंह जी ने अपनी मेहनत के बदौलत तत्कालीन सत्ता वर्ग को अमीरों वजीरों को, राजाओं को, गुरसिक्खी के साथ सम्बद्ध किया और बेशुमार अमृतपान करवाया, बेशुमार प्रचार किया। उस समय आप अकेले ऐसे महापुरुष थे जो कि दिन रात प्रचार में जुटे थे। शेष जो महापुरुष थे वे सब अपने आश्रमों में बैठे थे।

साधु संगत जी! दो प्रकार के महापुरुष हुआ करते हैं। एक तो वे होते हैं कि वे जहाँ पर भी जाते हैं, उनके वचनों को हजारों लोग श्रवण करके अपना मार्ग दर्शन करते हैं। एक वे होते हैं जो कि निःशंक रूप से बहुत उच्चावस्था के स्वामी होते हैं लेकिन वे चुप करके बैठे रहते हैं। अपने आप ही जितने लोग कुएं के पास आ जाएंगे वे पानी पीकर अपनी प्यास बुझा लेंगे लेकिन जो दरियाव होता है, उसने तो बहते ही चले जाना है। उसमें से जानवरों ने भी पानी पीना है, जन साधारण ने भी पीना है, इस प्रकार असंख्य लोगों का भला उनके द्वारा होते जाना है। अवस्था का कोई अन्तर नहीं हुआ करता है। अवस्था एक समान ही हुआ करती है। जो व्यक्ति समाधिस्थ अवस्था में रहता है, उसकी भी अवस्था बहुत ऊँची ही होती है। लेकिन कुछ महापुरुषों की ड्यूटी होती है कि-

*आपि जपहु अवरह नामु जपावहु ॥*

स्वयं भी नाम का जप करना तथा लोगों को जगाकर उनसे भी नाम का जप करवाना इस प्रकार बाबा जी ने सिक्खी का बहुत अधिक प्रचार किया। सिक्खों की संख्या में इतनी अधिक वृद्धि हुई कि तत्कालीन एक अंग्रेज लेखक ने लिखा है, जब हमने महाराज रणजीत सिंह से राज्य वापिस लिया तो उस समय पंजाब के अन्दर सिक्खों की संख्या एक करोड़ दस लाख थी लेकिन जब 1861 में पहली जनगणना करवाई गई तो उस समय सिक्खों की संख्या केवल ग्याहर हजार के लगभग रह गई थी। अतः बाबा जी के समय सिक्खों की संख्या बहुत अधिक थी। आपने स्थान-स्थान पर घूमकर प्रचार किया। आपके बाद 'भाग सिंह कुरी वाले' अधिकतर गुप्त ही रहे। आप किसी को जल्दी अपने पास ही नहीं आने देते थे। किसी से ज्यादा मिलना भी पसन्द नहीं करते थे लेकिन आप पन्थ को एक इतना बड़ा महापरुष दे गए कि जिसकी मिसालें आज भी फख्र से दी जाती हैं। आपके द्वारा ज्ञान प्राप्त महापुरुषों का नाम था - बाबा बीर सिंह जी नौरंगाबाद वाले। आपके पास प्रत्येक समय तेरह हजार सिक्ख रहा करते थे और लगभग इतने ही प्रतिदिन यात्रिगण आए हुए रहते थे यानि कि 25-26 हजार का इकट्ठ प्रत्येक समय बना ही रहता था। दाल सब्जी बनाने वाले बर्तन इतने बड़े-बड़े थे कि उनके अन्दर चार-चार लोग घुसकर उनकी सफाई किया करते थे। उनके बाद अंग्रेजों का राज्य आ गया। उस समय सिक्खों की ऐसी बुद्धि भ्रष्ट हो गई कि उन्होंने स्वयं ही अपने महात्मा को मारना शुरू कर दिया। तत्कालीन स्थिति को चित्रित करते हुए वारिसशाह ने लिखा है -

*असीं बीर सिंघ जिहे मार छड्डे*
*नहीं छड्णा साध ते संत मीआं*

वे स्वयं ही अपने महात्मा को मारकर कहते थे कि हमने तो बीर सिंह जैसे महापुरुषों को मार डाला है, हमने अब पंजाब के अन्दर किसी भी सन्त को रहने नहीं देना है। बाबा जी को मारने के लिए 75 हजार योद्धागण तोपखाना व घुड़सवारों के साथ आए लेकिन बाबा जी ने क्या किया? आपने अपने सेवादारों को कहा कि ऐ प्रेमीजनो! सैंकड़ों टीन देसी घी लाकर प्रसाद बनाओ, संगत आ रही है, उनके लिए खाने पीने का प्रबन्ध करो। सेवादार कहने लगे, महाराज जी! संगत नहीं आ रही है वे तो तोपखाना लेकर हम सबको मारने के लिए आ रहे हैं? बाबा जी कहने लगे, प्रेमीजनो! यहाँ पर मारने या बचाने वाला केवल परमेश्वर ही है, उसके सिवाए कोई भी व्यक्ति मारने या बचाने वाला नहीं है। हम लोग गुरू नानक के लंगर के पहरेदार हैं, इस लंगर से सारी सृष्टि ने फायदा उठाना है। सारी सृष्टि की भूख को इस लंगर ने दूर करना है। इसलिए तुम लोग सैंकड़ों टीन घी का प्रसाद बनाओ। इधर तोपों के फायर खोल दिए हैं और उधर प्रसाद बन रहा है तथा हरि कीर्तन हो रहा है। सेवादार कहने लगे, बाबा जी आप हुक्म दो छब्बीस हजार सिक्ख लड़ने मरने के लिए तैयार होकर बैठे हैं। बाबा जी कहने लगे, ऐ भद्रपुरुषो! ऐसा काम नहीं करना है सारे पंजाब में रोना पीटना पड़ जाएगा। हम लोग तो साधू लोग हैं, हमें कौन सा किसी ने रोना है, हम लोग ही शहीद हो जाते हैं। लेकिन एक बात का ख्याल रखना कि जो लोग बच जाएंगे वे सब उनका स्वागत करना हाथ जोड़कर कहना कि ऐ प्रेमीजनो! पंक्तियां लगा लो भोजन तैयार है पहले आप लोग भोजन ग्रहण करो। इस प्रकार की फौज को ही कहते हैं, गुरू मारी फौज। जिस समय गुरू मारी फौज आई तो उस समय उन्होंने पहली बात यही कही कि आप लोग बैठो और भोजन ग्रहण करो। वे लोग भूखे तो थे लेकिन जोर जबर बहुत कर रहे थे। सन्तजनों का निरादर कर रहे हैं। धक्के मार रहे हैं, मुक्के व तलवारें मार रहे हैं। वे कहने लगे, भद्रपुरुषो! जो करना है कर लो, हमें तो हाथ उठाने का हुक्म ही नहीं है। उस समय जो जख्मी हुए लोग थे, वे कहने लगे आप लोग पंक्तियां लगा लो हम लोग लंगर वितरण की सेवा करते हैं। जख्मी सेवादार लंगर वितरण कर रहे हैं तथा फौजी लोग लंगर ग्रहण कर रहे हैं। जब लंगर ग्रहण कर रहे हैं तो उस समय उन्हें अपने अन्दर से समझ आई कि हमने तो बहुत बुरा कार्य किया है, एक साधू को मार डाला जो कि सारी सृष्टि को संभाल कर रख रहा था।

गुरू नानक देव जी तो साधू बनाने के लिए आए थे, क्योंकि संसार के अन्दर सन्तजनों की कमी हो गई थी। इधर ये गुरू मारी फौजें ऐसी आई कि इन्होंने अपने सन्तजनों को ही मारना शुरू कर दिया। अपने बाद बाबा जी ने अपनी गद्दी महाराज सिंह जी को संभाल दी। आपके साथी बाबा खुदा सिंह जी बहुत उच्च कोटि के महात्मा हुए, आपने चार साल तक सिक्खों को निराश नहीं होने दिया। सन् 1848 में युद्ध हुआ, सन् 1852 तक आप घर-घर, गांव-गांव घूमे, आप रात को कहीं ठहरते नहीं थे, आप यही बताते रहते थे कि ऐ सिक्खो! घबराओ नहीं, बहादुर बनो, गुरू का पल्लू नहीं छोड़ना है, यह ठीक है कि विदेशी शासक हैं और वह जुल्म पर उतारू है लेकिन तुम लोग गुरू पर भरोसा रखते हुए अपनी सिक्खी को कायम रखो। आप अपने इस सन्देश को फैलाते भी थे तथा साथ ही ब्रह्मज्ञान की बख्शीश भी करते थे, नाम जपने की युक्तियां भी बताते थे, जो कि उसी तरह चलती हुई बाबा राम सिंह जी के पास से होती हुई बाबा करम सिंह होती मरदान तक पहुँचती गईं। आपने (बाबा करम सिंह जी) 101 ब्रह्मज्ञानी महापुरुष पैदा किए। आप स्वयं तो होती मरदान ही रहे लेकिन आपसे आशीर्वाद प्राप्त महापुरुष स्थान-स्थान पर घूम कर गुरसिक्खी का प्रचार करते रहे। अधिकतर सम्प्रदाय जो निर्गुण उपासक हैं, वे बाबा करम सिंह जी से ही आशीर्वाद प्राप्त हैं। दो तरह की धाराएं हैं। एक तो सगुण उपासना वाले हैं, वे तो श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की उसी प्रकार से पूजा करते हैं जैसे कि मन्दिरों में मूर्ति पूजा वाले करते हैं, लेकिन जो निर्गुण उपासक हैं, वे श्री गुरू ग्रन्थ साहिब को शब्द मानते हैं तथा निराकार परमेश्वर को कण कण में व्याप्त मानते हैं। यह एम. ए. की या पीएच. डी. की कक्षा उत्तीर्ण करने जैसी बात है। दोनों प्रकार के महात्मा होते हैं लेकिन यह जो दया सिंह वाली श्रृंखला है यह निर्गुण उपासक हैं. शुरुआत में तो सगुण उपासना है, लेकिन बाद में भक्ति के समय दो हैं लेकिन बाद में स्वयं को समाप्त करके एक के अन्दर ही समा जाते हैं। अतः बाबा करम सिंह जी के द्वारा तीन बड़े-बड़े महापुरुष हुए। एक थी बाबा लाल सिंह जी जिन्होंने बाबा करम सिंह जी की जगह अपने शरीर का परित्याग किया। दूसरे थे बाबा आया सिंह जी और तीसरे थे बाबा अतर सिंह जी रेरू साहिब वाले जिन्हें मालवे के अन्दर प्रचार करने की ड्यूटी मिली थी तथा आपके बाद बहुत अधिक प्रताप वाले महापुरुष हुए सन्त बाबा ईशर सिंह जी राड़ा साहिब वाले।

आपने 54 वर्षों तक देश व विदेशों में सत्य की आवाज को बुलन्द किया जो कि अब तक भी बुलन्द है। विज्ञान का युग है, उन्होंने उस आवाज को ऑडियो वीडियो कैसेट्स व सीडीज के माध्यम से रिकार्ड कर लिया है। फलस्वरूप घर-घर में उनके माध्यम से सत्संग जारी है। अतः इस प्रकार के महापुरुष आज के दिन संसार से प्रस्थान कर

जाने की तैयारी कर रहे हैं। उनका आखिरी दीवान वुल्वर हैंप्टन में लगा था। निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार वहाँ पर एक दीवान और लगना था लेकिन महाराज जी ने उस दीवान के बाद अचानक घोषणा कर दी कि आज का दीवान ही, यहाँ का आखिरी दीवान है। सारे लोग हैरान हो गये, वहाँ का स्टेज सचिव भी हैरान हो गया कि दीवान तो कल को आखिरी है, आज तो है नहीं। लेकिन इस प्रकार की माया पड़ी कि कोई भी व्यक्ति दीवान में खड़ा होकर यह नहीं कह सका कि महाराज! आपका कल का दीवान भी है, आज ही समाप्त नहीं हुआ है।

अब जब मैं विगत दिनों में वुल्वर हैंम्पटन में गया था, तो वहाँ बहुत से लोगों से मिला। मैंने उनसे पूछा, आप लोगों में से किसी ने भी वहाँ यह नहीं कहा कि कल का दीवान आखिरी होगा? वे बोले, नहीं, न जाने हमें उस समय क्या हो गया था? संगत के लोग भी बहुत सारे मिले क्योंकि मैं सबके घर जाता था और यही सवाल दोहराता था लेकिन उनका वही उत्तर होता था। वे कहते थे कि वहाँ पर तो हमें कुछ पता ही नहीं चला लेकिन घर आकर हम लोगों ने सोचा कि कल का दीवान तो शेष है। न किसी सेक्रेटरी को पता चला और न ही किसी प्रधान को पता चला। दूसरे दिन आप अपने पांच तत्वों के शरीर में बैठकर ही सब कुछ बताते व पूछते रहे कि यदि यहाँ पर शरीर का परित्याग किया जाए तो क्या पोस्टमार्टम करवाना जरूरी होता है? आदि। आपने एक भ्रम की स्थिति उत्पन्न कर दी।

अतः उनका जीवन ही उनकी सही याद होती है, उनके जीवन पर निगाह मारना ही उनकी स्मृति को मनाना हुआ करता है। जो सन्त समागम हुआ करते हैं, यह दो तीन दिनों के होते हैं। इनमें खुले तौर पर साधू महात्मा आते हैं उनका जो मन चाहता है, वे सुनाते हैं, उन्हें कोई दोष नहीं लगता है। एक सन्त समागम इस प्रकार के होते हैं कि वे किसी की स्मृति में होते हैं, यानि कि उसका उद्देश्य होता है कि हमने, इन महापुरुषों की याद को ताजा करना है और इनके बारे में अपनी बातों को जन साधारण के साथ शेयर करना है। पिछले समागम में हमने सारे सम्प्रदायों के महापुरुषों, बाबा अजीत सिंह जी, बाबा ज्वाला सिंह जी, महाराज अतर सिंह जी रेरू साहिब वाले, मस्तुआणे वाले तथा और भी बहुत सारे महापुरुषों के बारे खुला समागम रखा था कि आप किसी के बारे में भी सुना दो। परन्तु हुआ क्या? हो सकता है सुनाने वालों को शायद पता ही नहीं चला कि क्या सुनाना है वे इधर उधर की बातें ही करते रहे। खुला समागम एक अलग प्रकार का होता है। लेकिन जिस समागम के विषय में यह बताया जाए कि आपने इस विषय पर ही सुनाना है, वह एक अलग प्रकार का होता है। यदि हम किसी के घर, उसकी बरसी पर जाते हैं तो हमें वहाँ पर उसके बारे में ही बात करनी पड़ती है, उसके गुणों के बारे में ही बताना पड़ता है, उसकी बात से ही प्रेरणा लेनी पड़ती है कि यह इस प्रकार का था, इसके जीवन के कौन-कौन से गुण थे आदि।

इस प्रकार इधर उधर की बातें करना महापुरुषों की आदत नहीं होती है। अतः जब हम महापुरुषों के जीवन के सम्बन्ध में विचार करते हैं तो उस समय श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के प्रकाश में उनकी उपलब्धियों का वर्णन करना पड़ता है। यानि कि गुरवाणी के अनुसार ही हमें विचार करना पड़ता है -

*धारना - हरि के सेवक जो हरि भाए,*
*तिन की कथा निरारी रे।*

*हरि के सेवक जो हरि भाए तिन की कथा निरारी रे॥*
*आवहि न जाहि न कबहू मरते पारब्रहम संगारी रे॥*
*अंग - 855*

वे न तो आते हैं, और न ही कहीं जाते हैं। न जन्म लेते हैं और न ही कभी मरते हैं।

महाराज जी को मैंने एक बार पूछा, महाराज जी। आपको सबसे शुरू-शुरू में कहाँ से समझ पैदा हुई, वे कहने लगे, मैं पटियाला में छठी या सातवीं कक्षा में पढ़ रहा था। साधु संगत जी! आपकी शिक्षा बहुत ही उच्चकोटि के स्कूल में प्रारम्भ हुई थी, जहाँ पर कि अमीरों के बच्चे पढ़ते थे क्योंकि आप बहुत ही अमीर घराने से सम्बन्ध रखते थे। आपके फूफा जी के लड़के स. दलीप सिंह जी महाराज पटियाले वालों के लस्सीखाने के इंचार्ज थे। इसलिए स्वभाविक रूप से राजाओं व बड़े अधिकारियों के साथ बचपन से ही आपका मेल मिलाप था। फलस्वरूप जहाँ पर बड़े-बड़े जजों के, बड़े-बड़े जरनैलों के बच्चे पढ़ते थे, वहीं पर आपकी शिक्षा की शुरुआत हुई। एक बार टी. एल विस्वानी जी वहां पर प्रोफेसर थे। आप सिन्धु के रहने वाले तथा उच्च कोटि के महात्मा भी थे। उन्होंने कक्षा में कहा कि सिक्ख के लिए जपुजी साहिब को याद करना बहुत ही आवश्यक है। महाराज जी कहने लगे, हमने यह बात सुनी और दो तीन दिन में ही जपुजी साहिब याद कर लिया। उस समय हमने जपुजी साहिब ही नहीं बल्कि सुखमनी साहिब भी याद कर लिया। सातवीं कक्षा के दौरान यानि कि बारह वर्षों की आयु में हमने डेढ़ बजे ब्रह्ममुहुर्त में उठना शुरू कर दिया था। आपने बताया कि वे घर से उठकर सुधाकर सरोवर, जो कि मोतीबाग के अन्दर छोटा सा सरोवर है और जहाँ पर आजकल एक गुरुद्वारा भी बना हुआ है, के पास जाकर नाम का जप करने लग पड़ते थे। इसके आगे महाराज जी

बताने लगे कि फिर हमने सुना कि यदि पाँच घंटों की समाधि लग जाए तो वह साधू बन जाता है। अब आप ही देख लो कि बारह तेरह वर्ष की आयु में ही किस प्रकार के ख्याल थे? फिर कहने लगे कि हम वहाँ पर बैठकर पाँच सुखमनी साहिब के पाठ किया करते थे। मैंने कहा, महाराज जी! कितने समय में पाठ हो जाया करते थे? आप कहने लगे, हम सुरति के माध्यम से पाठ किया करते थे, सुरति से पाठ करने की गति चार गुणा अधिक होती है। जुबान इतनी तीव्र गति से नहीं चल सकती है, जितनी कि सुरति चलती है। आप कहने लगे कि पन्द्रह मिनट में एक पाठ हो जाता था और पांच पाठ करने में हमें सवा घंटे का समय लगता था। उसके बाद हम गुरुमन्त्र का जप करते थे, निःशंक रूप से हमने अभी गुरुमन्त्र को विधिवत् रूप से नहीं प्राप्त किया था, लेकिन हम उसका अधिकाधिक जप किया करते थे। उसके बाद हम अपनी सुरति को ऊपर चढ़ा लिया करते थे। जिसके द्वारा हमें ऐसा प्रतीत होता था कि मानो हम प्रकाश के झूलों के ऊपर बैठे हों यानि कि प्रकाश के झूले झूला करते थे। हमें चारों तरफ, प्रकाश ही प्रकाश दिखाई पड़ता था -

*नामु जपत कोटि सूर उजारा बिनसै भरमु अंधेरा॥*

*अंग - 700*

नाम जपने वाले के हृदय में करोड़ों सूरजों का प्रकाश हो जाता है। इसके बाद यूँ प्रतीत होने लगता था कि मानो रोशनी का फूल बना हुआ है और हम भी रोशनी के हैं और उस रोशनी के फूल पर चौंकड़ी मार कर बैठे हैं। पांच घंटों तक हमें कुछ भी पता नहीं चलता था। उसके बाद हम वापिस घर आ जाते थे। जब इस प्रकार की दशा, घर वालों ने देखी तो वे चिन्तित हुए कि यह तो ब्रह्ममुहुर्त में ही उठकर चला जाता है तो यह फिर पढ़ेगा कब?

इसके बाद सरदार दिलीप सिंह ने एक दिन हुक्म कर दिया कि कोठी को चारों तरफ से ताले लगा दो ताकि ये बाहर न जा सके। लेकिन महाराज जी अपने नित्य के हिसाब से उठे तथा स्नानादि किया और उसके बाद सीढ़ियों में ही बैठ गए। सीढ़ियां बड़ी-बड़ी थीं, उन्हीं पर बैठ गए। इधर सरदार दिलीप सिंह जी रात में चक्कर लगाने आया करते थे। जब सभी सो जाते थे तो रात को डेढ़ या दो बजे ये देखभाल करने के लिए आया करते थे। इन्हें रात्रि के आरम्भिक पहरों में नींद नहीं आती थी, बल्कि अन्तिम पहर में ही आया करती थी। उस समय जब आप आए, और आकर ताला खोला और जब सीढ़ियां चढ़ने लगे तो इनके पैर को ठोकर लगी। सरदार जी बोले, कौन है? इसने कहा, जी मैं हूँ।

वे बोले, तुम यहाँ पर बैठे हो?

इसने कहा, जी! मैं रात्रि को एक बजे के बाद सो नहीं सकता हूँ।

वे भी बहुत बन्दगी करने वाले थे, उस समय उन्होंने कहा कि मैंने सोचा था कि मैं तुम्हें बाहर न जाने दूँ, लेकिन तुम तो दरगाह से आए ही नाम का जप करने के लिए हो। न जाने तुमने कितनी दुनिया का उद्धार करना है। उसी समय आपने हुक्म कर दिया कि इन्हें कोई भी रोकने की कोशिश न करे।

आप दसवीं कक्षा के विद्यार्थी थे। उस समय तोपखाने के अन्दर बहुत गुरसिक्ख हुआ करते थे और वे सभी लोग ब्रह्ममुहुर्त में उठकर स्नान किया करते थे तथा छतों पर बैठकर चौंकड़ी मारकर बैठ जाते, अपने आपको सफेद चद्दरों से ढक लेते।

महाराज जी बताने लगे कि जब हम यहाँ पर गए तो हमने देखा कि ये लोग तो बहुत भजन करते हैं। फिर हमें वहाँ पर प्रतिदिन जाने का स्वभाव ही बन गया। वहाँ पर रोज कीर्तन हुआ करता था। वे सारे श्रद्धालुजन रेरू साहिब आया करते थे। इसी क्रम में हम भी समय निकालकर छुट्टियों के दिनों में बाबा हीरा सिंह जी को साथ लेकर, जो कि उस समय पटियाला की फौज में थे, रेरू साहिब पहुँच गए। वहाँ जाकर महापुरुषों को जब नमस्कार की तो महापुरुषों ने हमारे नेत्रों व मस्तिष्क को देखा उसके बाद आप बोले, आ गए तुम? हम तो तुम्हें बहुत देर से ढूँढ़ते हुए घूम रहे थे। इस रहस्यात्मक बात को शायद ही कोई समझ सका। 'आ गए' का तात्पर्य होता है कि जहाँ पर तुमने आना था, आ गए, अब जाना नहीं है। हम तो तुम्हें बहुत देर से ढूँढ़ रहे थे। यहएक रहस्यात्मक बात थी। चार दिन के बाद छुट्टियां समाप्त हो गईं और हीरा सिंह जी जाने के लिए तैयार हो गए। तो उस समय हमने कहा कि हमने नहीं जाना है बल्कि हम तो यहीं पर रहेंगे लेकिन सन्त महाराज जी कहने लगे कि माता पिता चिन्ता करेंगे, इसलिए आप चले जाओ। उस समय हम घर आ गए। लेकिन फिर धीरे-धीरे वहीं पर रह गए। महापुरुषों ने तीन चार साल बाद शरीर का परित्याग कर दिया। लेकिन थोड़े से समय में ही आपने इतनी कमाई कर ली कि आपको ब्रह्मज्ञान की अवस्था की प्राप्ति हो गई। पिछला सारा तप व सारे संस्कार फलीभूत हो गए। आप दिन रात भजन करते थे, इतना भजन कर पाना बहुत मुश्किल है।

एक बार मैंने महाराज जी को विनती की कि महाराज जी! आपका जीवन लिखने के लिए मुझे पत्र आया है। आप कहने लगे, सन्तजनों के जीवन के बारे में किसी को क्या पता होता है? मैंने कहा, महाराज जी! पता तो होता ही है

कि आप अमुक-अमुक स्थान पर गए, अमुक-अमुक कार्य किए आदि। आप बोले, यह भी कोई सन्तजनों का जीवन होता है? सन्तजनों का जीवन तो होता है आन्तरिक। अर्थात किस प्रकार उन्होंने सुरति को वश में किया? किस प्रकार से रिद्धियों-सिद्धियों के मण्डल में से निकले? किस प्रकार से ज्ञान का प्रकाश हुआ? कहने लगे, यदि सन्त स्वयं लिखें फिर तो उन्हें पता होता, अन्य किसी को इसके बारे में क्या पता होगा? इसके बाद आप बताने लगे कि हमने पूरे नौ वर्षों तक पीठ नहीं लगाई, किसी भी समय हम टांगे फैलाकर सोए नहीं। यदि दो, चार, दस मिनट नींद आ भी गई तो आगे की ओर तो झुक गए लेकिन पीठ नहीं लगाई। सेवादार अपने हिसाब से हमारा बिस्तरा बदल देते थे, चद्दरें बदल देते थे, लेकिन हम तो बिस्तर पर गए ही नहीं। हम तो निरन्तर चटाई पर ही बैठे रहते थे। नौ वर्षों तक चटाई पर ही रहे। अतः सन्तजनों की कथाएं निराली ही होती हैं। जब आप ढक्की के अन्दर तप करने के लिए ब्रह्ममुहुर्त में बैठा करते थे, तो उस समय एक कोबरा नाग आ जाया करता था। वह प्रतिदिन आने लग पड़ा। सेवादार कहने लगे, महाराज जी! यह किसी को हानि पहुँचा सकता है। जब भी आप स्नान करने के बाद बैठते हैं तो उस समय यह पता नहीं कहाँ से आ जाता है और अपने फन को फैलाकर बैठ जाता है। महाराज जी अन्तर्ध्यान होने के बाद कहने लगे, प्रेमीजनो! यह दुखी आत्मा है। आप ऐसे करना कि यह जो जल है (आप बन्दगी करते समय अपने पास एक पात्र में जल रखा करते थे) इसका छींटा उसके ऊपर दूर से ही मार देना। अब जब वह नाग आया तो सेवादारों ने ऐसा ही किया। फलस्वरूप वह नाग परलोक सिधार गया। सेवादारों ने पूछा, महाराज जी! यह कौन था? सन्त महाराज जी कहने लगे, प्रेमीजनो! यह अहंकारी पुरुष था। जब छठे महाराज जी यहाँ पर आए तो यह कहने लगा कि मैं कौन सा इनसे कम हूँ? मेरे पास भी इतनी दौलत है, मैं इतने गांवों का चौधरी हूँ, अर्थात वह गुरू जी की बराबरी करने लग पड़ा। इस प्रकार इसकी सारी वृत्तियां माया में रहने के कारण जब इसका अन्तिम समय आया तो -

*अंति कालि जो लछमी सिमरै*
*ऐसी चिंता महि जे मरै॥*
*सरप जोनि वलि वलि अउतरै॥* अंग - 526

तो यह सांप बनकर यहीं पर रहने लग पड़ा। सांपों की आयु बहुत लम्बी होती है। यह उसी दिन से दुखी होकर तड़पता हुआ घूम रहा था और यह याचना कर रहा था कि मेरा उद्धार करो। इस प्रकार से आप रहते रहे। श्री गुरू महाराज जी ने (श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी ने) एक शबद के अन्दर सन्तजनों के लक्षणों को कथन किया है -

*संत रहत सुनहु मेरे भाई॥* अंग - 392

इस शबद के अन्दर जो भी आप कथन करते हैं, उसी प्रकार का आपका जीवन था। इस प्रकार से आप लोग पढ़ लो -

*धारना - दुखी जीवां दे रोग दूर करदे,*
*करोड़ां पाप नाश करके।*

सन्तजनों के लक्षणों में बात यह भी आती है -

*आठ पहर निकटि करि जानै॥* अंग - 392

वे क्षणमात्र के लिए भी यह नहीं कहते हैं कि वाहिगुरू हमसे दूर है, वे अपने अन्दर ही वाहिगुरू जी से बात करना शुरू कर देते हैं -

*प्रभ का कीआ मीठा मानै॥* अंग - 392

वह (प्रभु जी) जो कुछ भी कर देता है, वे उसी में सन्तुष्ट रहते हैं। दुःख आ जाए, सुख आ जाए, वे किसी को कोई उलाहना नहीं देते हैं।

*एकु नामु संतन आधारु॥* अंग - 392

वे नाम के आधार पर ही जीवित रहते हैं, इसके अतिरिक्त उनका कोई आधार नहीं होता है। न राजनैतिक शक्ति, न धन दौलत की शक्ति, न शिष्यों की शक्ति यानि कि इस प्रकार का कोई भी उनका आधार नहीं होता है। उनका आधार तो केवल नाम का आधार ही होता है।

*होइ रहे सभ की पग छारु॥* अंग - 392

फिर वे अहंकारी भी नहीं होते हैं, निःशंक रूप से उन्हें स्वाभिमन तो होता है, वह इसलिए होता है क्योंकि-

*जा का कहिआ दरगह चलै॥*
*सो किस कउ नदरि लै आवै तलै॥* अंग - 186

वे किसी बड़े से बड़े बादशाह की भी परवाह नहीं किया करते हैं, उन्हें किसी की आवश्यकता ही नहीं होती है।

*जो जनु निरदावै रहै सो गनै इंद्र सो रंक॥*
अंग - 1373

लेकिन वे अन्दर से हमेशा इस भाव में रहते हैं कि -

*कबीर सभ ते हम बुरे हम तजि भलो सभु कोइ॥*
*जिनि ऐसा करि बूझिआ मीतु हमारा सोइ॥*
अंग - 1364

सन्त, अभिमानी नहीं हुआ करता है, हाँ वे स्वाभिमानी तो होते हैं, वे न तो किसी के सामने हाथ फैलाते हैं और न ही किसी से स्वार्थ की अभिलाषा रखते हैं कि इसके माध्यम से हमारा यह काम बन जाएगा। यह बहुत धनी व्यक्ति है, हम इसका सम्मान करें तो हमारा यहाँ पर काम चल जाएगा, अधिक मात्रा में दान मिलने लग पड़ेगा। इस प्रकार की बातें

कच्चे सन्त किया करते हैं। जिसका विश्वास परमेश्वर पर है वह तो परमेश्वर के बिना किसी से कोई कामना नहीं रखता है।

*संत रहत सुनहु मेरे भाई॥*
*उआ की महिमा कथनु न जाई॥* *अंग - 392*

ऐ प्रेमीजनो! सन्तजनो की नियमावली सुनो! उनकी महिमा को कथन कर पाना बहुत कठिन है। उनके पास जो वातावरण होता है वह नाम का वातावरण ही होता है। वहाँ कोई झूठ या मिथ्या बातों का वातावरण नहीं होता है, कोई आर्थिक या व्यापारिक बातें नहीं होती हैं, कोई राजनैतिक बातें नहीं चलती हैं, वहाँ पर तो केवल अध्यात्मिक बातें ही होती हैं अर्थात वहाँ का वातावरण तो केवल रूहानियत ही होता है, वहाँ केवल नाम की ही बात होती है।

*वरतणि जा कै केवल नाम॥*
*अनद रूप कीरतनु बिस्राम॥* *अंग - 392*

वे तो सच्चिदानन्द के साथ प्रत्येक समय जुड़े रहते हैं, कीर्तन व हरियश में ही उनका बिस्राम हुआ करता है।

*मित्र सत्रु जा कै एक समानै॥* *अंग - 392*

चाहे कोई मित्र आ जाए अथवा कोई ईटें मारने वाला आ जाए, वे उन्हें एक समान ही समझते हैं।

बाबा बीर सिंह जी को जब शहीद किया गया और उसके बाद उनके मुख्य सेवादार जोध सिंह ने जब देखा तो उनके शरीर पर 60 गोलियों के निशान थे। चारों तरफ से शरीर में से खून बह रहा था, आप चारपाई पर, बिस्तरे पर चौकड़ा मारकर बैठे हैं। उसके बाद भी खून आगे बह रहा था। वह उन्हें देखकर रोने लग पड़ा तथा कहने लगा महाराज! मुझसे देखा नहीं जा रहा है। आप कहने लगे, ऐ प्रेमीपुरुष! तुम सारी जिन्दगी हमारे साथ रहे फिर भी क्या तुम हमें समझ नहीं सके कि हम कौन हैं? तुम अभी तक हमें शरीर ही समझते रहे? आप उसके ऊपर नाराज भाव प्रदर्शित करने लग पड़े। आप कहने लगे, क्या हमें कोई गोला लग सकता है? हमें न तो आग जला सकती है, न हवा उड़ा सकती है, न पानी डुबो सकता है, न मुझे कोई शस्त्र काट सकता है। यह तो शरीर का धर्म ही है -

*जो उपजिओ सो बिनसि है*
*परो आजु कै कालि॥* *अंग - 1429*

चाहे आज चला गया, चाहे कल चला गया। इसका तो धर्म ही है - पैदा होना, बढ़ना और फिर नष्ट होना। यह तो अपनी मर्यादानुसार नष्ट हो रहा है। मैं तो इसे नष्ट नहीं कर रहा हूँ। मैं तो एक दृष्टा बनकर इसे देख रहा हूँ, जैसे कि तुम देख रहे हो।

जिस समय बन्दा बहादुर को दिल्ली के अन्दर बन्दी बनाया गया तो उसे यह सजा मिली कि इसका मांस आग के सदृश्य जम्बूर को लाल करके, खींच डालो। साधु संगत जी! जुल्म तो एक से एक किए गए, पराकाष्ठा तक के जुल्मों को सिक्खों ने झेला है। सबसे पहले इनकी आँखें निकाली गईं, फिर इनकी दाईं भुजा के मांस को नोच डाला गया, अन्दर से हड्डी ही शेष रह गई। सारा मांस खींच लिया। दूसरे दिन इसी प्रकार से दूसरी बाँह का मांस खींचा गया। तीसरे दिन एक टांग का मांस खींचा गया। चौथे दिन दूसरी टांग का मांस खींच डाला गया। इस प्रकार चार दिन हो गए। जिन नाड़ियों में से खून बह रहा है, उन्हें बाँध दिया गया, जो खून बह रहा था, उसे आप अपने मुँह पर लेप लेते थे। बादशाह का वजीर कुछ समझ वाला था। वह कहने लगा कि मुझे एक बात समझ में नहीं आई कि तुम अपने खून को बार-बार अपने मुँह पर क्यों लगा लेते हो? वे बोले देखो! खून निकलने के बाद स्वाभाविक रूप से चेहरा आभाहीन हो जाता है और मैंने तो संसार से जाना ही है लेकिन मैं यहाँ से आभाहीन होकर नहीं जाना चाहता हूँ। दूसरा प्रश्न उसने यह किया कि तुम्हारे लड़के को तुम्हारी गोद में डालकर उसकी आंतों को बाहर निकालकर तुम्हारे मुँह में बलात्पूर्वक डाला गया, क्या तुम्हें कोई अफसोस नहीं हुआ?

वह कहने लगा, नहीं, हमें कोई अफसोस नहीं हुआ क्योंकि इस संसार में कोई भी मरता नहीं है, केवल शरीर का परिवर्तन मात्र ही होता है। वजीर ने अगला सवाल करते हुए कहा, तुम्हारा इतना मांस नोच डाला गया क्या तुम्हें दुख नहीं हो रहा है?

आपने कहा जैसे तुम देख रहे हो उसी प्रकार से मैं इस शरीर को देख रहा हूँ। मैं इस मकान में रह रहा था, अब मेरे मकान को गिराना शुरू कर दिया है, अब मैं इससे निकलकर बाहर आ गया हूँ, मैं भी देख रहा हूँ कि इस मकान को किस प्रकार से गिराया जा रहा है? इस प्रकार यह भी एक वृत्ति हुआ करती है।

इस प्रकार बाबा बीर सिंह जी कहने लगे, भाई जोध सिंह! क्या तुम मुझे सारी जिन्दगी शरीर ही समझते रहे? सन्त, शरीर नहीं हुआ करते हैं, बल्कि वे तो एक ज्योति होते हैं। उन्हें वह आत्म ज्ञान होता है, जहाँ पर शरीर का, सूक्ष्म शरीर का, कारण शरीर का, आभास समाप्त हो जाता है। मन, चित्त, बुद्धि व अहंभाव समाप्त हो जाता है। उन सबके ऊपर मैं रहता हूँ। मैं साक्षी हूँ, मैं इन्हें सत्ता देता हूँ, मुझे कोई काट नहीं सकता है, मुझे कोई जला नहीं सकता है।

अतः बाबा जी कहने लगे, भाई जोध सिंह जी! जब वे लोग आएंगे, जिन्होंने हमें शहादत का जाम पिलाया है, तो उनके साथ प्यार भरा व्यवहार करना, उन्हें कोई भी शाप

आदि नहीं देना।

कुछ समय पहले एक दिन बाबा खुदा सिंह जी ने भजन बन्दगी करते समय सारे भविष्य को देख लिया। आप उस समय उठकर आ गए तथा कहने लगे, बाबा जी! इस प्रकार का समय आने वाला है? बाबा जी बोले, हाँ! ऐसा ही होने वाला है। इसके साथ ही आपने कहा बाबा जी (बाबा खुदा सिंह)! आप हमें एक वचन दो। बाबा खुदा सिंह जी बोले, महाराज जी! आप हुक्म करो? आपने कहा कि देखो! आपके वचन तलवार से भी तेजधार वाले हैं, कहीं आप किसी को अभिशाप मत दे देना। यह जो कुछ हो रहा है, इसे इसी प्रकार से चलने देना क्योंकि अपना वैर तो किसी के साथ है नहीं। यह सब प्रभु की ज्योति का ही विस्तार है, और यहाँ पर कोई भी बुरा नहीं है। लेकिन बाबा खुदा सिंह जी कहने लगे, महाराज! हमसे तो यह सहन ही नहीं हो पाएगा। इतना अत्याचार सहन कर पाना मेरे लिए तो बहुत मुश्किल है। बाबा जी बोले, यदि ऐसी बात है तो फिर तुम यू. पी. में नेपाल की सीमा पर गोरखपुर चले जाओ और इस तारीख से पहले वापिस मत आना। ऐसा ही हुआ, जब सारी घटना घटित हो गई तो उसके बाद आप वापिस आए। जब आपको पता लगा कि बाबा जी को इस प्रकार से शहीद किया गया है, तो सहज स्वभाव ही आपके मुख से निकल गया कि जो यह लाहौर दरबार है, यहाँ पर चार बैलों वाला पटेला चलेगा, यह दरबार पूर्णतः नेस्तनाबूद हो जाएगा। कुदरती बात थी, ऐसा होना ही था क्योंकि जब पाप बढ़ जाते हैं, तो पतन अवश्यम्भावी होता है -

*जिस नो आपि खुआए*
*करता खुसि लए चंगिआई॥* अंग - 417

जब समाज के अन्दर अच्छाई समाप्त हो जाए पाप बढ़ जाएं, तो उस समय पत्न होना ही होता है, यह प्रकृति का अपना हिसाब किताब है -

इस प्रकार साधुओं के लिए मित्र व शत्रु एक समान ही होते हैं।

*मित्र सत्रु जा कै एक समानै॥*
*प्रभ अपुने बिनु अवरु न जानै॥*
*कोटि कोटि अघ काटनहारा॥* अंग - 392

सन्तजनों के पास करोड़ों पापों का नाश करने की सामर्थ्य होती है।

*दुख दूरि करन जीअ के दातारा॥* अंग - 392

चाहे शारीरिक दुख है, चाहे सामाजिक दुख है, चाहे कोई अध्यात्मिक दुख है, वे सारे दुखों को दूर करके, जीवों के दाते हुआ करते हैं, वे सच्चिदानन्द वाहिगुरू के साथ मिलाप करवा देते हैं।

आपके जीवनकाल में आपके पास असंख्य बीमार प्रेमीजन आए, आपने नाम की औषधि देकर सबके रोगों को दूर किया क्योंकि गुरू जी का यह कथन है कि जो वाहिगुरू को भूलता है, वह बीमार होता ही है -

*खसमु विसारि कीए रस भोग॥*
*तां तनि उठि खलोए रोग॥* अंग - 1256

जिसके अन्दर नाम का करंट प्रवाहित होने लगता है तो उसकी चरणरज भी रोगों को मिटाने की समार्थ्य रखने लगती है। उनके मुख से निकले हुए वचन भी रोगों को समूल नष्ट करने के लिए प्रतिबद्ध हो जाते हैं -

*सरब रोग का अउखदु नामु॥* अंग - 274

गुरू जी स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि यह दवाई सबके अन्दर ही रखी हुई है -

*हरि अउखधु सभ घट है भाई॥* अंग - 259

लेकिन कारण यह है कि -

*गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई॥* अंग - 259

जब तक पूरा गुरू नहीं मिलता है, तब तक उसकी विधि का पता ही नहीं चल पाता है -

*गुरि पूरै संजमु करि दीआ॥*
*नानक तउ फिरि दूख न थीआ॥* अंग - 259

जब संयम बताकर गुरू ने दवाई प्रदान कर दी तो फिर उस समय कोई भी रोग नहीं आया करता है। आज के युग में अस्पतालों की संख्या में दिन प्रतिदिन बढ़ोत्तरी होती जा रही है। यह एक अलग सिद्धान्त है कि शरीर के अन्दर औषधि को डालो। औषधि देकर उन तत्वों को मारो जिनके कारण बीमारी प्रकाश में आई है, लेकिन इस सबसे ऊपर की यह बात है कि जहाँ पर सारी दवाइयां असफल हो जाती हैं, सारा चिकित्सा शास्त्र अपने हाथ खड़े कर देता है, तो वहाँ पर फिर नाम की दवाई  काम करती है। इस दवाई के बारे में संसार को अभी तक पता ही नहीं चल सका है कि-

*सरब रोग का अउखदु नामु॥* अंग - 274

वाहिगुरू जी ने संसार को बीमारी नहीं दी थी, बल्कि इसे तो मनुष्य ने स्वयं ही पैदा किया है, शरीर के अन्दर जितनी भी ब्याधियां उत्पन्न होती हैं, उन्हें मनुष्य ने स्वयं ही उत्पन्न किया है। इसका कारण गलत आहार, गलत विचार तथा गलत पोशाक है। जिस व्यक्ति का आहार, विचार व पोशाक सही हैं, शुद्ध हैं, वे कभी बीमार नहीं हुआ करते हैं। बीमार वही होता है जिनके शरीर का सन्तुलन बिगड़ जाता है। यथा -

*खसमु विसारि कीए रस भोग॥*
*तां तनि उठि खलोए रोग॥* अंग - 1256

परमेश्वर को भूल कर जो गलत आहार व गलत विचारों में पड़ जाएगा उसका बीमार या रोगी होना स्वाभाविक ही है। जिसके अन्दर नाम की धारा प्रवाहित होने लग पड़े, वह स्वस्थ हो जाया करता है। अतः महापुरुष यही काम करते हैं, वे असाध्य रोगियों को पुनः नाम की धारा के साथ जोड़ देते हैं, ऐसे रोगी जिन्हें डाक्टर जवाब दे देते हैं कि अब तुम्हारे स्वस्थ होने की सम्भावना समाप्त हो चुकी है, वे जब गुरू या महापुरुषों की शरण में आते हैं और वे उन्हें नाम से जोड़ते हैं तो वे उसके प्रभाव से स्वस्थ हो जाते हैं। लेकिन इसके लिए शर्त यह है कि मन में दुविधा नहीं होना चाहिए, अर्थात यह भाव नहीं होना चाहिए कि नाम का जप करें या फिर दवाई लें। यदि उसके अन्दर विश्वास ही नहीं है तो फिर वांछित फल की प्राप्ति नहीं हो पाती है। जब पूर्ण विश्वास के बाद रोगी आता है तो फिर रोगी का रोग सरलता से दूर हो जाता है। अतः सन्तजनों के पास रोगों को दूर करने की औषधि होती है -

*दुख दूरि करन जीअ के दातारा॥ अंग - 392*

सारे दुखों को दूर करने के लिए उनके पास दवाई होती है। महाराज जी के पास असंख्य रोगी आए। आप उनके जीवन को पढ़ो, पता चल जाएगा। बहुत थोड़ा सा लिखा हुआ मिलता है, अधिक नहीं मिलता है। हजारों आते थे, मैं तो देखता रहता था। इस प्रकार के लोग आते थे कि जिनका इलाज हो पाना असम्भव हो गया था, लेकिन जब महाराज जी ने दवाई दी तो वे पूर्णतः स्वस्थ होकर लौटे।

एक रतन सिंह नाम का प्रेमी, जो कि ड्राइवर पेशे से सम्बन्धित था और कोलकाता निवासी था, महाराज जी के पास आ गया। ड्राइवर लोगों को आमतौर पर ही गलत चीजें खाने की आदत हुआ करती है। उन्हें यह तो पता नहीं होता है कि अब तो मैं खाता जा रहा हूँ लेकिन बाद में इसने शरीर में जाकर जहर बन जाना है। इसने मेरे शरीर के अन्दर की कोशिकाओं को नष्ट कर देना है। गलत आहार का परिणाम यह हुआ कि उसे टी. बी. की बीमारी हो गई, तीसरे स्टेज की टी. बी. हो गई। उस समय टी. बी. का इलाज नहीं हो पाया करता था। जैसे कि आजकल एड्स लाइलाज बीमारी है। उस समय रत्न सिंह को डाक्टरों ने कहा कि ऐ बन्धु! अब तुम अपने घर चले जाओ क्योंकि अब तुम्हारी जिन्दगी केवल दस दिन ही शेष रह गई है। इससे अधिक अब तुम जी नहीं पाओगे। तुम्हारे फेफड़े पूरी तरह से समाप्त हो चुके हैं। वह घर नहीं गया बल्कि सीधा महाराज जी के पास आ गया तथा कहने लगा महाराज जी! मैं यहाँ पर आपके पास मरने के लिए आया हूँ। महाराज जी बोले, ऐ प्रेमीपुरुष! गुरू घर में मरने के लिए नहीं बल्कि जिन्दगी लेने के लिए आया करते हैं। इसके साथ ही आपने उसे पाठ बता दिया तथा यह भी हुक्म कर दिया कि तुम मुँह बांध लिया करो और लंगर के बर्तनों की सेवा करते रहा करो। कई लोगों ने ऐतराज भी किया कि महाराज जी! इसे तो टी. बी. की बीमारी हुई है। लेकिन वह उसी तरह से करता रहा। जब एक साल बीत गया तो वह एक दिन अपने कन्धे पर दो शतीर रख कर ले जा रहा था (सेवा कार्यों के दौरान) यह बात मुझे छोटे महाराज जी ने बताई थी। वे कहने लगे कि एक दिन एक भद्र पुरुष मेरे पास बैठा था, उसने जब इस प्रेमीपुरुष (रत्न सिंह) को अपने कन्धे पर दो शतीरों को ले जाते हुआ देखा तो वह कहने लगा महाराज जी! यह सेवादार बहुत तगड़ा है, मेरा मन करता है कि मैं इस चार किलो देशी घी लाकर दूँ। जब वह उन शतीरों को फेंककर आ गया तो महाराज जी ने उसे अपने पास बुला लिया तथा कहा, रत्न सिंह! यह प्रेमीजन तुम्हें चार किलो देसी घी देने के लिए कह रहा है, तुम बताओ तुम्हारे साथ क्या घटना घटित हुई थी? वह बताने लगा महाराज जी! आप तो अन्तर्यामी हो, कार्तिक की पूर्णमाशी को मैं यहाँ पर आया था और अब होला-महल्ला (होलिकादहन) की पूर्णमाशी है। उस समय मुझे तीसरी स्टेज की टी. बी. थी। डाक्टरों ने घोषित कर दिया था कि अब अधिक से अधिक तुम्हारी जिन्दगी के दस दिन शेष रह गए हैं। लेकिन महाराज जी की कृपा से मैं दो शतीर (लकड़ी की भारी सिल्ली) उठाकर सेवारत हूँ। टी. बी. की बीमारी न जाने कहाँ चली गई? टी. बी के कीटाणु भी नष्ट हो गए। जो फेफड़े दवाइयों से भी ठीक नहीं हो रहे थे, साफ नहीं हो रहे थे, उन्हें नाम की दवाई ने पूर्णतः शुद्ध कर दिया है। ये कोई मनोकल्पित बातें नहीं हैं बल्कि सत्यता की कसौटी पर परखी हुई बातें हैं।

यहाँ पर भी आप लोग रोज देखते ही हो, बीमार लोग आते हैं, कोई सेवा करता है, कोई घरों में रहकर पाठ करता है और ठीक हो जाते हैं। मुश्किल की बात यह होती है कि जब हम कहते हैं कि तुम्हें जपुजी साहिब याद है? वे कहते हैं, नहीं। ऐ प्रेमीपुरुष! फिर तुम यहाँ क्या करने आए हो, जब तुम्हें जपुजी साहिब ही याद नहीं है। फिर पूछते हैं, मूलमन्त्र याद है? वे कहेंगे, नहीं जी मूलमन्त्र भी याद नहीं है। ऐ प्रेमीपुरुष! फिर तुमने बीमार तो होना ही है। जब तुमने कभी नाम का जप तो किया नहीं है, यदि किया भी है तो चित्त लगाकर नहीं किया, फिर बीमारी ने तो आना ही है। जो मन की हाजिरी से बन्दगी करता है, वह निश्चित रूप से स्वस्थ हो ही जाता है।

मुझे याद है कितने ही साल हो चुके हैं, यहाँ हजारों मरीज आते हैं, लेकिन एक दो ही मरीज ऐसे हैं जो ठीक

नहीं हुए। उन्हें मैं पहले ही कह भी देता था कि तुम ठीक नहीं हो पाओगे। वे कहते, क्यों जी? मैं उन्हें बताता कि तुम्हारे अन्दर शत प्रतिशत विश्वास नहीं है। तुम तो केवल परीक्षण के लिए आए हो। दूसरा वह ठीक नहीं होता है, जिसे मैं कहता हूँ कि तुम खाली घूम रहे हो? सेवा कार्य नहीं कर रहे हो? जो मक्कार किस्म का खाली रहने वाला व्यक्ति आ जाता है, सेवा नहीं करता है, बाबा जी को देख लिया तो टोकरी उठा ली, अन्यथा आराम से वृक्ष के नीचे बैठा रहा। इस प्रकार का व्यक्ति ठीक नहीं हो पाता है क्योंकि उसकी सुरति गुरू के साथ नहीं जुड़ पाती है। जो पूरी शक्ति के साथ सेवा करता है, वह स्वस्थ हो जाया करता है।

विदेशों से कई प्रेमी लोग आते हैं। अमेरिका में कहा गया कि इन्हें आप्रेशन के द्वारा ही ठीक किया जा सकता है लेकिन यहाँ पर आए और सेवा करके ठीक हो गए। अतः यह नाम की औषधि सन्तजनों के पास होती है। वे सम्बन्धित व्यक्ति का ध्यान नाम के साथ जोड़ देते हैं। इसीलिए गुरवाणी का कथन है -

*कोटि कोटि अघ काटनहारा॥*
*दुख दूरि करन जीअ के दतारा॥* अंग - 392

सन्तजन शारीरिक दुख भी दूर करते हैं, सामाजिक दुख भी दूर करते हैं, आर्थिक दुख भी दूर करते हैं। यहाँ तक कि यमदूतों का जो दुख हो, सबसे बड़ा दुख, उसे भी दूर कर देते हैं -

*इकु दुखु सकतवार जमदूत॥*
*इकु दुखु रोगु लगै तनि धाइ॥*
*वैद न भोले दारू लाइ॥* अंग - 1256

वे तो यमदूतों के दुख को भी दूर कर देते हैं। यह इस प्रकार का दुख है, जिसे संसार का कोई भी डाक्टर, हकीम दूर नहीं कर सकता है। यह शक्ति तो केवल सन्तनजों के पास ही है, वे ही इस दुख को दूर कर सकते हैं। इस प्रकार से सन्त महाराज जी के जीवन के अन्दर बहुत से उदाहरण मिलते हैं। आपके पास बहुत से पढ़े लिखे लोग भी आए तथा साधारण लोग भी आए।

एक बार एक राजिन्दर सिंह नाम का गठिया रोग से पीड़ित व्यक्ति आपकी शरण में आया। वह आयकर अधिकारी था। उसने मुझे अपनी सारी आप बीती खोल कर बताई। इस प्रकार दो चार ही नहीं बल्कि असंख्य आए। डाक्टर भी आए। एक, यहाँ पर, अपने यहां प्रीतम सिंह सी. एम. ओ. हुआ करते थे, उन्होंने चने खा लिए। उस समय वे अस्पताल नहीं जाना चाह रहे थे। उधर अस्पताल से टेलीफोन आ गया कि जल्दी आ जाओ, अन्यथा मरीज की जान निकल जाएगी। उस समय डाक्टर जी तैयार होकर घर से चल पड़े और आप अस्पताल जाने की बजाए महाराज जी के पास आ गए तथा कहने लगे, महाराज जी! यदि मैं अभी अस्पताल न पहुँचा तो मरीज की जान को बहुत खतरा है लेकिन मेरा पेट बहुत दर्द कर रहा है। महाराज जी बोले, डाक्टर जी! आप जाओ जाकर ड्यूटी करो। आपने उसे एक चूर्ण की पुड़िया बनाकर दे दी तथा कहा कि लो इसे पानी के साथ खा लो। उसने वह पुड़िया ले ली तथा अस्पताल चला गया तथा वहाँ जाकर सारा दिन आप्रेशन करता रहा। इधर महाराज जी का पेट दर्द करने लग पड़ा अर्थात आपने दुख ट्रांसफर कर लिया, अपने ऊपर ले लिया। कई प्रेमीजनों का ख्याल होता है कि क्या ऐसा भी सम्भव है?

बाबा श्री चन्द जी जब जहाँगीर बादशाह से मिलने के लिए गए तो आपने अपनी कम्बली को उतार कर एक तरफ रख दिया। अब वह कम्बली पड़ी-पड़ी ही फुदकने लग पड़ी। जहाँगीर कहने लगा, बाबा जी! इस कम्बली के नीचे क्या छिपाया हुआ है? यह तो बहुत फुदक रही है? बाबा जी कहने लगे, हमें बहुत बुखार चढ़ा हुआ था, उधर हमने तुमसे बातचीत करनी थी, इसलिए हमने वह बुखार इस कम्बली को चढ़ा दिया है। वह कहने लगा, बाबा जी! क्या ऐसा भी हो सकता है? वह फिर बोला कि क्या बुखार मुझे भी चढ़ सकता है? बाबा श्री चन्द जी बोले, तुम्हें बिल्कुल चढ़ सकता है। यहाँ इधर आ जाओ। उस समय बादशाह तख्त पर बैठा हुआ ही फुदकने लग पड़ा। उसे कुछ और ही होने लग पड़ा। बादशाह कहने लगा, बाबा जी! अपने बुखार को जल्दी वापिस बुलाओ, यह तो बहुत जोरदार बुखार है। बाबा जी ने बुखार को पुनः आदेश देते हुए कहा ऐ बुखार! उस कम्बली को ही चढ़ जाओ।

जब हमने उस डाक्टर को टैलीफोन किया कि डाक्टर साहिब! महाराज जी के पेट में दर्द होने लगा है। अब उसे पता था कि यह तो मैंने ही आज प्रातः जो विनती की थी उसी का परिणाम है। जब डाक्टर ने महाराज जी का चिकित्सकीय परीक्षण किया तो वह कहने लगा, महाराज शत प्रतिशत वही बीमारी है जो कि आज प्रातः मुझे थी। महाराज जी हंसने लग पड़े तथा कहने लगे, डाक्टर! तुमने तो आप्रेशन करने थे, हम तो यहाँ खाली बैठे ही थे। हमने सोचा कि चलो हमारा क्या है, यह आप्रेशन कर आए तो ठीक है, हम तो बेकार चारपाई पर बैठे थे, हमें क्या फर्क पड़ना है।

इस प्रकार से एक-दो चार या दस बीस उदाहरण नहीं हैं, बल्कि असंख्य उदाहरण हैं -

उसके बाद होता है -

*सूरबीर बचन के बली॥* अंग - 392

उनके मुख से जो वचन निकल जाता है, वह किसी

भी प्रकार से टला नहीं करता है, चाहे जो कुछ हो जाए उसका वचन पत्थर की लकीर होता है। गुरवाणी का ऐसा कथन है-

*धारना - भावें चंदरमा नाश हो जावे,*
*संतां दा बोल ना टले।*

***गिरि बसुधा जल पवन जाइगो***
***इकि साध बचन अटलाधा ॥ 1 ॥***
***अंड बिनासी जेर बिनासी उतभुज सेत बिनाधा ॥***
***चारि बिनासी खटहि बिनासी***
***इकि साध बचन निहचलाधा ॥*** *अंग - 1402*

चाहे अंडज, जेरज, सेतज व उत्भुज यानि कि सारी प्रकृत्ति ही नष्ट हो जाए लेकिन महपुरुष का कहा हुआ कभी समाप्त नहीं होता है। इस प्रकार यदि हम उनके वचनों की गणना करने लग पड़ें तो वह बहुत ही मुश्किल कार्य होगा। एक और भी दिलचस्प घटना मैं आपको बताता हूँ, अधिकांश लोगों को वह पता भी है। एक दिन की बात है जबकि मैं यू. पी. में रहा करता था और महाराज जी हापुड़ आए हुए थे। वहाँ पर किसी व्यक्ति के अन्दर एक प्रेतात्मा ने प्रवेश किया हुआ था। वह अपना नाटक कर रही ती। मैं भी वहाँ पर कुछ क्षण के लिए रुक गया। मैं वहाँ पर खड़े लोगों को पूछने लग पड़ा कि यह क्या माजरा है? उन्होंने बताया कि इस व्यक्ति के अन्दर प्रेत आया हुआ है। मैंने कहा, झूठ! क्या प्रेत भी होते हैं? गुरसिक्ख के अन्दर प्रेत कैसे आ सकता है? मुझे वे लोग कहने लगे, जी! आप बात करके देख लो।

वे लोग जब मेरे साथ बात करवाने लगे तो वह मुझसे बात ही न करना चाहे। मेरे मुँह से अचानक यह बात निकल गई कि मैं तुम्हें महापुरुषों से मिलवा सकता हूँ। वह बोला, सचमुच मिलवा दोगे? मैंने कहा, हाँ! मैं, तुम्हें महापुरुषों से मिलवा दूँगा। मैंने महाराज जी के पास जाकर विनय की। महाराज जी सारी बात सुनने के बाद कहने लगे, नहीं, हमने भूत प्रेतों के साथ बात नहीं करनी है। यदि हमने उसके साथ बात कर ली तो फिर तो यहाँ पर सारे भूत प्रेतों से पीड़ित लोग ही आने लग पड़ेंगे। हम लोगों ने कीर्तन करना है, या भूतों प्रेतों वालों को देखना है? मैंने पुनः कहा महाराज जी! वह कह रहा है कि मैं ईरान से आया था और सहारनपुर जिले की मुगल खेड़ी तहसील में रहा और दरगाह में स्थान नहीं मिला। फलस्वरूप मैं प्रेत बन गया। कुछ मेरे द्वारा गुप्त कुकर्म भी किए गए थे, जिनके फलस्वरूप मुझे नर्क मिलना है।

मैंने महाराज जी को कहा, महाराज जी! वह तो बहुत घबराता है, वह कोई पीर या बड़ा मौलवी है। अब आपकी शरण में आया है, आप कृपा करो। कहने लगे यदि इसे रख लिया तो फिर कल को सबके लिए ही दरवाजा खुल जाएगा। यहाँ पर तो सारे भूत प्रेत ही इकट्ठे हो जाएंगे। फिर भी मैंने जैसे-तैसे करके महाराज जी को मना लिया। उसके बाद मैं महापुरुषों से इजाजत लेकर अपने फार्म पर चला गया लेकिन अगले दिन सुबह ही मैं वापिस आ गया। उस समय मेरी अनुपस्थिति में महाराज जी ने उसे बुलाया लेकिन वह आया ही नहीं। जब मैंने आकर उसे कहा, ऐ भद्रपुरुष! जब तुम्हें महापुरुष बुला रहे थे, तब तुम क्यों नहीं आए? वह बोला, मैं कैसे जाऊँ? तुम्हें तो दिखाई नहीं पड़ता है लेकिन मुझे तो दिखाई पड़ता है। मैंने उससे पूछा तुम्हें कौन सी चीज हमसे अधिक पड़ दिखाई रही है? वह बोला, मुझे उनका अत्यधिक जलाल दिखाई पड़ रहा है। कोई भी बुरी आत्मा उनके पास नहीं जा सकती है। उनका जलाल बहुत अधिक है, जब तक वे मुझे उस जलाल में से पार न निकालें तब तक मैं उनके पास नहीं जा सकता हूँ।

साधु संगत जी! ये सब बातें बहुत अजीब सी लगती हैं। क्योंकि कभी किसी ने सुनी नहीं हैं। जलाल की बात मैं करता हूँ, कि ये तुम्हारे बीजी (सन्त माता रणजीत कौर जी) के पिता जी एक गली में चलते हुए जा रहे थे, वे प्रत्येक समय नाम में ही रहते थे। इनकी कोई रिश्तेदारी में भौजी गलती थी। वह अपने घर में थी और उसे प्रेत ने पकड़ा हुआ था। उसके चारों तरफ लोग खड़े थे। वह लेटी हुई ही कहने लगी, हीरा सिंह! मैं जा रही हूँ! मैं जा रही हूँ! यह कहकर वह (प्रेतात्मा) उसे छोड़ गई। उनकी (हीरा सिंह जी की) बुआ बाहर निकलकर कहने लगी, बेटा! अन्दर आ जाओ! यह जो तुम्हारी भाभी है, इसे भूतनी ने पकड़ा हुआ था, जब तुम गली में चले आ रहे थे। हमें तो पता नहीं था कि तुम आ रहे हो, लेकिन इसने (भूतनी ने) देख लिया और उसे इतन सेंक लगा कि वह तुम्हारी भाभी को छोड़कर भाग गई। अब तुम इस पर कृपा करो। बापू जी कहने लगे, कोई बात नहीं यह तो वाहिगुरू नाम की शक्ति होती है। उन्होंने कागज लिया और उसके ऊपर वाहिगुरू लिख दिया। वह वाहिगुरू कमाया हुआ था। बापू जी कहने लगे, अब जब वह आएगी तो उसके सामने यह कागज का टुकड़ा कर देना।

जब वह दोबारा आई तो उसके सामने वह कागज का टुकड़ा कर दिया, फलस्वरूप वह चीखती चिल्लाती हुई दौड़ गई और दोवारा वापिस नहीं आई।

साधु संगत जी! यह कमाए हुए नाम की शक्ति होती है। नाम का साधक जहाँ पर होता है तो उसके चारों तरफ नाम ही होता है, तभी तो गुरवाणी का कथन है -

*आवै साहिबु चिति तेरिआ भगता डिठिआ॥*

*अंग - 520*

जो व्यक्ति वाहिगुरू जी से बिछुड़े हुए हैं, उनके मुख

से भी वाहिगुरू-वाहिगुरू निकलने लग जाता है। नाम का प्रताप ही ऐसा होता है, जब वह अन्दर आ जाता है, तो फिर उसके आने से अन्दर शान्ति आ जाती है और चित्त शान्त हो जाता है, फिर कोई भी यत्न करने की जरूरत नहीं रहती है।

*साध कै संगि नही कछु घाल॥*
*दरसनु भेटत होत निहाल॥* *अंग - 272*

दर्शन करते ही जिज्ञासु की वृत्ति स्थिर होने लगती है, यही पूर्ण साधू की निशानी होती है।

अतः मैंने महाराज जी के पास विनय की कि यह इस प्रकार से कह रहा है। आप हँसने लग पड़े तथा बोले, यह तो बहुत कुछ जानता है। मैंने कहा महराज! यह पढ़ा लिखा है, आप इससे बात करके देख लो। महाराज जी कहने लगे, अच्छा फिर उसे कह देना कि वह सुबह कुर्सी के समय आ जाए। दूसरे दिन वह आया और रोता ही रहा। महराज जी उठकर चले गए। तीसरे दिन फिर आ गया। उस समय महाराज जी ने अन्दर बुला लिया लेकिन बाहर लोगों ने उसके सारे ब्यानों को टेपों में भर लिया। आजकल वह टेपें बाजार में भी मिलती हैं। परन्तु ये कैसेट्स दूसरी हैं, वह दूसरी थी। अन्दर जाने के बाद महाराज जी कहने लगे, अच्छा ये बताओ कि तुम क्या चाहते हो? और अब रोना नहीं। वह बोला, महाराज जी! मैं बहुत दुखी हूँ, मुझे निजात (मुक्ति) दिलवा दो। महाराज जी कहने लगे, तुम निजात कौन सी चाहते हो? प्रेत योनि से छुटकारा चाहते हो अथवा पूर्ण मुक्ति चाहते हो? यदि तुम वास्तविक मुक्ति (निजात) चाहते हो तो फिर तो तुम्हें मनुष्य बनना पड़ेगा। उसके बाद कर्म, उपासना, ज्ञान तथा विज्ञान के चारों दरवाजों में से फिर बाहर निकलना पड़ेगा। वह होशियार बहुत था। कहने लगा, महाराज! मैं यही निजात चाहता हूँ। केवल प्रेत योनि से मुक्ति ही नहीं चाहता हूँ। महाराज जी! यदि आपने मुझे केवल यहीं से बाहर निकाल दिया तो न जाने फिर कौन सी योनि में चला जाऊँगा। महाराज जी बोले, फिर तो तुम्हें मनुष्य बनना पड़ेगा। महाराज जी ने इसके बाद कोका कोला वालों का नाम लिया कि तुम्हें वहाँ पर भेज दें? वह बोला महाराज! एक मिनट रुको। एक मिनट बाद पुनः आ गया कहने लगा, महाराज! वहाँ मत भेजना, वहाँ तो कारों की कतारें लगी हुई खड़ी हैं, मैं वहाँ पर नाम का जप तो कर ही नहीं पाऊँगा।

वहाँ पर गुरदेव सिंह नाम का एक प्रेमी था, जब उसने गर्दन को ऊपर की ओर करके देखा तो महाराज जी की भी उसके ऊपर दृष्टि पड़ गई। आप जी कहने लगे गुरदेव सिंह! तुम भी दस पन्द्रह साल से घूम रहे हो कि मैं सन्तनजों की सेवा करूँ ताकि मुझे पुत्र की प्राप्ति हो जाए, तुम्हारे घर भेज दें इसे? वह बोला हाँ महाराज जी, भेज दीजिए। महाराज जी बोले, लो भाई! इसके घर चले जाओ!

रात्रि के समय मैं और गुरदेव सिंह दोनों एक शयन कक्ष में लेटे हुए थे। गुरदेव सिंह मुझसे बोला, महाराज जी से पुत्र भी मांगा वह भी क्या मेरे घर प्रेत ही आएगा? मैं तो डर रहा हूँ। रात को जब हम विश्राम करने लगे तो वह हड़बड़ा कर तीन बार उठा। मैंने कहा, तम्हें क्या हो गया है? वह बोला, पता नहीं क्या हुआ है, मेरे ऊपर तो आज बहुत कोई अदृश्य सा दबाव पड़ रहा है। जब हम लोग सुबह फिर आए तो वह फिर मिला। हमें देखकर हँसने लग पड़ा। उसका नाम सुलेमान था। मैंने कहा, सुलेमान! तुम हँस क्यों रहे हो? वह बोला, मैं रात को तीन बार पिता जी को नमस्कार करने के लिए गया था, लेकिन पिता जी डर कर उठ जाते थे। मैंने कहा, तुम इस प्रकार की शरारतें क्यों करते हो? तुमने पुत्र बनना है कि अपने पिता जी को डराने का काम करना है?

इस प्रकार महाराज जी ने सारी संगत के सामने कह दिया। अब अधिकांश लोगों को पता था कि इसकी पत्नी का आप्रेशन हो चुका है, इसलिए अब इसके घर सन्तानोत्पत्ति नहीं हो सकती है। मैंने कहा गुरदेव सिंह! तुमने यह बात महाराज जी को बता देनी थी? तुम लोग बिल्कुल परीक्षा ही लेने लग पड़े। वह बोला, मुझे तो इस बात का ध्यान ही नहीं रहा। संगत के बीच कई लोग ऐसे भी थे कि वे कहने लगे यदि गुरदेव सिंह के घर बच्चा न हुआ तो फिर क्या होगा? कई लोगों के मन में महापुरुषों के प्रति इस प्रकार की शंकाएं भी होती हैं। मैंने कहा न होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता है। तुम्हें पता नहीं कि महाराज जी पूर्ण महापुरुष हैं, और पूर्ण महात्मा का वचन कभी भी टला नहीं करता है। मैडिकल साइंस गलत हो सकती है लेकिन होगा वही जो महात्मा कहेंगे। वाहिगुरू जी को भी अपने सिद्धान्त बदलने पड़ सकते हैं।

कई प्रेमीजनों का ख्याल होता है कि क्या ऐसा भी हो सकता है? यहाँ पर एक कर्नल सवरन सिंह जी आए। वे ऐंग्जाइनिया की बीमारी से पीड़ित थे। वैसे तो वे अपनी पत्नी की शारीरिक आरोग्यता के उद्देश्य से यहाँ आए थे। उसकी पत्नी तो कोई पाठ वगैरह करती नहीं थी, लेकिन वे बहुत लगन से पाठ व सेवा कार्य करते रहे। वे सेवा करके यहाँ से चले गए। उसका लड़का उसे कहने लगा, पिता जी! अब मैं आपका आप्रेशन मद्रास में करवा देता हूँ। वहाँ पर घटना यह घटित हुई कि जब डाक्टर उनके टेस्ट करने लगे तो सारे टेस्ट करने के बाद वहाँ के डाक्टर उसे मुबारकबाद देने लग पड़े। सवरन सिंह जी बोले, क्या हुआ? डाक्टर कहने लगे, सर! चिकित्सा विज्ञान की दृष्टि से बड़ी अद्भुत बात हुई है। आपके दिल के पास एक अतिरिक्त नाड़ी थी, वह खुल गई

है, शेष तो सारी बन्द पड़ी हैं। अब महाराज जी ने क्या किया कि उन्हें एक नाड़ी ही और लगा दी।

इस प्रकार यह सब कुछ वाहिगुरू के हाथ में है। उसके लिए कुछ भी मुश्किल नहीं है। अत: ये सब मनोकल्पित बातें नहीं हैं। आवश्यकता विश्वास लाने की है। इसीलिए गुरू जी कहते हैं -

*साई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो॥*
*जिना भाग मथाहि से नानक हरि रंगु माणदो॥*
*अंग - 81*

*नाम की महिमा संत रिद वसै॥*
*संत प्रतापि दुरतु सभु नसै॥* *अंग - 265*

जन साधारण को नाम के ऊपर विश्वास नहीं आता है। यह विश्वास तो केवल सन्तजनों को ही आता है। इसलिए वे सारा कुछ छोड़कर दिन-रात लगे रहते हैं। उनके हृदय में नाम की महिमा का निवास होता है।

इस प्रकार कर्नल सवरन सिंह आश्चर्यचकित रह गया कि उसकी नाड़ी ही नई खुल गई! मैंने कहा ऐ प्रेमीजन! आप लोग भरोसा करो। आखिर सत्यता सबके सामने आ गई। अतः यह महापुरुषों के वचन हुआ करते हैं। यथा -

*सूरबीर बचन के बली॥* *अंग - 392*

इस प्रकार उनके वचनों में सत्यता होती है। हमारे पास यहूदी स्वयं 45 दिन आकर रहे थे। वहाँ पर हम दो सौ लोगों को प्रतिदिन मिलवाया करते थे। कई लोग कहेंगे कि क्या एक घंटे में भी दो सौ लोग मिल सकते हैं? हम उन लोगों के पन्द्रह-पन्द्रह लोगों के ग्रुप बना लेते थे तथा स्वयं उनसे बात करके महाराज जी को बता देते थे, वे वचन कर दिया करते थे। उनमें कई प्रकार के लोग आते थे, एक प्रेमी जोड़ा आया वे कहने लगे कि हमारे घर कोई बच्चा नहीं बचता है, बच्चा पैदा होता है और मर जाता है। महाराज जी कहने लगे तुम लोग दूसरे लोगों के बच्चों को मारते होगे? तुम लोग क्या काम करते हो? वे महिलाएं कहने लगीं, महाराज हमारे पति लोग पशुओं की चोरी करने का काम करते हैं। महाराज जी बोले, उन पशुओं के बच्चे?

वे बोलीं, उन्हें तो वे वहीं पर छोड़ आते हैं, और वे तो वहीं पर मर जाते हैं। महाराज जी बोले, इसीलिए वाहिगुरू तुम्हारे बच्चों को भी मार देता है। वे रोने लग पड़ीं, कहने लगीं, महाराज जी! इसमें हमारा क्या दोष है? महाराज जी कहने लगे, तुम लोग अपने पतियों को समझाओ! वे बोलीं, महाराज! हम लोग कैसे समझाएं वे तो हमारी ही पिटाई करनी शुरू कर देते हैं। वे लोग किसी की बात तो सुनते ही नहीं है, पूरे ड्रम के ड्रम वे शराब निकालते व पीते हैं। महाराज जी बोले, तुम लोग ऐसा किया करो कि जिन गायों व भैंसों को वे चुरा कर लाते हैं, तुम लोग उनका न तो दूध पिया करो, न लस्सी पिया करो। यह काम तो कर लोगी न? वे बोलीं, महाराज! यह तो हम कर लेंगी। महाराज जी बोले, तुम लोग इस चोरी के कृत्य से हार्दिक रूप से नफरत करते हुए इसे बहुत ही घृणित कार्य समझने लग जाओ।

एक साल के बाद उनके घर एक बालक ने जन्म लिया। बच्चों का जन्म तो पहले भी होता था, लेकिन वे मर जाते थे। इस बार वह अपने बच्चे को लेकर मेरे पास आई कहने लगी, बाबा जी! इस बार मेरा बच्चा काल को प्यारा नहीं हुआ बल्कि जीवित है। मैंने कहा, इस बार तो बचना ही था क्योंकि महापुरुषों का वचन हो चुका था।

इसी प्रकार एक बीमार आया। महाराज जी ने उसके ऊपर बहुत कृपा की। महराज जी ने उसे कहा कि तुम शराब मत पीना, ठीक हो जाओगे। जब लड़के की शादी होने लगी तो उन लोगों ने शराब निकाल ली। शराब का उन्होंने ड्रम निकाल लिया। उसने बहुत जोर लगाया कि वह शराब को हाथ नहीं लगाएगा लेकिन साथियों ने उसे बलात्पूर्वक अपने साथ, हाथ बंटाने के लिए लगा लिया। उसकी डयूटी लगा दी कि तुम शराब की गैलनें भर-भर कर उधर रखते जाओ। इधर उसे इस कार्य में लगा दिया गया और उधर दैवनेत से एक भैंस अपनी जंजीर तोड़कर इस प्रकार से हड़बड़ा कर दौड़ी कि उसने उसके द्वारा भरी गई सारी शराब की बोतलों व गैलनों को गिरा दिया। इस घटना से घबराकर वह प्रेमीपुरुष भी घबराकर भाग खड़ा हुआ तथा दौड़कर मेरे पास आ गया और कहने लगा, जी मेरे साथ तो इस प्रकार की घटना घटित हुई है।

मैंने कहा जब महापुरुषों ने तुम्हें शराब को हाथ न लगाने की तकीद की थी, फिर तुमने ऐसी गलती क्यों की? कहने लगा, महाराज! मेरी तो इसमें कोई गलती नहीं है। मैंने कहा तुम ऐसा करो कि वहाँ पर जाओ ही नहीं, यहीं पर रहो, जब आएंगे तो देख लेंगे।

इसी प्रकार से एक सरदार बेला सिंह थे, उनकी पत्नी बीमार हो गई, उसे कुछ भी हजम नहीं हो पा रहा था। यहाँ पर आने के चार दिन बाद वह पूर्णरूपेण ठीक हो गई। रोटी खाए हुए उसे कई महीने बीत चुके थे। जब उसकी खबर लेने के लिए उसके बच्चे आए तो उस समय वह अपने हाथ पर चार रोटियां रखे हुए भोजन कर रही थी। उसे देखकर उसके बच्चे हैरान हो गए। वे कहने लगे, माता जी! चार रोटियां! वह बोली, बेटा! मैं तो यहाँ पर आते ही ठीक हो गई थी।

इसी प्रकार एक और प्रेमी पुरुष आया वह कहने लगा,

महाराज जी! आप मुझे बताएं मैं जो भी पशु लाता हूँ, वह खूँटे पर आने के कुछ ही दिनों बाद मर जाता है। क्या मैं अपने सारे पशुओं को बेच ही डालूँ? महाराज जी बोले, अच्छा ऐसा करना तुम शराब का पूर्णतः परित्याग कर दो। वह बोला, ठीक है, महाराज जी! फिर महाराज जी ने कहा, तुम्हारे गांव में गुरूद्वारा है? वह बोला महाराज जी! कोई विशेष तो नहीं है। वैसे ही एक छोटा सा बनाया हुआ है। महाराज जी बोले, तुम वहाँ पर जाकर सेवा किया करो, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की सेवा किया करो, झाड़ू दिया करो, धूप व दीपक आदि जलाकर शाम को रहिरास साहिब का पाठ किया करो। उसने वचन का पालन किया। फलस्वरूप उसके घर में पशु धन बहुत अधिक संख्या में हो गया। बहुत बड़ी मात्रा में दूध होने लग पड़ा। जब बहुत अधिक हो गए तो मेरे पास आया और कहने लगा जी, मैं पशुधन को बेचना चाहता हूँ। मैंने कहा, तुम्हें महापुरुषों का हुक्म तो बेचने के लिए है नहीं। वह कहने लगा हुक्म तो है नहीं इसीलिए, मैं जिस पशु को बेचने के लिए तैयार होता हूँ, उसी के थनों में से खून आने लग पड़ता है और इसीलिए वह बिकता नहीं है। मेरे पास पशुओं की संख्या बहुत हो चुकी है। अब मैं क्या करूँ? मैंने कहा तुम परमेश्वर का धन्यवाद करो, तुम्हारे ऊपर महापुरुषों ने कृपादृष्टि कर दी है। इस प्रकार महापुरुषों के वचनों में यह सहज स्वभाव ही शक्ति होती है -

*सूरबीर बचन के बली॥*
*कउला बपुरी संती छली॥* अंग - 392

माया को यदि कोई छल सकता है, तो वे महापुरुष ही ही, अन्यथा माया को कोई भी छल नहीं सकता है। शेष सारा संसार माया के समक्ष घुटने टेक देता है। संसार की ताकत नहीं है कि वह माया के साथ मुकाबिला कर ले। जो मुकाबिला करने के लिए कहता है वह आखिर गिर ही जाता है। केवल वे महापुरुष जिन्हें वाहिगुरू जी स्वयं भेजते हैं, वे ही माया के साथ मुकाबिला कर सकते हैं।

इस प्रकार से -

*वरतणि जा कै केवल नाम॥* अंग - 392

सन्तजनों के पास केवल नाम की बात ही होती है, यहाँ पर कोई भी राजनैतिक बातें नहीं की जाती हैं। इस स्टेज पर आकर हो सकता है कि इस बात के लिए कोई ऐतराज ही करे कि हमें राजनैतिक बातें नहीं करने देते हैं लेकिन यह सन्तजनों की स्टेज है, यहाँ पर केवल और केवल नाम की ही बात होती है। नाम के बिना यहाँ दूसरी कोई बात नहीं होती है और न ही सन्तनजों को किसी की कोई आवश्यकता ही होती है। जहाँ पर नाम आ जाता है, तो वहाँ पर नाम के पीछे सारी चीजें स्वतः ही आ जाती हैं। इसलिए नाम को समझने की कोशिश करो। नाम की तीन अवस्थाएं होती हैं। जो बन्दगी करने वाले हैं, वे ध्यानपूर्वक सुनने का यत्न करो।

पहली अवस्था होती है नाम का अभ्यास, दूसरी अवस्था होती है नाम की अवधि, तीसरी होती है नाम का फल। इन तीनों को ध्यानपूर्वक समझने की कोशिश करो। पहला है - नाम का अभ्यास। जब पांच प्यारे नाम वस्तु को प्रदान करते हैं, तो उस समय जो उत्तम जिज्ञासु है, वह पिछले जन्म में जहाँ से छोड़कर आया है, वहीं से लग जाएगा। दूसरी तरफ जो साधारण जिज्ञासु है, उसे हुक्म होता है कि वह अढ़ाई घंटे तक माला की मदद से गुरुमन्त्र का जप करे, उसके बाद पांच वाणियों का पाठ करे।

*गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए*
*सु भलके उठि हरि नामु धिआवै॥*
*उदमु करे भलके परभाती*
*इसनानु करे अंम्रित सरि नावै॥*
*उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै सभि किलविख पाप दोख लहि जावै॥*
*फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै*
*बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै॥* अंग - 305

ब्रह्म मुहुर्त में तो नाम का जप करना है, उसके बाद -

*फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै ....* अंग - 305

फिर गुरवाणी का पाठ करे -

*बहिदआ उठदिआ हरि नामु धिआवै॥* अंग - 305

अतः जो नाम का अभ्यास है, यह माला से शुरू होता है, उसे बाद जिह्वा का नाम होता है, उसमें दस गुणा फल बढ़ जाता है, उसे जप कहते हैं। एक जाप होता है, दूसरा अजपा होता है। जाप का फल जिह्वा के नाम से दस गुणा अधिक होता है। जब नाम कंठ में जाता है तो उसका फल दस गुणा और भी बढ़ जाता है। जब नाम हृदय में जाता है, पसन्ती वाणी में, तो उसका फल दस गुणा और बढ़ जाता है। इसके बाद जब परावाणी में आता है, तो दस गुणा और बढ़ जाता है। इसका मतलब है कि यदि जिह्वा के द्वारा एक हजार बार वाहिगुरू-वाहिगुरू किया जाए तो नाभि में जाकर यानि कि deep silence में जाकर यदि केवल एक बार ही कह दिया जाए तो उसके बराबर ही होता है। इस प्रकार ज्यों-ज्यों नाम का फल बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों उसकी प्राप्तियां भी बढ़ती जाती हैं। इस प्रकार महाराज जी कहते हैं कि पहले तो नाम को श्वासों के साथ जपना शुरू करो-

*सासि सासि सिमरहु गोबिंद॥*
*मन अंतर की उतरै चिंद॥* अंग - 295

इस के बाद फिर अजपा शुरू हो जाता है। अजपा उसे कहते हैं, जिसमें कि होंठ और जिह्वा दोनों न हिलें। जब अजपा

जाप होता है तो -

*अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ॥*

*अंग - 1291*

उस समय नाम में परिवर्तन होता है। आज्ञाचक्र (जहाँ पर दोनों आँखों व नाक का मिलन बिन्दु है) में नाम का निवास हो जाता है। इसके लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है। यहाँ पर धुन बननी शुरू हो जाती है, जिसे अनहद नाद कहते हैं। कई प्रकार के साधू लोग यहाँ पर नाम नहीं जपते हैं बल्कि वे लोग केवल धुन को सुनते ही हैं लेकिन गुरू घर के अन्दर जो वाहिगुरू मन्त्र है, इसके बिना मन निर्मल नहीं हो पाता है। इस सम्बन्ध में गुरू महाराज जी ने इस प्रकार से कथन किया है -

*धारना - धुन महि धिआन, धिआन महि जानिआ।*

*धुनि महि दिआनु धिआन महि*
*जानिआ गुरमुखि अकथ कहानी॥* *अंग - 879*

जब अन्दर धुन उत्पन्न हो जाए तो फिर सुरति चढ़ने लगती है, त्रिकुटी में से निकल कर फिर वह दसवें द्वार में पहुँच जाती है।

*ओथै अनहद सबद वजहि दिनु राती*
*गुरमती सबदि सुणावणिआ॥* *अंग - 124*

वहाँ पर दिन रात अनहद का प्रकाश हो जाता है, धुन प्रकट हो जाती है। वहाँ पर वह धुन प्रकट हो जाती है, जिसके बारे में श्री गुरू जी इस प्रकार से कथन करते हैं -

*प्रथम ओअंकार तिन कहा*
*सो धुन पूर जगत महि रहा।*

फिर वह धुन जो कि निरंकार के मुख से उत्पन्न हुई है और जिसके बारे में गुरू जी कथन करते हैं -

*कीता पसाउ एको कवाउ॥*
*तिसते होए लख दरीआउ॥* *अंग - 3*

*एक कवावै ते सभि होआ॥* *अंग - 1003*

वह प्रकट हो जाती है। यह धुन प्रत्येक के अन्दर है, तुम्हारे अन्दर है, मेरे अन्दर है, जानवरों के अन्दर है, वृक्षों के अन्दर है, सूर्य, धरती, आसमान, तारों, पानी, हवा आदि के अन्दर है। इस प्रकार धीरे-धीरे अभ्यास करते हुए उसके साथ वृत्ति जुड़ जाती है। इसलिए गुरू जी कहते हैं -

*धारना - पूरे उह साधू ने*
*विसरे ना नाम जिन्हां नूं।*

*जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामां मनि मंतु॥*
*धंनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु॥* *अंग - 319*

इस अवस्था के अन्दर आने के बाद नाम विस्मृत नहीं होता है और न ही धुन मन्द पड़ती है। गुरू जी कहते हैं कि उसे ही सन्त कहते हैं। केवल विशिष्ट कपड़ों वालों को ही सन्त नहीं कहा जाता है। किसी डेरे में रहने वाले को भी सन्त नहीं कहा जाता है। वास्तव में सन्त वह होता है, जिसे क्षण मात्र के लिए भी नाम विस्मृत नहीं होता है।

*जिना सासि गिरासि न विसरै*
*से पूरे पुरख परधान॥* *अंग - 313*

प्रधान की परिभाषा गुरू जी ने यहाँ पर आकर दे दी है। गुरू जी बताते हैं कि प्रधान वे होते हैं -

*जिना सासि गिरासि न विसरै*
*से हरि जन पूरे सही जाणि॥* *अंग - 313*

उनके अन्दर कोई कमी नहीं हुआ करती है, वे पूरे होते हैं अतः नाम जपने को, नाम के अभ्यास से, सारे शरीर के अन्दर नाम समा जाता है।

*धारना - रोम-रोम हरि धिआवै गुरमुख पिआरे दा।*

*गुरमुखि रोमि रोमि हरि धिआवै॥*
*नानक गुरमुख साचि समावै॥* *अंग - 941*

*गुरमुखि सगली गणत मिटावै॥* *अंग - 942*

सारे रोमकूपों के अन्दर जिह्वा लग जाती है और उनमें से वाहिगुरू का उच्चारण होता है, नाम की धुन चल पड़ती है। क्योंकि नाम की धुन के अन्दर इतना प्रकाश हो जाता है, इतनी शक्ति उत्पन्न हो जाती है, उसके अन्दर इतनी ऊर्जा उत्पन्न हो जाती है, कि एक-एक रोमकूप में नाम की धुन प्रवेश कर जाती है। यहाँ तक नाम का अभ्यास होता है, इसके बाद जो अगली अवस्था होती है, उसे नाम की अवधि कहते हैं। अभ्यास के बाद फिर यह अवस्था उत्पन्न होती है, इस समय नाम का जप करने की जरूरत नहीं होती है। बल्कि नाम का जप स्वतः ही होने लगता है। यथा -

*धारना - नाम हरी दा जपदे,*
*सारे वणां दे पंखेरू।*

*जो बोलत है म्रिग मीन पंखेरू*
*सु बिनु हरि जापत है नही होर॥* *अंग - 1265*

*हरहट भी तूं तूं करहि बोलहि भली बाणि॥*
*अंग - 1420*

यह नाम की अवधि हुआ करती है। पहले तो नाम का अभ्यास था फिर नाम की अवधि आ गई। जब नाम की अवधि आ जाती है तो फिर सारा संसार नाम का जप करता हुआ ही प्रतीत होता है।

*धरति पातालु आकासु है मेरी जिंदुड़ीए*
*सभ हरि हरि नमु धिआवै राम॥* *अंग - 540*

प्रत्येक वस्तु के अन्दर से नाम की धुन सुनाई देने लग पड़ती है।

बाबा फरीद जी जंगल में बैठे थे। जब आपके अन्दर यह अवस्था आई तो आपने अपने मुखारविन्द से इस प्रकार वचन किया -

*धारना - ककर चुगदे थलां दे विच वसदे,*
*रब्ब दी ना आस छडदे पंछी।*

*फरीदा हउ बलिहारी तिन पंखीआ जंगलि जिन्हा वासु॥*
*ककरु चुगनि थलि वसनि रब न छोडनि पासु॥*
*अंग - 1383*

जब नाम की अवधि प्राप्त हो गई तो उस समय बाबा फरीद जी ने अनुभव किया कि यहाँ तो जानवर भी परमेश्वर का नाम जप रहे हैं। जानवर भी परमेश्वर पर पूरा विश्वास करते हैं। इसके बाद सारी प्रकृति ही नाम का जप करती हुई प्रतीत होती है -

*धरति पातालु आकासु है मेरी जिंदुड़ीए*
*सभ हरि हरि नमु धिआवै राम॥ अंग - 540*

इसके आगे नाम का फल हुआ करता है। पहले नाम का अभ्यास, फिर नाम की अवधि और अन्त में नाम का फल। नाम का फल क्या होता है। इस सम्बन्ध में गुरू जी कथन करते हैं -

*धारना - सांई ही वरगे ने*
*विसरे ना नाम जिन्हां नूं।*

*जिन्हा न विसरै नामु से किनेहिआ॥*
*भेदु न जाणहु मूलि सांई जेहिआ॥ अंग - 397*

इस प्रकार से इस फल की प्राप्ति हो जाया करती है-

*ब्रहम गिआनी कउ खोजहि महेसुर॥*
*नानक ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर॥ अंग - 272*

*आतम रस जिह जानही सो है खालस देव॥*
*प्रभ महि मोह तासि महि रंचक नाहिन भेव॥*
*सरब लोह ग्रंथ में से*

गुरू जी कहते हैं -

*या महि रंच न मिथिआ भाखी*
*पारब्रहम गुर नानक साखी*

गुरू महाराज जी ने कितनी बड़ी बात पर हमारा निश्चय लाने की कोशिस की है। आप कहते हैं कि खालसा वह है जिसे आत्मा का रस प्राप्त हो गया है और जो प्रत्येक समय नाम के रस में रहता है। उसका पद कितना बड़ा है, इसे बताते हुए आप कहते हैं कि मुझमें, परमेश्वर में तथा उसमें कोई भी अन्तर नहीं है। यथा -

*नानक साध प्रभ भेदु न भाई॥ अंग - 272*

इस अवस्था को जो प्राप्त हो चुका है, उसमें तथा परमेश्वर में कोई फर्क नहीं हुआ करता है। चौथी बात यह आ गई कि उसकी महिमा को ब्यान करना ही मुश्किल हो गया। गुरू जी इस प्रकार से कथन करते हैं-

*धारना - शिव जी खोजदे फिरदे ब्रहमगिआनी नूं।*

*ब्रहम गिआनी कउ खोजहि महेसुर॥*
*नानक ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर॥ अंग - 272*

इधर गुरू जी कहते हैं -

इस प्रकार के महापुरुषों का सान्निध्य प्राप्त करने के लिए स्वर्ग लोक के देवता आदि भी प्रयत्नशील रहते हैं। वे भी सोचते रहते हैं कि कहीं पर यदि हरियश हो रहा हो तो उसे जाकर श्रवण किया जाए। यहाँ तक कि जो बैकुण्ठ धाम के स्वामी हैं, जिन्हें विष्णु भगवान कहते हैं, वे भी यह कामना करते हैं कि -

*जह कीरतनु तेरा साधू गावहि*
*तह मेरा मनु लागै॥ अंग - 610*

*कहि कमीर अब कहीऐ काहि॥*
*साधसंगति बैकुंठै आहि॥ अंग - 1161*

उस स्थान पर तो बैकुण्ठ के देवते भी आकर निवास कर लेते हैं, अड़सठ तीर्थों के देवते वहाँ पर आ जाते हैं -

*हरि की कथा होत है जहां गंगा भी चल आवत तहां।*

एक बार नारद मुनि जी ने व्रत रखा हुआ था। आप जी अपने व्रत को खुलवाने के लिए बैकुण्ठ धाम चले गए। आप ने वहाँ पर जाकर लक्ष्मी जी को पूछा मैंने विष्णु जी के दर्शन करने के बाद ही अपना व्रत खोलना है, कृप्या आप बताएं कि वे कहाँ पर हैं?

लक्ष्मी जी ने कहा, मुझे तो पता नहीं है कि आप कहाँ पर गए हैं क्योंकि आप बताकर नहीं गए हैं। लक्ष्मी जी कहने लगीं, मुनिवर! आप तो त्रिकालज्ञ हैं। अपनी दृष्टि दौड़कर देखो कि वे कहाँ पर हैं? नारद जी ने अपनी अर्न्तदृष्टि से देखने की कोशिश की। आपने बड़े-बड़े योगियों के हृदय में, कैलाश पर्वत पर, क्षीर-सागर में, बहुत सारे तपी पुरुषों के हृदय में देखा लेकिन विष्णु जी कहीं पर भी दिखाई नहीं पड़े। आखिर लक्ष्मी जी ने कहा, मुनिवर! आप प्रार्थना करो और वे स्वतः ही दिखाई पड़ जाएंगे। जब नारद मुनि ने प्रार्थना की तो आप ने क्या देखा कि एक स्थान पर एक महात्मा सत्संग कर रहे हैं। तो वहाँ पर सत्संग में सबसे पीछे, जहाँ पर कोई चटाई या चद्दर आदि भी नहीं बिछी हुई थी, आप वहाँ पर सुखासन में बैठे सत्संग श्रवण कर रहे हैं। भगवान जी (विष्णु जी) वहाँ पर सूक्ष्म रूप में आ गए तथा नारद

जी भी सूक्ष्म रूप में हैं। नारद मुनि जी कहने लगे प्रभु जी! क्या आप सोने के मन्दिरों में नहीं जाते हैं, जहाँ पर अनेकों साधू आरती उतारते हैं, धूप सामग्री जलाते हैं? और यहाँ पर आप धरती पर ही चौंकड़ा लगाकर ध्यानमग्न हैं, इसका क्या कारण है?

विष्णु जी बोले, नारद! मैं तुम्हें सच्ची बात बतलाऊँ? बैकुण्ठ धाम मेरा निजघर नहीं है, मेरा जो अपना घर है, वह तो –

*निज घर मेरो साध नारद मुनि*
*दरसन साध संग मेरो निज रूप है।* *भाई गुरदास जी*

मेरा असली घर तो वह है जहाँ पर पूर्ण साधू हरियश करता है –

*जह कीरतनु तेरा साधू गावहि तह मेरा मनु लागै॥*
*अंग – 610*

जहाँ पर पूर्ण साधू कीर्तन करता है, वह सारी संगत मेरा ही रूप होती है –

*साध संग मेरो माता औ कुटंब सखा*
*साध संग मेरो सुत स्रेसट अनूप है।*
*कबित्त भाई गुरदास जी*

विष्णु भगवान जी कहने लगे मेरा न कोई पिता है, न कोई मेरी माँ है, न मेरा कोई कुटुम्ब है, न कोई मेरा मित्र है, मेरे अपने तो ये सभी हैं जो कि साधु संगत के रूप में बैठे हैं –

*साध संग मेरो माता औ कुटंब सखा साध संग मेरो सुत स्रेसट अनूप है।*
*साध संग सरब निधान प्रान जीवन मै साध संग निज पद सेवा दीप धूप है।*
*साध संग रंग रस भोग सुख सहज मै साध संग सोभा अति उपमा औ ऊप है॥* *कबित्त भाई गुरदास जी*

अतः पूर्ण साधू की संगत के लिए, उसके दर्शन के लिए, मैं सदैव ही लालायित हूँ, पूर्ण साधू का, बन्दगी करने वाले का, दर्शन अमोघ दर्शन हुआ करता है। उसका दर्शन करने के लिए तो शिव जी आदि बड़े देवते भी लालायित रहते हैं –

*ब्रहम गिआनी कउ खोजहि महेसुर॥*
*नानक ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर॥* *अंग – 272*

साधु संगत जी! इस प्रकार के बहुत से उदाहरण देखने को मिलते हैं। यह कोई मनोकल्पित बात नहीं है।

एक बार जब सन्त जी दीवान लगा रहे थे और हम लोग कीर्तन श्रवण कर रहे थे, तो एक ऐसी घटना घटी कि उस दौरान एक महिला की दिव्य दृष्टि खुल गई। उसने देखा कि अजीब प्रकार का साधू आया और बैठ गया, फिर दूसरा अद्‌भुत प्रकार का साधू आया और इसी प्रकार से तीसरा भी आकर बैठ गया, कीर्तन का कार्यक्रम तो चल ही रहा था, लेकिन वह महिला तो उन्हीं को देखती रही कि ये कौन लोग यहाँ पर आकर बैठ गए हैं? जब कीर्तन की समाप्ति हो गई तो वह महिला मुझे कहने लगी, क्योंकि प्रथम पंक्ति में बैटा हुआ था, कि तुम्हारे सामने ये कौन साधू आकर बैठे थे? मैंने कहा मेरे पास तो कोई भी साधू नहीं बैठा था, तुम कौन से साधू की बात कर रही हो? वह कहने लगी तुम्हारे सामने तीन साधू बैठे थे। मैंने कहा मुझे तो कोई भी दिखाई नहीं पड़ा, मैं तो वहीं पर बैठा था। बात चलती रही। मैं कह रहा था कि साधू आए नहीं लेकिन वह कह रही थी कि साधू आए थे। आखिर यह बात महाराज जी के पास पहुँच गई। महाराज जी को निर्णय करने के लिए विनय की गई। महाराज जी कहने लगे, आप लोग चुप रहो, ये सब अध्यात्म की बातें हैं। यदि दिखाई पड़ गए तो भी चुप रहो। इसके बाद मैं भी हठ करने लगा, मैंने कहा, महाराज जी! कुछ निर्णय तो होना चाहिए कि वह महिला गलत बोल रही है अथवा मैं गलत हूँ। महाराज जी बोले, नहीं वह महिला गलत नहीं बोल रही है।

मैंने कहा महाराज जी! फिर मुझे पता क्यों नहीं लगा?

महाराज जी बोले, उसके दिव्य नेत्र खुल गए हैं। इसीलिए उसने दीवान के अन्दर उन दिव्य आत्माओं को देख लिया है। महाराज जी कहने लगे वे तीनों मुख्य देवते, हरियश श्रवण करने के लिए अपने ब्रह्म लोक, शिव लोक तथा बैकुण्ठ लोक को छोड़कर यहाँ गुरू नानक के दरबार में आकर शान्ति प्राप्त कर रहे थे। जहाँ पर हरियश हो रहा होता है, वहाँ पर सभी देवजन आ जाया करते हैं।

*ता का संगु बाछहि सुरदेव॥*
*अमोघ दरसु सफल जा की सेव॥* *अंग – 392*

अतः साधू का दर्शन अमोध होता है और इसीलिए वचन पूरा होता है। इसी प्रकार की एक और घटना है। जब महाराज जी ने चण्डीगढ़ से दीवान लगाने के बाद यू. पी. के लिए प्रस्थान किया तो उस समय मैं अभी अपने फार्म पर नहीं गया था। रास्ते में जब आप मुरादाबाद के पास से निकलने लगे तो वहाँ पर आपके एक परम श्रद्धालुजन थे – सुरजीत सिंह। वे ट्रान्सपोर्टर थे। उन्होंने आपको अपने पास रात्रि ठहरने के लिए मना लिया। उनके पास अच्छा मकान न होने के कारण उन्होंने अपने क्षेत्र के एम. पी. व छोटे राजा, रमेश कुमार शाहू को कहा कि महापुरुष आ रहे हैं। हम उन्हें आपकी कोठी में ठहराना चाहते हैं। रमेश कुमार शाहू जी ने कहा, ठीक है। हमारे घर के ऊपर बहुत बड़ा चौबारा है, उसमें आप

प्रसन्नता सहित उन्हें ले आओ। मेरे घर में महापुरुषों का आना मेरे लिए सौभाग्य की बात है। महापुरुषों का जत्था चण्डीगढ़ से प्रातःकाल में जल्दी ही चल पड़ा था। दोपहर को भोजन आपने हापुड़ में किया और उसके बाद लगभग एक घंटे में आप मुरादाबाद चले गए, वहाँ जाकर आपने दो अढ़ाई घंटे आराम किया। उसके बाद आप श्रद्धालुजनों को मिले। लगभग पांच बजे, सुरजीत सिंह नीचे उतरा और रमेश कुमार से कहने लगा, शाहू साहिब! तुम्हारे घर पूर्ण महत्मा आए हुए हैं, मांग लो जो मांगना है।

वह बोला, मिल जाएगा?

सुरजीत सिंह कहने लगा, हाँ! हमारी गुरवाणी में इस प्रकार से लिखा है -

*धारना - जे तैं चार पदारथ लैणे,*
*सेवा कर लै साधूआं दी।*

*चारि पदारथ जे को मागै॥*
*साध जना की सेवा लागै॥* *अंग - 266*

गुरू जी ने कथन किया है कि यदि तुमने चार पदार्थ लेने हैं तो तुम पूर्ण सन्तजनों की शरण में आ जाओ। क्योंकि-

*तीरथ कीए एक फल, संत मिले फल चार।*
*गुरू मिले फल अनेक हैं कहत कबीर बीचारु।*

वह कहने लगा, अच्छा!

सुरजीत सिंह बोला, यह बात अक्षरशः सत्य है, शाहू साहिब!

रमेश कुमार शाहू ने उसी समय निश्चय कर लिया। उसने अपनी घरवाली को (अपनी रानी को) कहा कि जल्दी स्नानादि करके शुद्ध हो जाओ। हम लोगों ने महापुरुषों के पास चलना है क्योंकि इन लोगों में (हिन्दू धर्म मनने वालों में) हम लोगों की अपेक्षा अधिक मर्यादा है, उनका निश्चय है कि महापुरुषों के पास पूर्ण शुद्धता व मर्यादा सहित जाना चाहिए। उन दोनों ने नए वस्त्र पहने बाग में से दूब (एक घास) मंगवा ली। रानी के हाथ में दूब पकड़ा दी तथा अपने हाथ में भी पकड़ ली। अपने गलों में अत्यन्त अधीनता के सूचक हुजूरिए डाल लिए। इस हुजूरिए का तात्पर्य यह होता है कि मैं अपने अहंभाव को छोड़कर अत्यन्त विनम्र भाव व अधीनता के भाव से आपके चरणों में हाजिर हो रहा हूँ। इधर महाराज जी वहाँ से प्रस्थान करने के लिए तैयार हो गए। आपने उस समय नैनीताल, भीमताल जाना था। आप शाम के समय का भोजनादि ग्रहण कर चुके थे। उस समय प्रमुख सेवकों ने विनय की महाराज जी! इस कोठी का मालिक, कोटद्वार का राजा, रमेश कुमार शाहू जो कि इस क्षेत्र का एम. पी. भी है, आपके दर्शन करना चाहता है? महाराज जी ने कहा, उसे आ जाने दो।

उन दोनों को अन्दर भेज दिया गया। दोनों ने अपने हाथ में दूब पकड़ी हुई है तथा उन्होंने अपने-अपने मुँह में भी एक-एक तिनका पकड़ा हुआ है। महाराज जी ने देखा कि ये लोग तो बहुत मर्यादा पुरुष हैं। इन्हें पता है कि जब साधुओं को मिलने के लिए जाया जाता है तो कितनी अधीनगी से जाया जाता है। आपने उनके मुँह व हाथों में घास देखा, उनके गलों में पल्ले डाले हुए देखे तथा यह देखा कि इन्होंने उन पल्लों को हाथों में लेते हुए हाथ जोड़े हुए हैं। महाराज जी ने पूछा, आओ भाई! आप लोग कैसे आए हो?

वे कहने लगे, महाराज जी! भूखे हैं, प्यासे हैं, समुद्र के पास आए हैं।

महाराज जी बोले, कौन सी प्यास है?

कहने लगे, महाराज जी! 25 वर्ष हो गए एक लड़की घर में आई थी, उसके बाद कोई सन्तान नहीं हुई। एक पुत्र की इच्छा है। वैसे हम लोग आपकी कोई सेवा तो कर नहीं सके लेकिन हम लोगों ने आपकी अपरम्पार महिमा को श्रद्धालुजनों के मुख से श्रवण किया है। इसलिए पुत्र की इच्छा को मन में धारण करके आपके दरबार में हाजिर हुए हैं। उस समय महाराज जी गम्भीर हो गए। कुछ क्षण पहले उठने लगे थे लेकिन अब पुनः ठीक से बैठ गए और अपने नेत्रों को बन्द कर लिया।

महाराज जी कहने लगे, आपने पुत्र की प्राप्ति के लिए अब तक कौन कौन से साधन किए हैं? वे कहने लगे, महाराज! जिस किसी ने जो भी कुछ बताया वह सब किया है। अड़सठ तीर्थों पर जाकर विधिपूर्वक स्नान करके मर्यादानुसार दान भी दिया। सन्तजनों की मण्डलियों को बुलाकर जगराते भी करवाए, बहुत से साधुओं के द्वारा प्रार्थनाएं करवाईं। बहुत स्थानों से जैसे हरिद्वार आदि से साधुओं को बुलाया, वे जगराते करते रहे। बहुत बार हमने भण्डारे भी करवाए परन्तु अभी तक वांछित फल की प्राप्ति नहीं हुई है। महाराज जी ने कहा, कोई भजन भी किया करते हो? कहने लगे, हाँ महाराज जी! एक महात्मा ने हमें उपासना करने के बारे में बताया था, वही करते हैं। क्योंकि पहले कर्म होता है, फिर उपासना, उसके बाद ज्ञान होता है और उसके बाद विज्ञान होता है।

महाराज जी कहने लगे, आपने अपना ध्येय किसे बनाया हुआ है?

उन्होंने कहा, महाराज जी! विष्णु जी को।

महाराज जी चुप कर गए उसके बाद बोले, शाहू साहिब! आप वास्तविकता के आस पास ही पहुँच गए हो। थोड़ी सी और मेहनत व थोड़ा सा फेरबदल और कर लो।

वह बोला, जो आपका हुक्म हो, महाराज।

महाराज जी कहने लगे, देखो! फकीर की होती है दुआ, उसे मानना है मालिक ने। तुम ऐसे करो कि शेष सब तो तुम पूर्ववत् ही करते रहो। घंटिया बजाते रहो, भोग लगवाते रहो, आरती उतारते रहो, लेकिन एक परिवर्तन कर लो कि जहाँ पर तुमने विष्णु जी की फोटो रखी है, वहाँ पर श्री गुरू नानक देव जी की फोटो रख लो और कोई भी शंका मत करना। जो भी इच्छा है श्री गुरू नानक देव से मांग लेना। उस समय के बाद उसने उसी प्रकार से वचन का पालन किया। उसने स्वयं मुझे बताया कि मैं गुरू नानक देव जी की फोटो ले आया तथा विष्णु जी की फोटो एक तरफ रख दी। इसके बाद मैं पूर्ण श्रद्धाभाव से आराधना करने लग पड़ा। पूरे दस महीने के बाद उसे पुत्र की प्राप्ति हो गई। वह बहुत ही खुश हुआ क्योंकि पच्चीस साल के बाद उसे सन्तान की प्राप्ति हुई थी। इसके बाद उसने यह पक्का इरादा ही कर लिया कि जितनी देर तक महाराज जी मुरादाबाद में रहेंगे तो उतने दिनों तक उसकी कोठी में ही रहेंगे ताकि सेवा का अवसर उसे ही प्राप्त होता रहे। फिर उसने महापुरुषों को बहुत बार बुलवा कर बड़े-बड़े दीवान लगवाए। इसीलिए गुरवाणी का कथन है -

*ता का संगु बाछहि सुरदेव॥*
*अमोघ दरसु सफल जा की सेव॥* *अंग - 392*

सन्तजनों की जो सेवा की जाती है, वह सफल हुआ करती है, वह कभी भी असफल नहीं हुआ करती है। जब आपने मुझे यहाँ से भेजा तो महाराज जी ने वचन किया था। ब्रह्मवेला था, जिस समय आपका चण्डीगढ़ से प्रस्थान करने का कार्यक्रम था। मैं और तुम्हारे बीजी (सन्त माता रणजीत कौर जी) यानि कि हम दोनों लोग ब्रह्ममुहुर्त में तीन बजे महापुरुषों के कमरे में दाखिल हुए। उस समय आप समाधिस्थ अवस्था में बैठे थे। हम लोगों ने सोचा कि थोड़ी देर बाद तो आपने यहाँ से प्रस्थान कर जाना है। उनका प्यार हमारे हृदय में इतना गहरा बैठ जाता था कि शरीर के परित्याग की तो बात दूर की बात थी, यदि आप आंखों से दूर भी होते थे तो आपके बिछोड़े को सहन करना मुश्किल हो जाया करता था।

उनकी चारपाई के एक पाए के पास मैं बैठ गया और दूसरे के पास यह बैठ गई। ऐसा वैराग्य भाव बहा कि न तो मेरे नेत्र बन्द हो पा रहे थे और न ही इसके नेत्र बन्द हो पा रहे थे। उस समय आप अपने ध्यान में बैठे-बैठे ही बोल पड़े तथा स्वाभाविक रूप से कहने लगे, क्या दान देने से माया घट जाती है? उन्हें यह तो पता था कि हम इसके पास आते हैं और इसकी आमदनी तो कुछ विशेष है नहीं, यह दीवानों का सारा खर्च, कर्ज लेकर करता है। होता यह था कि हम दीवानों के लिए कर्ज ले लेते थे और साल भर में धीरे-धीरे वापिस कर देते थे। जिस दिन कर्ज उतर जाता था तो उसी दिन फिर महाराज जी के पास विनती करने पहुँच जाते थे और महाराज जी हमारी विनय को तुरन्त ही स्वीकार करके कह देते थे कि ठीक है, हम तुम्हारे पास आएंगे। आपने कभी भी मुझे जवाब नहीं दिया था। जिस दिन मैं कहता था, आप उसी दिन आ जाते थे। जब मैं पटियाला में था तो वहाँ भी आप प्रायः आते रहते थे, कितने वर्षों तक आप लगातार ही आते रहे। जब मैं यहाँ पर आ गया तो आप यहाँ पर भी आपने आना शुरू कर दिया। वे सारी बात को जानते थे कि यह कभी भी कुछ मांगता नहीं है। इसने कभी भी कोई चीज मांगी नहीं है। केवल एक चीज तुम्हारे बीजी ने मांगी थी कि बड़े लड़के ने इंजीनियरिंग कालेज में प्रवेश लेना है। कोई पैसा हमारे पास है नहीं। उस समय खर्चा थोड़ा ही हुआ करता था। मैंने अनुमान लगाया कि लगभग बारह हजार रुपयों का खर्च आएगा। महाराज जी कहने लगे, अच्छा फिर तुम्हारे पास बारह हजार रुपया प्रत्येक वर्ष बच जाया करेगा। मैं हैरान था कि हमारे पास बारह हजार कहाँ से बच जाया करेगा? हमारी तो तनख्वाह भी बारह हजार नहीं थी। हमारी तो तनख्वाह भी चार हजार रुपये थी। लेकिन महाराज जी ने वचन कर दिया था। उसके बाद आप सारी परिस्थिति को भांपते हुए कि ये दस बारह वर्ष से सेवा कर रहे हैं और मांगते कुछ भी नहीं हैं। कहने लगे, क्या दान देने से माया घट जाती है? मैंने कहा, महाराज जी, नहीं। महाराज जी कहने लगे, बल्कि माया तो ओवरफ्लो होने लगती है। वचन हो गया कि माया तो ओवरफ्लो होने लग जाती है। लेकिन ओवरफ्लो कैसे होने लगेगी? अगले वर्ष ही आप मुझे कहने लगे, तुम नौकरी को छोड़ दो यह काम तुम्हारा नहीं है। तुम अपने फार्म में जाओ, वहाँ पर नाम का जप करना, लोगों को भी जपाना तथा खेती भी करना। यदि तुम वहाँ पर न गए तो फिर तुम्हें एक क्यारा भी नसीब नहीं हो पाएगा। मैंने कहा, महाराज! आपका वचन तो ठीक है लेकिन मेरी जो सर्विस है वह पैंशन के नजदीक तक पहुँच गई है। महाराज जी कहने लगे, छोड़ो पैंशनों को। तुमने पैंशनों का क्या करना है? तुम अपने फार्म में चले जाओ।

आपने मुझे वहाँ पर भेज दिया। मेरे मुख से सहज स्वभाव ही निकल गया कि महाराज जी! खेती हो भी जाएगी? वे बोले, खेती? सोना उगलेगी तुम्हारी धरती। ये तुम्हारे बीजी कहने लगीं, महाराज जी! दूध भी हो जाएगा? महाराज जी कहने लगे, बीबी! तुम दूध को सम्भाल नहीं पाओगे। मेरे मुँह से निकल गया महाराज जी! वहाँ पर संगत तो है नहीं, वे

तो सारे ही शराब पीते हैं, कोई भी ऐसा नहीं है जो शराब न पीता हो। महाराज जी बोले, तुम संगत की बात करते हो? तुम सम्भाल नहीं पाओगे, इतनी संगत हो जाएगी।

महाराज जी ने तीन वचन लगातार कर दिए। मैं हैरान था कि यह सब कैसे होगा? जब मैं वहाँ पर गया तो महाराज जी के वचन अपना रंग दिखाने लग पड़े। यहाँ कभी मैंने एक हजार रुपया नहीं देखा था। वहाँ पर एक लाख के धान होने लग पड़े। एक लाख की मेरी गेहूँ हो जाती थी। पैसा ही पैसा हो गया, खत्म ही नहीं होता था। लोग कहते थे कि सारा दिन तो यह सत्संग करता है और इसकी इतनी अधिक फसल कैसे हो जाती है? मेरे पास, एक हजार क्विंटल धान हो जाता था और साढ़े आठ सो क्विंटल गेहूँ हो जाता था। महात्मा का वचन होता है और जो उनकी सेवा की गई होती है, वह कभी भी असफल नहीं होती है बल्कि वह सफल ही हुआ करती है।

अतः इस प्रकार के महापुरुषों की जब जाने की बारी आई, क्योंकि यहाँ इस संसार से तो सबको जाना ही पड़ता है –

*जो आइआ सो चलसी*
*सभु कोई आई वारीऐ॥* अंग – 474

तो आपने आज रात्रि के दीवान में ही कह दिया कि भाई आज तुम्हारे पण्डाल के दीवान समाप्त हो गए हैं। सारे लोग हैरान हो गए कि अभी तो कल का दीवान बाकी है, लेकिन महाराज जी ने आज ही कह दिया है कि तुम्हारे इस पण्डाल के दीवान समाप्त हो चुके हैं। लेकिन किसी को यह पता नहीं था कि कल को महापुरुषों के साथ किसी की बात नहीं हो पाएगी।

मैंने उन प्रेमीजनों से पूछा कि आप लोगों ने वचन को सम्भाल लेना था? वे कहने लगे, हमें तो पता ही नहीं लगा कि यह क्या वचन हो गया? और वे देखते ही देखते हाथों में से निकल गए।

*धारना – बखशी मालक टहिल आपणे साधूआं दी।*

*कर जोड़ि नानकु करे अरदासि॥* अंग – 392

महाराज जी कहते हैं कि हम दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हैं, किस सम्बन्ध में करते हैं?

*मोहि संतह टहल दीजै गुणतासि॥* अंग – 392

हे करुणा निधान! गुणी निधान! यदि तुम मेरे ऊपर प्रसन्न हुए हो तो फिर हमें सन्तजनों की सेवा प्रदान कर दो। इस प्रकार महापुरुष चले जाते हैं। ठीक है, हमारी आंखें उन्हें देख पाने में समर्थ नहीं हैं। हमें भी काल खा जाएगा। सारी दुनिया को काल खा जाएगा। धरती व सूर्य को भी काल खा जाएगा लेकिन साधू को काल नहीं खा पाता है।

*धारना – संत तुमारे तुमरे प्रीतम*
*तिन कउ काल न खाते।*

*संत तुमारे तुमरे प्रीतम तिन कउ काल न खाते॥*
*रंगि तुमारै लाल भए है राम नाम रसि माते॥*
अंग – 530

क्योंकि जहाँ पर उनका निवास हो जाता है वहाँ पर काल की पहुँच ही नहीं है।

*धारना – उथे काल दी पहुंच ना बई होवे, जिथे साधू आनबसदे।*

शरीर का परित्याग करने के बाद तथा शरीर धारण करने से पहले साधुओं के निवास का एक विशेष स्थान हुआ करता है, जिसे निश्चल घर कहा जाता है। उसे 'सो-घर' भी कहते हैं।

*सो घरु गुरि ननक कउ दीआ॥* अंग – 186

*सभि सखीआ पंचे मिले गुरमुखि निज घरि वासु॥*
*सबदु खोजि इहु घरु लहै नानकु ता का दसु॥*
अंग – 1291

शब्द की खोज करने के बाद निज घर का निवास मिल जाया करता है। श्री गुरू जी उस घर की कुछ निशानियां बताते हैं –

*सहज सिफति भगति ततु गिआना॥*
*सदा अनंदु निहचलु सचु थाना॥* अंग – 237

जहाँ शाश्वत आनन्द है, वही निश्चल स्थान कहलाता है।

*तहा संगति साध गुण रसै॥*
*अनभउ नगरु तहा सद वसै॥* अंग – 237

उस नगर का नाम अनुभव नगर है।

*तह भउ भरम सोगु न चिंता॥* अंग – 237

वहाँ पर मृत्यु पहुँचती ही नहीं है। मृत्यु की सीमा कहाँ तक है? ये जो कुछ भी तुम्हें दिखाई पड़ता है, यह सब मृत्यु की सीमा के अन्दर है लेकिन आगे एक और जगत है जो कि हमें इन आंखों के द्वारा दिखाई नहीं पड़ता है, वह सूक्ष्म आँखों के द्वारा ही दिखाई पड़ता है। उसे super matter का संसार कहते हैं। उसके अन्दर सारे स्वर्ग लोक हैं, ग्यारह लोक हैं, जहाँ तक बैकुण्ठ धाम है, वहाँ तक काल की पहुँच है, ये सब नष्ट हो जाते हैं लेकिन जहाँ पर साधू निवास करते हैं, वहाँ तक मृत्यु नहीं पहुँचती है।

*उह भउ भरमा सोगु न चिंता आवणु जावणु मिरतु न होता॥*

*तह सदा अनंद अनहत आखारे॥ भगत वसहि कीरतन*

*आधारे॥*

*पारब्रहम का अंतु न पारु॥ कउणु करै ता का बीचारु॥*

*अंग - 237*

श्री गुरू जी ने उसे सच्चखण्ड कहा है -

*कहु नानक जिसु किरपा करै॥*

*निहचल थानु साधसंगि तरै॥* *अंग - 237*

हरियश के आधार पर सन्तजन वहाँ पर रहते हैं -

*तह सहज अखारे अनेक अनंता॥ पारब्रहम के संगी संता॥*

*हरख अनंत सोग नही बीआ॥ सो घरु गुरि नानक कउ दीआ॥* *अंग - 186*

जहाँ पर किसी वस्तु की भी कमी नहीं है, ऐसे स्थान पर महापुरुषों का निवास हुआ करता है। हमारी आँखों से परे हो जाने के कारण हमें प्रतीत होता है कि वे यहाँ से चले गए हैं लेकिन ऐसा निश्चय है कि वे जाया नहीं करते हैं। महाराज जी स्वाभाविक रूप से यह कथन किया करते थे कि ऐ प्रेमीजनो! जब तुम संसार में आए थे तो उस समय संसार हँस रहा था और तुम्हारे चेहरे पर हँसी नहीं थी लेकिन इस संसार में रहते हुए तुम इस प्रकार के कर्म करके जाओ कि तुम तो हँसते हँसते विदायगी लो जबकि संसार रोता हुआ तुम्हें विदायगी दे। संसार, तुम्हारे कर्मों को याद कर करके रोए। यथा-

*कबीर जैसी उपजी पेड ते जउ तैसी निबहै ओड़ि॥*

*हीरा किस का बापुरा पुजहि न रतन करोड़ि॥*

*अंग - 1372*

जो माँ के पेट से जन्म लेकर और आजीवन सही व सुच्चा जीवन लेकर चला जाए तो उसके जीवन का मुकाबिला करोड़ों रत्न भी नहीं कर सकते हैं।

इस प्रकार जिन महापुरुषों की याद में हम लोग बैठे हैं, जो गुरवाणी के हिसाब से मैंने तुकें पढ़ी हैं, एक शबद की व्याख्या हम लोगों ने की है कि सन्तजनों की विशेषताएं क्या होती हैं? आपका जीवन श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की एक-एक तुक के साथ मेल खाता है।

अतः आज के दिन बहुत से प्रेमीपुरुष उनकी स्मृति मनाने के लिए एकत्र होते हैं। बहुत सारे प्रेमीजन राड़ा साहिब जाते हैं। प्रत्येक स्थान पर जहाँ भी उनके प्रेमी हैं, वे उनसे सम्बन्धित स्थानों पर जाकर अपनी उपस्थिति को दर्ज करवाना अपना सौभाग्य समझते हैं।

अब समय अनुमति प्रदान नहीं कर रहा है, अतः अब मैं यहीं पर समाप्ति करता हूँ। धन्यवाद।

*(पृष्ठ 6 का शेष)*

करते हुए प्रेरणा ग्रहण करेंगे। स्वाभाविक तौर पर 'नौ रत्न' पुस्तक जो कि लगातार कई वर्षों से आत्म मार्ग में प्रकाशित हो रही है उनकी श्रंखला भी सन्त महाराज राड़ा साहिब वालों के जीवन के अन्तिम पलों को ब्यान करती हुई प्रस्तुत अंक में चल रही है। सन्त महाराज जी के अन्तिम दिनों में, जब आप इंग्लैंड में प्रचार फेरी के दौरान गए हुए थे और परलोक गमन करने से एक दो दिन पहले जो प्रवचन आप जी ने संगत के साथ शेयर किए थे वे भी इस अंक में आ रहे हैं। उम्मीद है कि संगत को इन प्रवचनों को पढ़कर गुरवाणी के इस सिद्धान्त की रुपमानता होती हुई दृष्टिगोचर होगी कि -

***कबीर जिसु मरने ते जगु डरै मेरै मनि आनंदु ॥***

***मरने ही ते पाईऐ पूरनु परमानंदु ॥ अंग - 1365***

इसके अतिरिक्त श्री गुरू नानक देव के आठवें स्वरूप धन्य श्री गुरू हरि कृष्ण महाराज जी के प्रकाश पर्व भी इसी माह में आ रहे हैं, जिन्हें कि गुरु प्यारी संगत के द्वारा गुरमति समागमों के रूप में मनाया जाना है। उनके जीवन के बारे में भी प्रस्तुत अंक में दिया जा रहा है। आत्म मार्ग संस्था हमेशा इस प्रयास में रही है कि जिस माह में भी गुरू साहिब के प्रकाश पर्व, गुरुगद्दी पर्व तथा ब्रह्मलीन दिवस आते हैं, उनके बारे में अवश्य ही कुछ न कुछ संगत के लिए प्रकाशित किया जाए।

बारहमाहा में प्रत्येक माह के पावन शबद की व्याख्या चल रही है। सन्तजनों के बारे में भी समय-समय पर प्रकाश डाला जाता है। अतः कुल मिलाकर यह संस्था (आत्म मार्ग) हमेशा यही प्रयास व अरदास करती है कि आप समस्त जिज्ञासुजनों के गुरू-प्यार में वृद्धि हो तथा सबको जीवन की तमाम खुशियाँ प्राप्त हों तथा आप सबकी आशीषों की बदौलत है हमें भी आपकी सेवा करने के लिए बल व बुद्धि प्राप्त होती रहे।

अन्त में समस्त श्रद्धालुजनों को सविनम्र विनती है कि रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट के संस्थापक प्यारे महापुरुषों की जीवन संगिनी सम्माननीया बीजी (सन्त माता रणजीत कौर जी) का शत वर्षीय जन्म दिवस, गुरमति समागम के रूप में ट्रस्ट द्वारा समस्त श्रद्धालुजनों के सहयोग से 8 अगस्त को रतवाड़ा साहिब में मनाया जा रहा है। ट्रस्ट के वर्तमान मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी द्वारा समस्त संगत को पहुँचने के लिए विनती की जाती है।

# जिन सतिगुर की आगिआ सति सति करि मानी।।

*सन्त वरियाम सिंह जी*
*संस्थापक वि. गु. रू. मि. चै. ट्रस्ट*

*( श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जुलाई, पृष्ठ - 29 )*

अतः गुरू महाराज जी इस उदाहरण के बारे में श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर इस प्रकार से फुरमान करते हैं कि-

*धारना - नरपति एक सिंघासन सोइआ।*
*सुपने भइआ भेखारी ।*

*नरपति एकु सिंघासनि सोइआ सुपने भइआ भिखारी॥*
*अंग - 657*

राजा, दरबार में बैठा हुआ है, गर्मी का महीना है, खस की टाटियां लगी हुई हैं और अन्दर से बहुत ठंडा वातावरण निर्मित हुआ है। बहुत प्रकार के साधनों के माध्यम से हवा को बहुत ठंडा किया हुआ है। वहाँ पर राजा को नींद आ गई। नींद आते ही उसने एक स्वप्न देखा और स्वप्न में वह भिखारी बन गया।

*अछत राज बिछुरत दुखु पाइआ सो गति भई हमारी॥*
*अंग - 658*

उसका राजभाग छिन गया और अब वह बहुत दुखी हो रहा है। महाराज जी कहते हैं कि इसी प्रकार की दशा हमारी भी हो चुकी है। राजा भी सपने के अन्दर अपनी वास्तविक स्थिति को भूल गया था -

*जिउ सुपनै निसि भुलीऐ जब लगि निद्रा होइ ॥*
*अंग - 63*

कोई ऐसा व्यक्ति है जिसे कि सपने के दौरान यह याद में रह जाए कि मैं अमुक व्यक्ति हूँ? लाखों रुपयों की रकम को सिरहाने रखकर सोया हुआ है और सपना आ जाता है कि चार पैसों की चीज लेना चाहता है लेकिन पैसा मिलता नहीं है और वास्तव में लाखों रुपयों की रकम सिरहाने पड़ी हुई है। गुरू जी कहते हैं कि यही हाल हमारा हो चुका है। हम यह भूल गए हैं कि हम तो आत्मिक शहजादे हैं और इसके स्थान पर स्वयं को साढ़े तीन हाथ का शरीर समझने लग पड़े हैं। इधर कुछ समय के बाद राजा जाग गया लेकिन जागने के बाद दोनों परिस्थितियाँ उसके सामने आ गईं और उसके दिमाग में उसकी सपने वाली स्थिति भी गहराई में चली गई। अब उसने दरबार को बरखास्त कर दिया तथा स्वयं घोड़े पर बैठ कर उस सपने वाली जगह को देखने के लिए चल पड़ा। जब उसने जाकर देखा तो वह ईंटें उसी प्रकार से पड़ी हैं, उन्हें खून भी लगा हुआ है, जहाँ पर वह बैठा था तथा वहाँ लगर भी उसी प्रकार से चल रहा है। अब तो उसका वह भ्रम और भी पक्का हो गया कि यह घटना तो मेरे साथ ही हुई है। उसे अब यह बात समझ में नहीं आ रही है कि मैं जिस तख्त पर बैठा हूँ वह सच्चा है या फिर यह भिखारी वाली अवस्था सच्ची है? वह भय के कारण किसी को बतलाता भी नहीं है कि यह बात सार्वजनिक कर देने से बहुत अधिक बेइज्जती होगी।

ऋषि अष्टावक्र कहने लगा, ऐ ऋषियों व मुनियो! इस राजा को एक भयानक सपना आया था, जिसे कि यह बताता नहीं है, इसलिए यह गुप्त सवाल करता है कि यह सच्चा है कि वह सच्चा है? हमने इसे जवाब दिया है कि यह भी झूठा है और वह भी झूठा है। वास्तव में तो यह जीवन कुछ भी नहीं है यह तो नाशवान है।

गुरू छठे महाराज जी को दिल्ली में, जहाँ पर कि आजकल 'मजनू का टीला' गुरुद्वारा साहिब की इमरात शोभायमान हो रही है, एक फकीर ने पूछा कि हे सच्चे पातशाह जी! गुरवाणी कहती है कि तुम सपने में ही चल रहे हो और सपने में ही जीवन व्यतीत कर रहे हो और दूसरी तरफ एक सपना वह भी है जो कि हमें रात को सपने के बाद आता है तो क्या यह सच्ची बात है? क्योंकि गुरू जी इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

*धारना - जैसा सुपना रैनि का,*
*तैसा संसार।*

*जैसा सुपना रैनि का तैसा संसार ॥ अंग - 808*

गुरू छठे महाराज जी कहने लगे, सन्त जी, देखो! यदि आटा एक सेर है तो वह भी खा लिया जाएगा और यदि आटा दस कुन्तल भर है तो वह भी खा लिया जाएगा। इसी प्रकार से एक सपना केवल एक रात का होता है जबकि एक सपना सारे जीवन का होता है। उसके बाद न कोई बहन, न कोई भाई, न कोई अपना, न कोई बेगाना, न कोई हुकूमत, न कोई गरीबी, न कोई अमीरी, कुछ भी नहीं रह जाती है। इस सपने को पार करके जब आत्मिक स्थिति में प्रवेश कर जाता है तो फिर वहाँ का संसार तो कुछ और ही प्रकार का है, वहाँ की तो बातें ही कुछ और तरह की हैं -

*सुपने सेती चितु मूरखि लाइआ ॥*
*बिसरे राज रस भोग जागत भखलाइआ ॥अंग - 707*

गुरू जी कहते हैं कि जो इस संसार रूपी सपने के साथ अपने चित्त को लगाकर बैठा हुआ है, महामूर्ख है। जब जाग गया तो फिर न राजभाग रहा और न कुछ और ही रहा बस याददाश्त मात्र रह गई –

*आरजा गई विहाइ धंधै धाइआ ॥*
*पूरन भए न काम मोहिआ माइआ ॥*
*किआ वेचारा जंतु जा आपि भुलाइआ ॥*

*अंग – 707*

गुरू जी कहने लगे सन्त जी! यह बड़ा सपना है और वह छोटा सपना है। हैं दोनों ही सपने। सपने को जो राजभाग है, सपने के जो नियम हैं, वे सपने में ही काम आते हैं और इसीलिए सपना सुखदाई रहता है लेकिन जो असली तत्व है वह सपने से ऊपर की अवस्था है। इस प्रकार से अष्टावक्र ने राजा जनक का भ्रम दूर किया कि यह भी सपना है और जिस जीवन को तुम व्यतीत कर रहे हो वह भी सपना ही है, जो बीत चुका है, वह भी सपना ही था। यह जो हमारा जीवन है यह सारा सपना ही है और जो तुमने वह सपना देखा वह रात्रिकालीन सपना था।

उस समय राजा जनक को पूर्ण सन्तुष्टि की अवस्था प्राप्त हुई। अब उन्होंने कहा, महापुरुषो! आप सभी लोग आए हुए हो क्यों न मैं आज गुरू धारण कर लूँ? महापुरुष ( ऋषि अष्टावक्र जी ) मुझे कह रहे हैं कि राजन्! यदि तुम गुरू वाले होते तो तुम्हें आठ वर्षों तक यह दुख भोगना नहीं पड़ना था क्योंकि गुरू ने उसी समय तुम्हें समझा देना था। निगुरा होने के कारण ही तुम्हें आठ वर्षों तक दुखों को भोगने पड़ा लेकिन फिर भी गनीमत यह रही कि तुम सन्त-सेवी थे, इसीलिए तुम्हें इस बात का लाभ प्राप्त हुआ। साधुजनों की सेवा करते रहने के कारण तुम्हारा यह दुख ( सपने की अवस्था वाला ) सपने में ही कटवा दिया अन्यथा तुम्हें यह सब वास्तव में भोगना पड़ना था।

राजन! तुम्हें शायद याद होगा कि तुमने एक जन्म में सन्तजनों के साथ हठ किया था? याद है न? राजा बोला, हाँ, महाराज जी याद है। मैंने यह हठ किया था कि मेरे ऊपर माया नहीं पड़ सकती है। राजन्! माया बहुत अधिक प्रबल होती है, इससे पार पाना बहुत मुश्किल है क्यों व्यक्ति भूल ही जाता है।

राजा कहने लगा, सन्तजनो! मैं अब गुरू धारण करना चाहता हूँ लेकिन मेरी शर्त यह है कि मैंने घोड़े की एक रकाब में एक पैर डालना है, उसका बाद जितनी देर में मैंने दूसरी रकाब में अपना दूसरा पैर डालना है यानि कि चार पाँच सैकंड में जो मुझे ज्ञान करवा दे मैं उसी को अपना गुरू धारण करना चाहता हूँ। सारे सन्तजनों ने अपनी गर्दनें झुका लीं।

राजा ने चन्दन की चौकी बिछा दी कि सन्तजनो! उठो जो भी मेरा गुरू बनना चाहता है वह यहाँ पर आकर बिराजमान हो जाए। सभी एक दूसरे के मुँह की तरफ देखने लग पड़े कि राजा ने यह किस प्रकार की बात कह डाली है। कभी ऐसा भी हुआ है कि आँख के झपकने जितने समय में किसी को ज्ञान हो जाए? पहले तो व्यक्ति को शुभ कर्म करते हुए अपने पापों को दूर करना पड़ता है, जिससे अन्तःकरण निर्मल होता है, उसके बाद फिर उपासना में जाता है यानि कि फिर वह मानसिक सिमरन करता है, मानसिक तौर पर अपने अन्दर प्रवेश करता है। इसके बाद विवेक मण्डल आता है, जिसमें पात्र देखकर महात्मा उस साधक को ज्ञान करवा देते हैं। यदि उसकी विवेक बुद्धि जागृत न हो पाए तो उसे अगला जन्म पुनः प्राप्त हो जाता है क्योंकि महात्मा ने कृपा नहीं की।

दूसरी तरफ राजा कहता है कि मुझे आँख झपकने जितने समय में कोई ज्ञान करवा दे। उसने तीन बार अपने सवाल को दोहराया और कहा कि क्या भारतवर्ष में कोई भी ऐसा विद्वान या महापुरुष नहीं है जो कि मुझे इतने समय में ज्ञान करवा दे तथा मुझे अपना शिष्य बना ले?

उस समय अष्टावक्र पुनः उठा और चन्दन की चौकी की तरफ बढ़ने लगा। राजा जनक बोला, बाल ऋषि! यह चौकी उसके लिए है जो मुझे इतने समय में ज्ञान करवा दे। इस बात को पहले आप भली भांति समझ लो।

बाल ऋषि बोला, राजन्! मैं समझ कर ही आया हूँ आप घोड़ा मंगवा लो। राजा ने घोड़ा मंगवा लिया और अपना एक पैर घोड़े की रकाब में रख लिया। कहने लगा, ऋषि राज अब में चढ़ने लगा हूँ और मुझे रकाब में अपना दूसरा पैर रखने से पहले ज्ञान हो जाना चाहिए।

अष्टावक्र बोला, बिल्कुल ठीक है लेकिन उससे पहले मेरी बात सुनो। तुम मुझे गुरू धारण करने लगे हो और तुमने मुझे अपना गुरू धारण कर लेना है क्योंकि इस घटना को मात्र पाँच-सात सैकंड ही लगेंगे। इसके बाद तुम्हें पूर्ण ज्ञान हो जाना है और उसके बाद कोई पता नहीं है कि तुम जंगल की तरफ चले जाओ या फिर और कुछ करने लग पड़ो। ऐसी परिस्थिति में तुम्हारे सिर पर गुरू दक्षिणा रह जाएगी। इसलिए इससे पहले मुझे गुरू दक्षिणा दे दो।

राजा बोला, हाँ इस बात को तो मैं भूल ही गया हूँ। आप हुक्म करो कि मैं गुरू दक्षिणा में आपको क्या भेंट करूँ? आप अपने मन वांछित दक्षिणा मुझसे ग्रहण करो।

बाल ऋषि ने कहा, जो कुछ भी तुम्हारे पास है वह हमें दे दो। हैरान हो गया कि मेरे पास तो राजभाग भी है, धन भी है, खजाने भी हैं, शरीर भी है अब मैं क्या चीज हूँ?

*'चलता'*

# संतु का मारगु धरम की पउड़ी

*सन्त बाबा हरपाल सिंह जी*

*मनि चाउ भइआ प्रभ आगमु सुणिआ ॥*
*हरि मंगलु गाउ सखी ग्रिहु मंदरु बणिआ ॥*
*हरि गाउ मंगलु नित सखीऐ सोगु दूखु न विआपए ॥*
*गुर चरन लागे दिन सभागे आपणा पिरु जापए ॥*
*अनहत बाणी गुर सबदि जाणी*
*हरि नामु हरि रसु दुख भोगो ॥*
*कहै नानकु प्रभु आपि मिलिआ करण कारण जोगो ॥*
*अंग - 922*

परम सम्माननीय गुरू प्यारी साधु संगत जी! आओ! अपने ख्यालों को बाहर जाने से रोकते हुए अपनी चित्त वृत्तियों को एकाग्र करें तथा अपनी रसना की पवित्रता हेतु सारे ही उच्चारण करो जी सतिनाम वाहिगुरू! गुरू जी की अपार कृपा हुई है जिसकी बदौलत महापुरुषों के जन्म दिवस के सम्दर्भ में गुरमति समागम आयोजित किए गए हैं। वे पल बहुत ही प्यारे होते हैं जो कि उनकी संगत करते हुए व्यतीत हो जाएँ। दरअस्ल महापुरुष की शख्सियत बहुपक्षीय है, उनकी शख्सियत का कोई भी पक्ष ले लें वे प्रत्येक रूप में पूर्ण पुरुष हैं -

*राज महि राजु जोग महि जोगी ॥*
*तप महि तपीसरु ग्रिहसत महि भोगी ॥*
*धिआइ धिआइ भगतह सुखु पाइआ ॥*
*नानक तिसु पुरख का किनै अंतु न पाइआ ॥*
*अंग - 284*

ऐसे महापुरुषों के बारे में गुरवाणी हमें क्या कह रही है? हम बार-बार श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के पास जाते हैं, उन्हें नमस्कार करते हैं क्योंकि वे हमारे इष्ट हैं और हम लोग प्राय: श्री आखण्ड पाठ साहिब भी करवाते हैं क्योंकि -

*बाणी गुरु गुरु है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे ॥*
*गुरु बाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरु निसतारे॥*
*अंग - 982*

जब गुरू ही निस्तारा कर दे तो फिर अन्य कोई प्रमाण क्या दिया जा सकता है। महापुरुषों के चरण जहाँ पर पड़ जाएँ वह धरती भाग्यशाली हो जाती है और दूसरी तरफ -

*जिथै बैसनि साध जन सो थानु सुहंदा ॥अंग - 319*

जहाँ महापुरुषों के चरण नहीं पड़ते हैं वह घर तो श्मशान भूमि ही होता है -

*कबीर जा घर साध न सेवीअहि हरि की सेवा नाहि॥*
*ते घर मरहट सारखे भूत बसहि तिन माहि ॥*
*अंग - 1374*

*कली अंदरि नानका जिंनाँ दा अउतारु ॥*
*पुतु जिनूरा धीअ जिंनूरी जोरु जिंना दा सिकदारु ॥*
*अंग - 556*

जहाँ पर किसी साधू के चरण नहीं पड़ते हैं, जहाँ गुरवाणी नहीं पढ़ी जाती है, वे महल व कोठियाँ किस काम की हैं? अर्थात ये सब तो निरर्थक हैं। दूसरी तरफ नाम रसिक पुरुषों के तो दर्शन भी महान हैं क्योंकि -

*भली सुहावी छापरी जा महि गुन गाए ॥*
*कित ही कामि न धउलहर जितु हरि बिसराए ॥*
*अंग - 745*

*आवै साहिबु चिति तेरिआ भगता डिठिआ ॥*
*अंग - 520*

इन दिनों को मनाने का भी यही प्रयोजन होता है ताकि हम इनके माध्यम से कुछ सकारात्मक प्रेरणाएं ग्रहण कर सकें। इसी श्रृंखला में रतवाड़ा साहिब की पावन भूमि पर उनके जीवन काल में ही उनके जन्म-दिवस मनाना शुरू कर दिया था क्योंकि -

*साध पठाए आपि हरि हम तुम ते नाही दूरि ॥*
*नानक भ्रम भै मिटि गए रमण राम भरपूरि ॥*
*अंग - 929*

नगर धमोट (लुधियाना) की पावन धरती पर जो कि राड़ा साहिब के नजदीक ही है, जत्थेदार करतार सिंह व माता इन्द कौर जी के गृह में महापुरुषों के पावन शरीर का आगमन हुआ। अब 'आगमन' क्यों कहा जाता है। वह इसलिए क्योंकि जन्म लेना और मरना तो हम सबके हिस्से में आया है और इस चक्रव्यूह में हमें अपने कर्मों के बन्धनों के कारण पड़ना पड़ता है जबकि दूसरी तरफ -

*साध पठाए आपि हरि हम ........॥ अंग - 929*

साधुओं को परमात्मा स्वयं ही भेजता है। वह किसलिए भेजता है? वह इसलिए भेजता है कि -

*कबीर सेवा कउ दुइ भले एकु संतु इकु रामु ॥*
*रामु जु दाता मुकति को संतु जपावै नामु ॥*
*अंग - 1373*

ऐसा नहीं है कि महापुरुष कारोबार करते हैं वे तो सब

कुछ छोड़छाड़ कर परमात्मा का ही नाम सिमरन करते हैं। यह बात ठीक है कि उनका जन्म होता है, परिवार का सम्बन्ध होता है -

*जुड़ि जुड़ि विछुड़े विछुड़ि जुड़े ॥*
*जीवि जीवि मुए मुए जीवे ॥*
*केतिआ के बाप केतिआ के बेटे केते गुर चेले हूए ॥*
*अंग - 1238*

आप सबने पहले भी सना ही है कि कभी हरनाम सिंह बनकर आए, कभी गुरनाम सिंह बनकर मौसी के घर गए, कभी इन पहाड़ों पर आप जी बैठे। उस समय आप त्यागी साधू थे और आग की धूनी रमाते थे। अब इन बातों को वे स्वयं तो प्रकट नहीं करते थे। वह तो एक दिन मुगल माजरी वाले उदासी महापुरुष बाबा बलदेव दास जी रतवाड़ा साहिब आ गए। वे उनसे कहने लगे कि आप तो हमारा ही भाईचारा हो। इस प्रकार से यह बात प्रकट हो गई। वास्तविकता भी यही है कि -

*हरि का भगतु प्रगट नही छपै ॥* *अंग - 265*

महात्मा लोग प्रायः रहस्यात्मक बातों को प्रकट नहीं किया करते हैं। लेकिन उन सन्तजनों ने सहज स्वभाव ही वचन कर दिए कि इन पहाड़ियों में बैठ कर आपने इतना तप किया और आप पिछले जन्म में हमारे ही उदासी सम्प्रदाय में से हो। ऐसे महापुरुषों को जन्म दिवस 17 जून को मनाया जाता है। रतवाड़ा साहिब स्थान पर उनका आशीर्वाद प्रकट रूप से परिलक्षित होता है। उन्होंने केवल इस स्थान के माध्यम से ही जन-कल्याण का कार्य नहीं किया अपितु आपने अपने नगर, अपने कुल व अपने समस्त पूर्वजों का भी कल्याण कर दिया क्योंकि -

*कबीर सोई कुल भली जा कुल हरि को दासु ॥*
*जिह कुल दासु न उपजै सो कुल ढाकु पलासु ॥*
*अंग - 1370*

*गुरमुखि कोटि उधारदा भाई दे नावै एक कणी ॥*
*अंग - 608*

तीन वर्ष की अल्पायु में आपने अमृतपान कर लिया इसके बाद कितने ही महापुरुषों का संग आपको हुआ। दरअस्ल आपका घर जत्थेदार जी का घर था, जहाँ पर कि धार्मिक हस्तियों का आना-जाना लगा ही रहता था। आपके दादा जी, स. दयाल सिंह जो तो बड़े ही दयालु स्वभाव के थे और आप तो प्रायः चौराहे पर इसीलिए बैठे रहते थे ताकि वे किसी अतिथि को अपने घर ले जाकर उसे भोजन ग्रहण करवा सकें। ऐसा उनका दैनिक नित्तनेम था, इसके बाद ही आप भोजन ग्रहण किया करते थे। इसीलिए आपके घर में प्रायः कोई न कोई साधू-सन्त आता ही रहता था। बाबा नन्द सिंह जी कलेरां वाले तथा बाबा नन्द सिंह जी पटियाला वालों के साथ आपका अथाह प्यार था। उनके साथ एक सौ पचास महिलाओं का जत्था सदैव रहा करता था। 138 वर्ष की आयु पाकर ही आपका शरीरान्त हुआ। वे ही राड़ा साहिब , दभलान की धरती पर उन्हें लेकर गए। इसी प्रकार से कलेरां वाले महापुरुष आपको अथाह प्यार करते थे। मस्तूआणे वाले महापुरुष सन्त बाबा अतर सिंह जी महाराज जी तो प्रायः आपके खेतों में, जहाँ पर कि कुएँ के पास एक कोठा डाला हुआ था, निवास किया करते थे। रेरू साहिब वाले महापुरुष भी आपके घर में आया करते थे। इसी प्रकार से भाई साहिब भाई रणधीर सिंह जी के साथ आपका अथाह प्यार था। परम सम्माननीया बीजी के पिता जी ( सन्त बाबा हीरा सिंह जी ) को आपने 'सन्त' पद से सम्बोधित किया। उनके बारे में यह मशहूर है कि उन्होंने अपने जीवन काल में किसी भी धार्मिक हस्ती को 'सन्त' पद से सम्बोधित नहीं किया जबकि आपने सम्माननीया बीजी के पिता जी को 'सन्त भाई हीरा सिंह जी दाउदपुरिए' के तौर पर अपनी पुस्तक रंगले सजण में सम्बोधित किया है। आपने आठ साल पहले ही ये दिव्य वचन कर दिए थे कि आपके घर एक लड़के ने जन्म लेना है, और हमारे घर एक लड़की ने जन्म लेना है। वे दोनों ही बहुत पावन आत्माएँ हैं और उन दोनों का पारस्परिक संयोग है। वे इस रिश्ते को भी आठ साल पहले ही पक्का कर गए। इस प्रकार की कुल में महापुरुष प्रकट हुए। इसके बाद पाँचवी कक्षा तक की शिक्षा आपने धमोट स्कूल से ग्रहण की और उसके बाद दसवीं तक की शिक्षा पायल स्कूल से ग्रहण की तत्पश्चात टैलीग्राफी का कोर्स आपने लुधियाना कालेज से किया। आप जी की माता जी भी प्रायः सन्त महापुरुषों के दर्शनार्थ जाया करती थीं। एक दिन आपकी माता जी ने आपको राड़ा साहिब चलने के लिए कहा। दरअस्ल महापुरुषों की ननिहाल मनसूरां में थी, जहाँ पर कि कुलभूषण जी महाराज सेवारत थे, श्री गुरू नानक की ग्यारहवीं अंश बाबा साहिब जी यहीं पर हुए थे और उनके आगे अब सत्रहवीं जगह पर बाबा सरबजीत सिंह जी बेदी ऊना साहिब वाले गद्दीनशीन हैं। दमदमा साहिब भी माता जी जाया करते थे। जाते-जाते माता जी पहले राड़ा साहिब के स्थान पर नमस्कार करके ही जाया करती थीं और सयानी माताएँ प्रायः अपने बच्चों को भी महापुरुषों के पास ले जाया करती हैं। वैसे अपने महापुरुषों का तो बचपन से ही यह स्वभाव था कि जहाँ कहीं से किसी महापुरुष के बारे में पता चलता तो उसी दिशा में आप चल पड़ते थे। आज माता जी आपको राड़ा साहिब लेकर गए आपकी शारीरिक आयु इस समय सोलह वर्ष की थी।

दरअस्ल जो वस्तु अन्यत्र कहीं पर भी नहीं मिलती है

वह वस्तु आज आपको मिलनी है। अब यह वस्तु मिलती कैसे है?

*जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ॥*
*राम नामु संतन घरि पाइआ॥*
*तजि अभिमानु लेहु मन मोलि ॥*
*राम नामु हिरदे महि तोलि ॥ अंग - 283*

वास्तविकता तो यह है कि साधू के पास जाकर सौदा करना पड़ता है, उसके बाद राम के नाम को हृदय में तौलना पड़ता है। हमारा हृदय जो है, वह भावों का, प्यार का देश है और प्यार तो दिल से ही होता है -

*लादि खेप संतह संगि चालु ॥*
*अवर तिआगि बिखिआ जंजाल ॥ अंग - 283*

*संतसंगि अंतरि प्रभु डीठा ॥*
*नामु प्रभू का लागा मीठा ॥ अंग - 293*

*गुर प्रसादि बिखिआ परहरै ॥*
*मन की बासना मन ते टरै ॥*
*इंद्री जित पंच दोख ते रहत ॥*
*नानक कोटि मधे को अैसा अपरस ॥ अंग - 274*

आपकी माता जी आपको राड़ा साहिब ले जाकर महापुरुषों के चरणों के साथ जोड़ देती है। माता जी ने आपको बाँह से पकड़ कर खींच लिया और कहा कि नमस्कार करो -

*करि डंडउत पुनु वडा हे ॥ अंग - 13*

महापुरुषों को नमस्कार करने का बहुत बड़ा फल हुआ करता है क्योंकि -

*पूरब करम अंकुर जब प्रगटे*
*भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ॥*
*मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक*
*जनम जनम की सोई जागी ॥ अंग - 204*

अब महापुरुषों के दिलों के सौदे हो गए। राड़ा साहिब वाले महापुरुषों की तरफ से सवाल आया कि 'तुम कौन हो?' जिस प्रकार से बुल्लेशाह को मुरशद ने पूछा था कि की जाणा मै कौण? स्वयं को पहचानना -

*मन तूं जोति सरुपु है आपणा मूलु पछाणु ॥*
*अंग - 441*

*सुनहु रे तू कउनु कहा ते आइओ ॥*
*एती न जानउ केतीक मुदति चलते खबरि न पाइओ॥*
*अंग - 999*

राड़ा साहिब वाले महापुरुषों का सवाल और आपका जवाब। एक क्षणिक चुप्पी सी छा गई। जब महापुरुषों ने दूसरी बार सवाल किया तो मौजूद संगत भी बोल उठी कि बेटा जी! तुम्हें पूछ रहे हैं बाबा जी? वे तुम्हें यही तो पूछ रहे हैं कि तुम्हारा नाम क्या है? तुम कहाँ से आए हो?

लेकिन महापुरुष तो आन्तरिक बात कर रहे थे। महापुरुष ( वरियाम सिंह जी ) कहने लगे जी मुझे सवाल का उत्तर देना नहीं आ रहा है। वहाँ पर मौजूद सभी लोग हँसने लग पड़े।

राड़ा साहिब वाले महापुरुष कुर्सी पर विराजमान हैं, आपने सबको कहा, खामोश!

चहुँओर चुप्पी छा गई। तीसरा वचन करने के बाद महापुरुष 45 मिनट के लिए पूर्णरूपेण चुप हो गए यानि कि आप समाधिस्थ मुद्रा में चले गए। अब समाधियाँ भी दो प्रकार की होती हैं एक होती है साविकल्प समाधि और दूसरी होती है निर्विकल्प समाधि। निर्विकल्प समाधि में सुरति देश, काल व वस्तु से ऊपर चला जाता है। बाल्मीकि जी की आयु 14 वर्ष की थी और साधुओं ने उन्हें मन्त्र भी उल्टा दे दिया। उन्होंने कहा 'मरा-मरा' कहते रहो और वह कब राम-राम बन गया यह उसे भी पता नहीं चला। तप साधना भी उन्होंने इतनी अधिक की कि शरीर पर दीमक चढ़ गई यानि कि सुरति देश, काल व वस्तु से ऊपर चली गई।

हम सब लोग तो साकार मण्डल में ही फँसे हुए हैं और इससे ऊपर हम लोग उठ ही नहीं पाते हैं लेकिन धन्य हैं ऐसे महापुरुष जिनके दिलों के सौदे हो गए तथा इसके बाद आप राड़ा साहिब वाले महापुरुषों का ध्यान रखकर ही बन्दगी करने लग पड़े क्योंकि -

*आवै साहिबु चिति तेरिआ भगता डिठिआ ॥*
*मन की कटीअै मैलु साधसंगि वुठिआ ॥*
*अंग - 520*

जब तक कोई केन्द्र ही न हो तब तक हम कहाँ पर जुड़ेंगे यदि हम अपने सौरमण्डल पर दृष्टिपात करें तो अपनी धरती, सूर्य से अलग हुई है लेकिन वह उसी के चारों ओर चक्कर लगाती रहती है। चन्द्रमा, धरती से अलग हुआ वह धरती का चक्कर लगाता रहता है। दरअस्ल एक केन्द्र होता है, धुरी होती है। धरती अपने केन्द्र के चहुँओर ही घूमती रहती है। पृथ्वी की इसी गति के कारण दिन व रात बनते हैं। ठीक इसी प्रकार से जब तक व्यक्ति का कोई केन्द्र बिन्दु ही न हो तब तक वह भटकता ही रहता है। क्योंकि उसका जब तक कहीं पर ध्यान ही नहीं टिका तब तक वह कैसे स्थिर रह सकेगा? महापुरुष एक उदाहरण दिया करते थे कि सीधी दीवार के ऊपर कुछ भी नहीं टिकता है लेकिन यदि उसमें खूँटी लगा दी जाए तो उस पर कपड़ा टाँगा जा सकता है। इसी प्रकार से यदि ध्यान में गुरू आ जाए तो ध्यान में टिकाव आ जाता है।

*'चलता'*

# आदर्श माताएँ

## (सम्माननीया माता जी के 100 वर्षीय जन्म दिवस को समर्पित)

विरासत में ही भविष्य का नक्शा बना हुआ होता है। हमारा इतिहास गौरवमयी इतिहास है यानि कि एक अमीर विरासत के साथ हमारा सम्बन्ध है। 'जिना सिंहों व सिहणियां ने धर्मार्थ अपने शीश बलिदान किए' (जिना सिंहां सिहंणीआं ने धरम हेत सीस दिते) इस अरदास में जहाँ पर सिंहों (सिक्खों) का जिक्र आता है, वहीं पर साथ में ही सिक्ख महिलाओं का भी जिक्र आता है। सिसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गुरू-घर में स्त्री का स्थान, बराबरी वाला और किसी सीमा तक विशिष्ट ही आता है। गुरू-घर में जहाँ एक तरफ विभिन्न सामाजिक असमानताओं के बारे में आवाज उठाई गई वहीं पर साथ में ही स्त्री को भी सम्मानयोग्य स्थान का हकदार बनाया गया -

*सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ॥*
*अंग - 473*

गुरू काल में माता तृप्ता जी की गोद भाग्यशाली माँ के रूप में हुई, दाई दौलता को अगम-निगम की समझ करवानी, समस्त मानसिक भूखों से निजात दिलवानी, दर्शनों की झलक के साथ ही मुस्कुराते हुए दर्शन देने, हँसते-हँसते गरीब दौलता को अमीरी प्रदान कर देनी यानि कि दौलता को दौलतमन्द बना देना, सच्ची-सुच्ची रूहानियत न मिटने वाली, न समाप्त होने वाली और दिन-रात चढ़ी रहने वाली सच्ची पातशाही प्रदान कर देनी, चेहरे गरूर प्रदान कर देना।

*जिस नो बखसे सिफति सालाह ॥*
*नानक पातिसाही पातिसाहु ॥ 25 ॥ अंग - 5*

*बसता तूटी झुंपड़ी चीर सभि छिंना ॥*
*जाति न पति न आदरो उदिआन भ्रमिंना ॥*
*मित्र न इठ धन रूपहीण किछु साकु न सिंना ॥*
*राजा सगली स्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना ॥*
*तिस की धूड़ि मनु उधरै प्रभु होइ सुप्रसंना ॥ 7 ॥*
*अंग - 707*

*लख खुसीआ पातिसाहीआ जे सतिगुरु नदरि करेइ ॥*
*निमख एक हरि नामु देइ मेरा मनु तनु सीतलु होइ ॥*
*अंग - 44*

आत्मिक तौर पर कंगाल को राजा बना देना, बहुमूल्य वस्तु आत्मिक ऊँचाई प्रदान कर देनी, ये सब केवल गुरू नानक देव जी की कृपादृष्टि की बदौलत ही हैं। बहिन के रूप में बेबे नानकी जी, जिन्हें बड़ी बहिन की होने के कारण 'बेबे' की उपाधि देते हुए उनके प्रति सम्मानभाव प्रकट किया गया, जिसे कि आज भी उसी सम्मान के साथ याद किया जाता है। माता दौलता जी तथा बेबे नानकी जी, वे पहली शख्सियतों में से हैं, जिनके ऊपर परमेश्वर के साकार रूप श्री गुरू नानक देव जी की कृपा हुई। बेबे नानकी जी का गुरू नानक साहिब के साथ भाई वाला प्यार व सम्मान ही नहीं था बल्कि आप अपने भाई को परमेश्वर रूप ही मानते थे। भले ही शारीरिक आयु के हिसाब से बेबे जी, गुरू साहिब से पाँच साल बड़े थे, फिर भी आप जी ने गुरू नानक देव जी को परमेश्वर स्वरूप ही माना। आप जी का सारा जीवन, आधुनिक पीढ़ी के लिए प्रेरणा-श्रोत है। सांसारिक रिश्तों में बड़ी-बड़ी समस्याओं के जंगल उगे हुए हैं, रिश्तों को सामाजिक मूल्यों का ह्रास व हनन अत्यन्त तीव्र गति से हो चुका है तथा आगे भी हो रहा है। क्लह-क्लेश वाला वातावरण लगभग अधिकांश परिवारों में बना हुआ है। क्या कोई इसका हल है? इन रिश्तों में से प्यार की खुशबू जो समाप्त हो चुकी है क्या वह दोबारा आ सकती है? क्या इन रिश्तों मे से ठंडी हवा बहने लग सकती है और गर्म हवाओं को तिलांजलि दी जा सकती है? प्रत्येक क्षेत्र में और विशेष रूप से पारिवारिक रिश्तों में ख्यालों के टकराव प्रतिदिन पढ़ते जा रहे हैं। जिन रिश्तों को अत्यन्त सम्माननीय समझा जाता था। वे अटूट व अभिन्न रिश्ते भी आज के दिनों में टूट कर चकनाचूर होते देखे गए हैं। क्या मझधार में से पार होने का कोई उपाय है? क्य इन समस्याओं का कोई स्थाई हल ढूँढा जा सकता है ताकि सुख-शान्ति, प्यार व ठंडी हवा की रौ दोबारा इन रिश्तों में से बहने लगे। हमारे बुजुर्ग जो कि व्यवहार के तौर पर सुते सिद्ध साधु स्वभाव ही हुआ करते थे, शायद उनके द्वारा छोड़े गए पतचिन्हों पर चलकर ही हमें इन समस्याओं का इलाज मिल पाएगा। हमें इन समस्याओं का इलाज अपनी विरासत में से ही ढूँढ़ना पड़ेगा। यानि कि

हमें इन समस्याओं का उपचार अपनी विरासत में से ही मिलेगा अन्यत्र कहीं नहीं।

बाबा बन्दा सिंह बहादुर की प्रारम्भिक विरासत जीवन को डांवाडोल कर रही थी। वह राजपूत घराने से सम्बन्धित था। लक्ष्मणदास, माधोदास के रूप में पहले जानकी दास, सन्त रामदेव का चेला, फिर औघड़नाथ का चेला, पहले बैरागी फिर सन्यासी, फिर तान्त्रिक इन पड़ावों में से आपका जीवन गुजरा लेकिन जब समर्थ गुरू की कृपा हुई तो फिर यह लक्ष्मणदास तथा माधोदास से 'बन्दा' बन गया। बन्दा किसका बना? बन्दा बना साहिब-ए-कमाल श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी का और आपका नाम पड़ा बाबा बन्दा सिंह बहादुर। एक बड़ी विरासत का पथिक बन गया। गुरू जी का आशीर्वाद प्राप्त करके एक बड़ी विरासत हिस्सा होते हुए, स्थापित विरासत की दीवारों को इतना सुदृढ़ बना दिया कि खालसा राज्य की स्थापना हुई। भाव यह है कि विरासत में से ही पतचिन्हों की तलाश करनी पड़ती है। आओ! अपने चल रहे विषय की तरफ आएँ कि माता तृप्ता जी, बहिन के रूप में बेबे नानकी जी तथा गुरू के महिल (धर्म सुपत्नी) के रूप में माता सुलक्खनी जी। इसके बाद दूसरी ज्योति के समय गुरू के महल (धर्म सुपत्नी) के रूप में माता खीवी जी, लंगर के इंचार्ज बन कर असंख्य सेवाएँ गुरू घर में निभाईं। अनेकों प्रकार की सेवाएँ दस गुरू साहिबानों तक तथा बाद में अब तक निभाई जा रही हैं।

*बलवंड खीवी नेक जन जिसु बहुती छाउ पत्राली ॥*
*लंगरि दउलति वंडीऐ रसु अंम्रितु खीरि घिआली ॥*
*अंग - 967*

इन महान आत्माओं का वर्ग विभाजन विद्वानों ने इस प्रकार से किया -

1) गुरू साहिब की माताओं यानि कि जननियों के रूप में

2) गुरू के महलों (धर्म सुपत्नियों) के रूप में

माता सुलक्खनी जी, माता खीवी जी, माता मनसा देवी जी, बीबी भानी जी, माता गंगा जी, माता दामोदरी जी, माता नानकी जी, माता महोदवी जी, माता किशन कौर जी, माता गुजरी जी, माता सुन्दरी कौर जी, माता जीतो जी तथा माता साहिब देवा जी।

3) गुरू साहिबान की पुत्रियों के रूप में - बीबी अनोखी जी, बीबी अमरो जी, बीबी दानी जी, बीबी भानी जी, बीबी वीरो जी।

4) बहिनों के रूप में - बेबे नानकी जी, बीबी वीरो जी, बीबी रूप कौर जी।

5) पुत्रवधुओं के रूप में - बीबी पंजाब कौर जी।

6) गुरू घर को प्रेम करने वालियों के रूप में - माता सभराई जी, बीबी कौला जी, बेगम नूरजहाँ जी, माता भागो जी, माता सुलक्खनी जी तथा अन्य अनेकों।

7) गुरू घर की असंख्य शहीद सिंहनियों के रूप में

8) पंजाब की रानियों के रूप में - रानी सदा कौर महारानी महिताब कौर, रानी चन्द कौर जी, महारानी जिंदां, शहजादी बीबी जिन्दा, रानी साहिब कौर।

9) पंजाब की बहादुर महिलाओं के रूप में - बीबी अनूप कौर, बीबी सुशील कौर, बीबी दीप कौर, बीबी बलजीत कौर, बीबी निर्भय कौर आदि।

इन समस्त शख्सियतों के सारे जीवन प्रेरणा के श्रोत हैं। आवश्यकता है इन रिश्तों का अध्ययन करके, इनकी विचार करके, आज के समय में अपनी विरासत के पतचिन्हों की तलाश करने की। यदि हम इन पृथक-पृथक रूप में आए हुए रिश्तों की निशानदेही की पहचान करके इन्हें ध्येय बनाकर चलेंगे तो आज के खण्डित परिवार अवश्य ही सुख शान्ति, प्यार तथा प्राचीनता वाले माहौल की झलक का सृजन कर सकते हैं और खण्ड-खण्ड हो चुकी रिश्तों की पहचान को जोड़ सकते हैं तथा फिर श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के सिद्धान्त पर चलकर आनन्दमयी जीवन जी सकते हैं। ये सम्माननीय महिलाएँ हमारा रोल माडल हैं, हमारे आदर्श स्वरूप हैं। आने वाले समय में 'आत्म मार्ग' संस्था द्वारा इन सम्माननीया महिलाओं द्वारा सिक्ख धर्म में पाए गए योगदान के बारे में लेख शुरू करने का विचार है। इन महान महिलाओं द्वारा समय-समय पर जननी, पुत्री, बहिन तथा धर्म सुपत्नियों के रूप में निभाए गए फर्जों के बारे में संगत की सेवार्थ प्रकाश डाला जाएगा।

प्यारे महापुरुषों की जीवन संगिनी (परम सम्माननीया माता रणजीत कौर जी) को भी विरासत में से ही रूहानियत प्राप्त हुई। आप जी के माता जी तथा पिता जी, भाई साहिब भाई रणधीर सिंह जी की संगत व सानिन्ध्य का रसास्वादन किया करते थे। इस विरासत का शिखर उस समय दृष्टिगोचर

*(शेष पृष्ठ 46 पर)*

# बतीह सुलखणी सचु संतति पूत।।
# आगिआकारी सुघड़ सरूप।।

## ( सम्माननीया माता जी के 100 वर्षीय जन्म दिवस को समर्पित )

*प्रो. जसमेर सिंह*

अनन्तथा के पर्दे को, अपने उग्र तप के द्वारा प्राप्त की हुई दिव्य दृष्टि के माध्यम से वेधते हुए गुरु प्यारे सन्त हीरा सिंह जी ने लगभग सन् 1909-10 ई. में धमोट नगर में सन्त वरियाम सिंह महाराज जी के माता-पिता को इस प्रकार से सम्बोधन किया - श्री आखण्ड पाठ साहिब जी को दौरान आप सबने अत्यन्त हार्दिक रूप से सेवा की है। मेरा मन करता है कि तुम्हारी सेवा का फल इस जन्म में तुम्हें प्रदान कर दें। गहरी सोच-विचार के बाद उन्होंने एक चाँदी का रुपया बाबा जी के पिता जी को देते हुए कहा, सरदार जी! तुम्हारे घर एक बालक ने जन्म लेना है और मेरे घर एक बालिका ने। वाहिगुरु जी की तरफ से उनका दरगाह से ही संयोग लिखा हुआ है और मेरी गवाही है।

ईश्वर के नाम से ओत प्रोत सन्त हीरा सिंह जी के शबद हमें प्रचान भारतीय ऋषियों-मुनियों की याद दिलवाते हैं जो कि हजारों वर्ष पहले ही भविष्यत वचन कर दिया करते थे कि आने वाले समय में ऐसा होगा।

जब प्रभु जी द्वारा निर्धारित समय आया तो वह लड़की, जो सन्त हीरा सिंह जी के घर पैदा हुई, का नाम रणजीत कौर रखा गया। बाद में आप सन्त वरियाम सिंह महाराज जी रतवाड़ा साहिब वालों की जीवन संगिनी बने। सन्त वरियाम सिंह महाराज जी वही बालक थे, जिन्होंने सरदार करतार सिंह जी के घर जन्म लिया और वह सरदार करतार सिंह जी का ही घर था, जहाँ बाबा हीरा सिंह जी ने श्री आखण्ड पाठ साहिब के समय उपर्युक्त भविष्य वाणी की थी।

माता रणजीत कौर जी का जन्म 8 अगस्त, 1918 ई. को ग्राम दाऊदपुर, खन्ना के नजदीक हुआ था तथा सन्त बाबा वरियाम सिंह महाराज जी का जन्म 17 जून, 1918 ई. को धमोट नगर में हुआ, जहाँ पर कि तत्कालीन प्रचलित रीति-रिवाजों के अनुसार बच्चों का विवाह छोटी आयु में ही कर दिया जाता था।

विवाह का दूसरा पड़ाव, जो कि पहले की अपेक्षा छोटा होता था उसे 'मुकलाबा' 'गौना' कहा जाता था और यह उस उम्र में पहुँच कर किया जाता था जबकि यह विश्वास हो जाए कि लड़की व लड़का शारीरिक व मानसिक रूप से परिवक्व हो गए हैं तथा वे विवाहित जीवन के बन्धन को समझ चुके हैं एवं इस बन्धन के प्रत्येक उत्तरदायित्व को उठाने के योग्य हो चुके हैं, यानि कि वे सफल माता-पिता बनने के योग्य हो चुके हैं।

'आत्म मार्ग' में एक संक्षिप्त ब्यौरा देते हुए माता जसवन्त कौर जी जो कि बाबा जी के बड़े बहिन जी थे, इस प्रकार से लिखते हैं जब सन्त वीर जी की बचपन में शादी हुई तो आपके सिर पर रेशमी चीरे की पगड़ी सजाई गई, जिसे आप वापिस आते समय सिर पर बार-बार सजाते ही रहे क्योंकि यह रेशमी चीरा सिर पर ठहरता ही नहीं था और फूलों से भी कोमल फूल जैसी उद्यम कौर यह सब देखकर पुलकित होती रही और सभी परिजनों ने गोद में लेकर इन्हें प्यार किया तथा खुशियाँ मनाईं मुकलाबे ( गौने ) के बाद धमोट में, जो कि बीजी की ससुराल थी, आकर स्थाई निवास किया।

बीजी की ससुराल, उनके पैतृक घर से अधिक दूर नहीं थी, इसलिए उनकी इष्ट-उपासना व खान-पान अथवा पहरावे में कोई परिवर्तन नहीं आया। माता-पिता के घर का सामीप्य, यानि कि कुछ ही मीलों की दूरी उनके लिए एक वरदान ही साबित हुई।

9 माघ सन् 1936 को सन्त बाबा ईशर सिंह महाराज जी राड़ा साहिब वालों के साथ एक अनोखी मिलनी के बाद, बाबा जी, बाबा अतर सिंह महाराज मस्तूआणे वालों के ब्रह्मलीन दिवस की पावन स्मृति पर आयोजित गुरमति समागम में हाजिरी भरने के लिए 19 माघ को मस्तूआणे पहुँचे। उसके बाद दो महीनों तक लगातार आप सन्त शमशेर सिंह

कमालपुर वालों के पास ही रहे। वहाँ से चलकर 'चीमा' में सन्त तेजा सिंह जी डबल एम.ए. को मिले तत्पपश्चात आप मानसा के पास 'जवाहर के' सघन वन में जाकर तपस्या के लिए बैठ गए जो कि बबूल के पेड़ों से भरा पड़ा था।

इसी वर्ष भावार्थ सन् 1936 ई. में ही जून के माह में बाबा ईशर सिंह महाराज जी के दीवान धमोट गाँव में ही लगे जो कि बाबा जी का ही गांव था तथा राड़ा साहिब से अधिक दूरी पर भी नहीं था।

दीवानों के दूसरे दिन, कुर्सी वाले समय श्रीमती रणजीत कौर जी सन्त महाराज जी के दर्शनार्थ आए। बाबा ईशर सिंह जी महाराज ने पूछा -

वरियाम सिंह कहाँ है?

अश्रुपूरित आँखों के द्वारा उन्होंने धीमे स्वर में कहा, महाराज जी, मुझे तो कुछ पता नहीं है। राड़ा साहिब में आपको मिलने के बाद मुझे पता नहीं कि वे कहाँ चले गए हैं।

श्रीमती रणजीत कौर जी की दयनीय हालत को देखकर सन्त महाराज जी ने कहा, कोई बात नहीं, शाम तक वह यहीं आ जाएगा।

दूसरी तरफ नवयुवक वरियाम सिंह के दिल में समुद्र जितनी बड़ी तरंग उठी और उसका मन किया कि वह उड़कर राड़ा साहिब पहुँच जाए लेकिन कोई भी सैकड़ों मील दौड़ कर नहीं पहुँच सकता है।

जल्दी-जल्दी आप उस सघन वन से बाहर निकले और सीधे मानसा रेलवे स्टेशन पहुँच गए, टिकट खरीदी और 12 बजे वाली गाड़ी पर सवार हो गए। जाखल और धूरी निकलने के बाद आप कुप रेलवे स्टेशन पर उतर गए तथा मलौद के रास्ते शाम को धमोट गाँव पहुँच गए। रास्ते में उन्हें अपने गाँव दीवान लगने की सूचना प्राप्त हो चुकी थी। इसलिए अपने घर पहुँचने से पहले आप सीधे ही दीवान स्थान पर पहुँच गए। दीवान की समाप्ति के बाद बाबा जी, सन्त बाबा ईशर सिंह महाराज जी के साथ सैर पर निकल पड़े। बाबा ईशर सिंह महाराज जी ने पूछा - आप कहाँ गए थे?

महाराज जी! जवाहर के

तुम्हारी धर्मपत्नी आज बहुत ही उदास हो गई प्रतीत हो रही थी।

तुम्हें यह याद रखना चाहिए कि तुम्हारी एक अर्द्धांगिनी भी है जिसकी देखभाल व गुजारे का प्रबन्ध भी तुम्हें करना चाहिए।

अपने सगे सम्बन्धियों को बिना बतलाए चुपचाप अनजाने स्थानों पर मत जाया करो। ऐसा करने पर तुम्हारी धर्मपत्नी को बहुत दुख पहुँचता है।

फिर एक बार बाबा ईशर सिंह महाराज जी बाहर सैर पर जा रहे थे। थोड़ी दूर पीछे बाबा वरियाम सिंह जी अपने हाथ में जल का भरा हुआ लोटा लेकर चल रहे थे। गुरुद्वारे से एक मील दूर, जहाँ पर आस पास कोई भी नही था, सन्त महाराज जी ( बाबा ईशर सिंह महाराज जी ) एकदम रुक गए और अपनी छड़ी पर बोझ देकर आगे की तरफ थोड़ा सा झुककर खड़े हो गए। आप बाबा वरियाम सिंह जी को टकटकी लगाकर देख रहे थे जो कि युवावस्था के शिखर पर थे। शायद महाराज जी उनके भविष्य को देख रहे थे और उसे योजनाबद्ध भी कर रहे थे।

इस समय बाबा ईशर सिंह महाराज जी कुछ भी नहीं बोले, बस टिकटिकी लगाकर युवावस्था वाले वरियाम सिंह जी को देखते रहे। थोड़े पलों की चुप्पी के बाद जो अनन्त चुप्पी से आई हुई प्रतीत हो रही थी, युवा वरियाम सिंह जी बहुत ही सम्मान सहित बोले - महाराज जी! आप कुछ कहना चाहते हो?

क्या तुम मेरा कहना मानोगे?

जी महाराज! आप केवल हुक्म करें।

क्या कोई इस प्रकार का पिता है जो कि अपने पुत्र को प्रचंड धधकती हुई ज्वाला में फेंक दे?

शायद बाबा वरियाम सिंह जी ने सिर भी हिलाया होगा कि इस प्रकार का पिता तो कहीं भी नहीं मिलेगा।

मैं कुछ ऐसा ही कर रहा हूँ। प्यारे बेटा जी! तुम अपने घर चले जाओ और एक गृहस्थी के कर्तव्यों का निर्वाह करो। तुम्हारी धर्मपत्नी एक दृढ़ इरादे वाली महिला है। वह अत्यन्त श्रद्धाभाव व निष्ठा वाली है। वह गुरु नानक महाराज जी के घर के लाखों श्रद्धालुजनों के उद्धार का साधन बनेगी। मैं तुम्हें, तुम्हारे शादीशुदा जीवन के कर्तव्यों से मुक्त भी कर सकता हूँ, लेकिन यह तुम्हारे व तुम्हारी धर्मपत्नी के साथ अन्याय होगा।

बाबा ईशर सिंह महाराज जी के वचन मान कर आप जी ने अपने घुमक्कड़ तरीके को तिलांजलि दे दी और एक जगह पर पक्के तौर पर रहना शुरू कर दिया।

भले ही आप नवाबशाह सिन्धु में बाबा जी गए तो

नौकरी की तलाश में ही थे, पर वहाँ पर पहुँच कर उन्होंने गुरु नानक देव महाराज जी की सिक्खी का प्रचार शुरू कर दिया तथा 60 कि. मी. के अर्द्धब्यास वाले क्षेत्र में इसकी गूँज पड़ने लग पड़ी जहाँ पर नए आबादकार बस रहे थे। कुछ समय के लिए आपने मोहन सिंह कोका कोला वालों के पास भी काम किया। फिर 14-04-1941 में सैकंड पटियाला लैंसर्ज में राजा बरिन्दर सिंह ने इन्हें भर्ती कर लिया, जो कि स्वयं फर्स्ट पटियाला लैंसर्ज में कर्नल के पद पर कार्यरत थे।

जाहिर है इन समस्त गतिविधियों में तथा जो काम काज बाबा जी ने सम्भाले व किए उनमें बीजी की मूक सहमति थी।

1 जून 1945 को सरदार मनजीत सिंह का जन्म हुआ जो कि आपका बड़ा पुत्र था लेकिन बीजी का स्वास्थ्य नाजुक स्थिति में था। आप थोड़ी-थोड़ी देर बाद बेहोश हो जाते थे। पटियाला से वापिस आकर बाबा जी राड़ा साहिब से अमृत जल लेकर आए जिसे ग्रहण करके बीजी की हालत पूर्णतः दुरुस्त हो गईं।

बाबा जी के छोटे भाई दलजीत सिंह चौबीस वर्ष की अल्पायु में 1 जनवरी सन् 1952 को गुरुपुरी सिधार गए, जिसकी वजह से परिवार के सारे सदस्यों के जीवन में एक रुकावट सी आ गई। गहरी मानसिक उलझन तथा पीड़ा का दौर भी आया जिसकी तीव्रता बाबा ईशर सिंह महाराज जी राड़ा साहिब वालों से दूरी होने के कारण और भी गहरी हो गई।

जून 1953 में बीजी तथा बाबा जी, बाबा ईशर सिंह महाराज जी के पास आए। पिता वाला प्यार प्रकट करने के बाद, बाबा जी ने अपने दस्त-ए-मुबारक दोनों के सिरों के ऊपर रख दिए तथा कहा, पहले से ही आपके ऊपर कृपा की झड़ी लगी हुई है, अब मेहनत करो बख्शीश भी हो जाएगी। जैसे ही सन्त महाराज जी ने अपने मुबारिक कर कमलों को उनके सिरों पर रखा वैसे ही उनका अन्दर रौशनी से जगमगा और सारा अन्धकार रफूचक्कर हो गया। उनके उदास दिलों में श्रद्धा व आशाओं का अमृत भर गया।

पैपसू का पंजाब के साथ विलय हो जाने के बाद जुलाई 1956 ई. में बाबा जी की बदली जालन्धर की हो गई। उनके अन्य सहकर्मी भी पृथक-पृथक शहरों जैसे शिमला, चण्डीगढ़ व आदि में हो गई। उस समय बाबा जी पुनर्वास विभाग में सेवारत थे। जब इस बदली के बारे में बाबा जी ने सारी वार्ता सन्त ईशर सिंह महाराज जी को बतलाई तो उन्होंने बाबा जी को श्री गुरु नानक देव महाराज जी की वह साखी सुनाई जिसमें श्री गुरु जी उन लोगों को तो आशीर्वाद देते है कि 'बसते रहो' जिन्होंने उनकी कोई सेवा व सम्मान नहीं किया, दूसरी तरफ उन लोगों को कहते हैं कि 'उजड़ जाओ' जिन्होंने उनकी खूब सेवा व सम्मान किया था।

बाबा ईशर सिंह महाराज जी ने पावन हुक्म किया कि यह समय उनके लिए बिखर जाने का ही है। शायद इसी प्रकार से भक्ति की सुगन्ध पृथक-पृथक स्थानों पर फैल सकती है। इस अर्से के दौरान भी बीजी तथा बाबा जी को जब भी समय मिलता व दभलान तथा राड़ा साहिब में अपनी उपस्थिति अवश्य ही दर्ज करवाते।

वाहिगुरु जी के हुक्मानुसार बाबा ईशर सिंह जी के प्यार वाली संगत चण्डीगढ़ में सन् 1960 ई. में पुनः एकत्र हो गई। बाबा जी ने सन्त बाबा ईशर सिंह महाराज जी के कई दीवान गुरुद्वारा साहिब सैक्टर 19 चण्डीगढ़ में भी लगवाए जो कि उस समय निर्माणाधीन था। बाबा ईशर सिंह महाराज जी परोपकार की मूर्ति थे। आपको जो भी चढ़ावा मिलता उसे आप गुरुद्वारा साहिब को ही भेंट कर देते थे। दीवानों पर हुए खर्च का भुगतान करने के लिए बीजी तथा बाबा जी उधार उठा लेते थे। जब वह अदा हो जाता तो आप सन्त बाबा ईशर सिंह महाराज जी के पास पुनः दीवान लगाने के लिए विनती करने के लिए पहुँच जाते। इन दीवानों में बीजी सन्त बाबा ईशर सिंह जी का तथा अन्य संगत की सेवा अपने हाथों से ही किया करते थे तथा अपने आराम व स्वास्थ्य की तनिक भी परवाह नहीं करते थे।

जुलाई 1966 ई. में बाबा जी अपने सारे परिवार समेत बाबा ईशर सिंह महाराज जी के दर्शनार्थ राड़ा साहिब पहुँचे। इस समय बीजी को सन्त महाराज जी के आगे, अपनी दयनीय आर्थिक स्थिति को रखने का अवसर प्राप्त हो गया।

यह सारी वार्ता सुनकर थोड़े सम्भीर होकर बोले चण्डीगढ़ में नौकरी छोड़ दो तथा यू.पी. में अपने फार्म पर चले जाओ। अकालपुरुष तुम्हारी बाँह पकड़ेगा तुम्हारी उपस्थिति में तुम्हारी जमीन सोना उगलेगी।

बाबा जी ने कहा, महाराज जी! खेती का तो हमें क, ख, ग भी नहीं आता है।

महाराज जी बोले, अपने आप खेती आ जाएगी।

फिर कुछ विचार करके बीजी ने विनती की, दाता जी! क्या परिवार में दूध भी होगा?

महाराज जी बोले, इतना होगा कि तुम्हें सम्भालना मुश्किल हो जाएगा।

बाबा ईशर सिंह जी का हुक्म मानकर तथा इस वरदान को लेकर बाबा जी तथा बीजी यू.पी. की तरफ रवाना हो गए। सन् 1966 ई. में उन्होंने पंजाब सिविल सचिवालय वाली नौकरी को भी तिलांजलि दे दी तथा रामपुर यू.पी. की तरफ अपनी दिशा मोड़ ली। बाबा ईशर सिंह महाराज जी इस कहावत 'खेती खसमा सेती' की सच्चाई को भली प्रकार से जानते थे अर्थात खेती को तो किसान स्वयं ही कर सकता है। दूसरे लोग उसके लिए वह मेहनत नहीं कर सकते जो कि वह स्वयं कर सकता है। आप जी का अथक परिश्रम सफल हुआ, गुरु जी की कृपा हुई। थोड़े समय में ही आप जी ने अपने लिए घर बना लिया तथा खेती के लिए सारे प्रबन्ध कर लिए, फलस्वरूप बहुत कम समय में ही आप जिले के उन्नत किसानों की श्रृंखला में जा खड़े हुए। घर में दूध की बहुलूता हो गई। अब बीजी प्राय: शिकायत करते रहते कि दूध न तो उन्हें इतना उलझा दिया कि वे चाह कर भी एक दिन के लिए भी घर से बाहर नहीं जा सकते हैं और फिर दूध का कार्य बहुत ही थका देने वाला था।

लगभग दो वर्ष बाद सितम्बर 1968 में बाबा जी सन्त ईशर सिंह महाराज जी को मिलने के लिए आए तथा सविनम्र विनती की, महाराज! आप वचन करो कि मेरा कृषि फार्म बिक जाए। तराई क्षेत्र में तो सिक्खी का नामोनिशान नहीं है। कई प्रचारक तथा ग्रन्थी भी शराब पीकर श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी की वाणी का श्री आखण्ड पाठ साहिब करते हैं। पशुओं की चोरी करना, लोगों को मारना, सुपारी लेकर लोगों को मारना आदि अपराधों को बुरा नहीं समझा जाता है। बाबा ईशर सिंह महाराज जी ने बड़े ध्यानपूर्वक उनकी बातों को सुना और कहा फार्म को मत बेचो। तुम्हारी इतनी बड़ी संगत हो जाएगी कि तुम इसे सम्भाल नहीं सकोगे। मैं भी भविष्य में कभी-कभी संगत के दर्शन करूँगा। सन्त महाराज जी के इस वचन के बाद बाबा जी ने सन् 1969 ई. में श्री गुरु नानक देव जी के पाँच सौ वर्षीय शताब्दी समारोह के समय पाँच सिहों का साथ लेकर श्री गुरु ग्रन्थ साहिब के सन्मुख अरदास करके गुरमति प्रचार का बीड़ा उठाया।

बाबा जी के साथ, ज्ञानी हरिन्दर सिंह, भाई सुरिन्दर सिंह तथा कुछेक अन्य प्रेमीजन एकत्र हो गए तथा जोर-शोर से सिक्ख धर्म का प्रचार कार्य शुरू कर दिया। बाबा जी ने अपना ट्रैक्टर-ट्राली लिया तथा प्रत्येक गाँव में जाना शुरू कर दिया तथा श्री गुरु महाराज जी की शिक्षाओं को उनके घरों के अन्दर पहुँचा दिया जहाँ कहीं आप जीप के द्वारा जा सकते थे, वहाँ पर आप जीप के द्वारा जाते अन्यथा आप ट्रैक्टर-ट्राली लेकर ही प्रचार कार्य करते और कई बार तो आप साइकिल या पैदल भी जाते। धीरे-धीरे संगत व प्रेमीजन बढ़ने लगे तथा बढ़ते-बढ़ते हजारों की संख्या में चले गए। कल के ठग, सीना-जोरी करने वाले, धाड़वी, सुपारी किलर, पशु चोर आज पक्के श्रद्धालु सिक्ख बन चुके थे। बाबा जी की मसीही अनुवाई में शराब पीने वाले, नशों का परित्याग करके गुरुमुख प्यारे बन गए अर्थात शनै:-शनै: सिक्खी के गुणों के धारक ये सारे प्रेमीजन श्री गुरु गोबिन्द सिंह महाराज जी के खालसे की फौज बन गए।

यू.पी. में निवास के दौरान दरपेश मुश्किलों के समय बीजी, बाबा जी के कन्धे के साथ कन्धा मिलाकर डटकर खड़े रहे तथा बाबा जी के लिए सारी आवश्यक वस्तुएँ मुहैया करवाते हुए आप घरेलू काम-काज की सारी ड्यूटियाँ निभाते तथा बाबा जी के साथ दीवान लगाने जाते। प्रचार में लगाई सख्त मेहनत का फल मिलने लग पड़ा। संगत इतनी बड़ी हो गई कि उसे सम्भालना मुश्किल हो गया। बाबा ईशर सिंह महाराज जी के वचन सत्य साबित हो गए थे।

जब बाबा जी की विनती की स्वीकार करके जनवरी सन् 1973 ई. में बाबा ईशर सिंह महाराज जी तराई क्षेत्र में गए तो वे लोगों के जोश, प्यार व श्रद्धाभाव को देखकर बहुत हैरान हुए। सारी संगत जोर-शोर से बाबा महाराज जी के पीछे-पीछे शबदों को ऊँची-ऊँची आवाज में गा रही थी। बाबा ईशर सिंह महाराज जी के पावन मुखारविन्द से यह पावन वचन सहज स्वभाव ही निकले कि भाई यह तो नया पंजाब है। संगत यहाँ पर भी जोर-शोर से पंजाब की भांति ही गाती है।

सन् 1975 ई. में बाबा ईशर सिंह महाराज, राड़ा साहिब वालों के लन्दन में अचानक ही ब्रह्मलीन होने की घटना, बीजी व बाबा जी के लिए एक बहुत बड़ा सदमा सिद्ध हुई। इस दुख से उबरते-उबरते आपको कई वर्ष लग गए। शायद इस परम दुखान्त ने ही यू.पी. से वापिसी का आपका मन बना दिया। अत: आप सन् 1978 ई. में अपना फार्म बेचकर चण्डीगढ़ आ गए।

चण्डीगढ़ पहुँच कर बाबा जी ने सैक्टर 34 में किराए पर एक घर ले लिया तथा अपना मिशन स्थापित कर लिया,

जिसे कि विश्व गुरमति रूहानी मिशन का नाम दिया। कुछेक संस्थाओं के साथ विचार-विमर्श करने के बाद, बाबा जी ने उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रयास करने शुरू कर दिए, जिसके लिए कि वे चण्डीगढ़ आए थे और वह उद्देश्य था - गुरवाणी में निहित गुरमति की सच्ची व सुच्ची शिक्षाओं का प्रचार। बीजी इन दीवानों में बड़े ही चौकन्ने व सावधान रहते जो कि चण्डीगढ़ के आस पास के गाँवों में लगाए जाते थे। यह क्षेत्र बाबा जी के लिए पूरी तरह से कोई नया क्षेत्र नहीं था क्योंकि सन् 1960 से लेकर सन् 1966 ई. तक पंजाब सिविल सचिवालय में सेवारत रहते हुए आप कभी-कभी क्षेत्र के गाँवों में निकलते और इस प्रकार से आपने अपने आपको इन लोगों की इच्छाओं, हसरतों, रीति-रिवाजों तथा आम जीवन के बारे में और यहाँ तक कि इनकी उपबोली के साथ भी भिज्ञ करवाया था। अब बीजी तथा बाबा जी की संयुक्त प्रचार मुहिम नई ऊँचाइयों को छूने लग पड़ी और इसमें एक नई तीव्रता आने लग पड़ी। अब इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए बाबा जी व बीजी ने स्वयं को गुरु घर के लिए शत प्रतिशत समर्पित कर दिया। बाबा जी प्रायः यह कहते रहते थे कि भाई मैं तो कुछ भी नहीं करता हूँ बल्कि मुझसे यह सब कुछ करवाया जा रहा है। इस क्षेत्र में अधिकतर गरीब जनता रहती थी, जो या तो दूध ढोने के कार्य में लगे हुए थे या फिर उन्हें चतुर्थ श्रेणी की नौकरियाँ जैसे कि चपड़ासी, पहरेदार, दरबान आदि मिली हुई थीं। ये लोग तम्बाकू की खेती करते थे और तम्बाकू ही पीते थे, चाहे हुक्कों के द्वारा अथवा चबाकर।

बाबा जी ने सबसे पहले दीवान गांव सारंगपुर में लगाया जिसमें आगे जाकर शुरू होने वाले सारे दीवानों की झलक पड़ती थी। इन दीवानों में सारी महिलाएँ तो घरों की छतों पर ही बनी रही थीं जबकि कुछ पुरुष लोग तो दीवान में आए लेकिन वे कुछ दूरी पर ही खड़े रहे। जहाँ -जहाँ पर बाबा जी पहली बार गए, वहाँ पर इसी प्रकार की तस्वीर देखने को मिलती। महिलाओं के साथ में छोटे-छोटे दुधमुहे बच्चे होते थे, जिन्हें कि उन्होंने अपनी गोद में उठाया हुआ होता था जो बच्चे अपेक्षाकृत थोड़े बड़े होते थे, वे अपनी माताओं के कपड़ों को कसकर पकड़े हुए खींचा खींची कर रहे होते थे।

बीजी उन्हें दो ग्रुपों में बैठाते। आप उन्हें दीवान में बैठने का तरीका बतलाते कि पहले अपने जूते उतारो, उन्हें जोड़ा घर में जमा करवाो, टोकन लो और बाद में अपनी तरफ (पुरुषों व महिलाओं के अलग-अलग ग्रुप) जाकर आराम से बैठ जाओ तथा कीर्तन-गुरवाणी के अमृत वचन श्रवण करो एवं जब बारी आए तो उच्च स्वर में बोलो। बीजी उन्हें पूरी तरह से चुप करवा कर रखते तथा उन्हें अनुसासन बनाए रखने के लिए प्रेरित करते साथ ही आप उन्हें कच्ची श्रद्धा से वर्जित भी करते।

विशेष रूप से आप महिलाओं को जो गुग्गा माड़ी, कब्रों, मसानों व खेड़ों आदि की पूजा करती है, उन्हें उन कार्यों से रोकते। आप महिलाओं को यह भी बताते कि श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी श्री गुरु नानक देव जी सरब कला समर्थ है और उनके पास से कोई भी वस्तु प्राप्त हो सकती है, 'साचे साहिब किआ नाही घरि तैरै' (अंग - 917) अथवा 'जितड़े फल मनि बाछीअहि तितड़े सतिगुर पासि।।' (अंग - 52)

महिलाएं प्रायः अपने पतियों की शिकायत बीजी के पास करती रहती कि वे शराब पीते हैं। इस प्रकार के बहुत सारे पति उनकी जादुई माता वाली नसीहत के प्रभाव में आ गए और उन्होंने अमृतपान कर लिया तथा दसवें पातशाह के खालसा बनकर अपने जीवन को सफल कर लिया।

जब बाबा जी की कोठी का निर्माण कार्य लगभग पूरा हो चुका था (781, 3 बी-1, मोहाली) और कोठी के सामने वाली खाली जगह में दीवान भी लगना शुरू हो गए थे और उस समय तक दीवान वगैरह लगवाने व सारी तैयारी करने का तजुर्बा भी हो चुका था। उस समय भी बीजी ने ही बाबा जी को 'सब तैयार है' कहना होता था।

जहाँ तक सिक्खी के प्रचार का सम्बन्ध है, तो जो उन्होंने कर दिखाया है, वह जग जाहिर है। उन्होंने पंजाब के एक बड़े भाग में प्रचार किया उसके अतिरिक्त यू.पी., हरियाणा व मुम्बई में प्रचार किया। विदेशों में जहाँ पर उन्होंने प्रचार किया उनमें प्रमुख रूप से अमेरिका, कनाडा व इंग्लैंड आते हैं। उन्होंने प्रचार के लिए अपने समय तक विकसित हो चुकी टैक्नोलॉजी का भी भरपूर प्रयोग किया।

जैसे-जैसे मोहाली में संगत बढ़ती गई वैसे ही वैसे उनके द्वारा लाया जाने वाला चढ़ावा भी बढ़ता गया। धन, कपड़े व अन्य उपहारों के ढेर लगने लग पड़े। बीजी इस बात का बारीकी से ख्याल रखते कि चढ़ावे के धन में से प्राप्त हुई वस्तुएँ उनके घर के अन्दर प्रवेश न कर जाएँ। उन्हें अच्छी प्रकार से बाबा जी का यह उपदेश कण्ठस्थ था -

*जिउ धरमसाला दी झाक है विहु खंडहु पाजे।।*

इसलिए शुरू-शुरू में प्राप्त हुआ चढ़ावा पास के गुरुद्वारे में भेज दिया जाता था। जब सन् 1986 ई. में गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब अस्तित्व में आ गया तो सारा चढ़ावा संगत के उपयोग के लिए रतवाड़ा साहिब भेज दिया जाता जिसे कि वहाँ पर रह रहे सिंहों द्वारा व अन्य संगतों द्वारा प्रयोग में लाया जाता क्योंकि ये सिंह इस प्रकार के थे जिन्होंने कि अपना तन, मन व धन गुरु को अर्पित किया हुआ होता था।

अगस्त 1994 ई. में श्रीमान मल्होत्रा जी के माध्यम से बाबा जी का मिलाप संसार प्रसिद्ध योगी स्वामी राम जी के साथ हुआ। जब योगी जी रतवाड़ा साहिब पधारे तो उन्होंने बीजी के प्रति अपना अथाह प्यार, श्रद्धा व स्नेह प्रकट किया। उन्होंने कहा कि दो जन्म पहले ये हमारे माता जी थे। माता के प्यार वाला यह कमाल का उदाहरण है।

सन् 2001 में जबकि रतवाड़ा साहिब की समस्त गतिविधियाँ शिखरों पर थीं, जैसे कि दीवान हाल में इतवार के दीवान, गुरुद्वारा साहिब में देश-परदेश के प्रेमीजनों द्वारा श्री आखण्ड पाठ की सेवा, गुरु के अटूट लंगर, मासिक पत्रिका आत्म मार्ग की बीस हजार से भी अधिक संख्या से सदस्यता, ऑडियो-वीडियो फिल्में, 20 से अधिक महापुरुषों की प्रकाशित पुस्तकें, सन्त महाराज द्वारा निर्मित स्कूल व कालेज यानि कि ये सारी संस्थाएँ उन्नति के पथ पर अग्रसर थे तो महाराज जी का शरीर पूरा साथ नहीं दे रहा था। फिर भी आप पूरी तन देही के साथ प्रत्येक कार्य में मार्ग दर्शन करते रहे। जून 2001 में आपका स्वास्थ्य ज्यादा खराब हो गया। पी.जी.आई. में सहायता प्राप्त की गई लेकिन सितम्बर-अक्टूबर 2001 तक आपका शरीर काफी कमजोर हो गया। परमात्मा के इलाही हुक्म को खिले माथे स्वीकार करते हुए आप जी 31 अक्टूबर 2001 को रतवाड़ा साहिब की सारी जिम्मेदारियाँ अपने परम सेवक बाबा लखबीर सिंह जी को सौंप कर स्वयं प्रभु जी की गोद में जाकर लीन हो गए।

समस्त संगत के लिए और विशेष रूप से सम्माननीया माता जी के लिए यह बिछोड़ा असह्य था। बीजी के कन्धों पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ पड़ी थी। आपका स्वास्थ्य भी साथ नहीं दे रहा था, फिर भी आप रतवाड़ा साहिब आते रहे और अपने सारे सेवकों को कारजशील होने का हौंसला प्रदान करते रहे लेकिन स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन कमजोर होता जा रहा था।

वर्ष 2013 को बीजी ने बड़े समागम से पहले गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब में फेरा नहीं डाला। उनका स्वास्थ्य बहुत कुछ ठीक नहीं था। समागम के दौरान जो कि 28-10-2013 से 31-10-2013 तक आयोजित किया गया था, श्रद्धालुजनों को यह कहा गया कि जो प्रेमीजन उनके दर्शन करना चाहते हैं वे कोठी जाकर ही दर्शन कर सकते हैं।

पहले भले ही आप विस्तर पर ही लेटे रहते थे, लेकिन आप पूरी तरह से सक्रिय थे तथा रतवाड़ा साहिब बाकायदा आते रहते थे। लगभग एक महीना पहले ही उन्होंने रतवाड़ा साहिब आना बन्द किया था। आपकी हालत नाजुक बनी रही लेकिन किसी को स्वप्न में भी यह उम्मीद नहीं थी कि होनी इतनी जल्दी अपना असर दिखला देगी और समागम के अन्तिम दिन, जिस दिन सन्त महाराज जी ने इस संसार को अलविदा कहा था यानि कि 31-10-2013 से अगले ही दिन बीजी ने इस नाशवान संसार को अलविदा कह जाना है और परम तत्व में लीन हो जाना है। उन्होंने अपने शरीर का 1-11-2013 को रात्रि के लगभग 11.30 बजे परित्याग कर दिया था। उनका सच्चखण्ड गमन करने का चश्मदीद ब्यौरा जो उनके बड़े सपुत्र मनजीत सिंह जी ने दिया वह इस प्रकार से है -

बिस्तर पर लेटे होने की अवस्था से आप उठ बैठे, अपनी आँखें खोलीं तथा सिर घुमाकर चारों तरफ देखा। फिर नाक से ऊपर उनके माथे के केन्द्र वाले स्थान पर चक्र दिखाई दिए जो छोटे से छोटे होते चले गए और आखिर एक बिन्दु में केन्द्रित हो गए। आपने अपनी आँखें ऊपर उठाईं फिर बन्द कीं और फिर शान्तिपूर्वक लेट गए। शरीर में से जीवात्मा उड़ान भर चुका था। आपके पावन होठों में से हाय की आवाज भी नहीं निकली।

महान गुरमति समागम अभी एक दिन पहले 31-10-2013 को ही सम्पन्न हुआ था। मेहमान बन्धु, संगत एन.आर.आई. प्रेमीजन तथा अन्य गणमानय व्यक्ति अभी चण्डीगढ़ में ही थे, इसलिए उनके पाँच भौतिक शरीर का संस्कार अधिक विलम्ब किए बिना अगले ही दिन किया जा सकता था। सोच-विचार के बाद अगला ही दिन यानि कि 02-11-2013 वाला दिन अन्तिम संस्कार हेतु निर्धारित किया गया तथा सही समय 3.00 बजे दोपहर बाद रखा गया। बीजी के शरीर को अगली सुबह प्रातःकाल में रस्मी स्नान करवाने के बाद एक शीशे के ताबूत में रतवाड़ा साहिब में रखा गया ताकि श्रद्धालुजन अन्तिम दर्शन कर सकें।

सारा दिन श्रद्धालुजनों का आना जारी रहा। संगत मूक आँसुओं की श्रद्धांजलि दे रही थी। कोई फूल ला रहा था, कोई कीमती दुशाले। कीर्तन-जत्थे कीर्तन करके अपनी श्रद्धांजलि दे रहे थे। अन्त में बाबा हरपाल सिंह जी, बाबा गुरदीप सिंह जी, बाबा लखबीर सिंह जी ने संगत को सम्बोधित किया।

बीजी के पावन शरीर को दाह संस्कार वाली जगह पर ले जाने के लिए सिंह साहिब जत्थेदार इकबाल सिंह जी ने श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी के चरणों में अरदास की और अरदास के बाद चिता को मुखाग्नि बीजी के बड़े बेटे मनजीत सिंह ने दिखाई उसके बाद अन्य मुख्य प्रेमीजनों ने भी ऐसा ही किया।

इसके बाद कीर्तन सोहिले जी का पाठ हुआ तत्पश्चात संगत गुरुद्वारा साहिब जी की तरफ जाने लगी जहाँ पर कि 'अलाहणीआं' बडहंस महला 1 का पाठ किया गया। अन्दर एक आखण्ड पाठ चल रहा था, इसलिए बाबा लखबीर सिंह जी ने धीमे स्वर में ऐलान किया कि अगला दिन जो कि दीवाली का था, न मनाया जाए बल्कि इस त्यौहार को नाम स्मरण व कथा कीर्तन में व्यतीत किया जाए।

दिनांक 04-11-2013 को बड़े सम्मानपूर्वक अंगीठे की सम्भाल की गई तथा असंख्य प्रेमीजन अस्थियों को जल प्रवाह करने के लिए संगत रूप में श्री कीरतरूप साहिब गए। 9 नवम्बर को आरम्भ किए गए श्री आखण्ड पाठ साहिब की सम्पन्नता 11 नवम्बर को हुई उपरान्त अन्तिम अरदास के लिए धार्मिक दीवान सजाया गया जिसमें देश विदेश से आए हुए प्रमुख शख्सियतों ने सम्माननीय माता जी को श्रद्धाजलियां भेंट कीं तथा रागी जत्थों ने वैरागमयी कीर्तन श्रवण करवाए। बाबा लखबीर सिंह जी ने सारी संगत को सहज में, रजा में राजी रहने की विनती की तथा बतलाया कि बीजी तो सदजीवी है, हम सबके अंग-संग है जैसे कि गुरवाणी का फुरमान है -

*ब्रह्म गिआनी सद जीवै नही मरता।।*

अरदास हुक्मनामे के उपरान्त सजल नेत्रों के साथ नाम-जप करती हुई सारी संगत रतवाड़ा साहिब से विदा हुई। आज रतवाड़ा साहिब में सन्त महाराज जी तथा सन्त माता जी (बीजी) की पावन स्मृति में 30-31 अक्टूबर तथा 1, 2 नवम्बर 2018 को महान गुरमति समागम आयोजित किए जा रहे हैं।

*(पृष्ठ 39 का शेष)*

होता है, जिस समय कि सम्माननीय भाई साहिब भाई रणधीर सिंह जी ने अपनी पुस्तक 'रंगले सजण' में माता जी के पिता जी को 'सन्त हीरा सिंह जी' के नाम से सम्बोधित किया भावार्थ 'सन्त' की उपाधि से सम्मानित किया। आप जी के पिता जी तथा माता जी नाम के साथ रंगी हुई आत्माएँ थीं। माता जी के ऊपर इस विरासत का असर होना स्वाभाविक ही था। माता जी का रोल रतवाड़ा साहिब संस्था के अन्दर एक मिसाल है। माता जी के जिक्र के माध्यम से ही संस्था का ऐतिहासिक प्रसंग पूरा होता है। प्रो. मोहन सिंह के शब्दों के अनुसार माँ के प्यार की एक झलक प्रस्तुत है -

*माँ जिहा घणछावाँ बूटा किते नजर ना आइआ,*
*जिस तों लै के छाँ उधारी रब ने सवरग बणाइआ।*
*कुल दुनीआँ दे बूटे जड़ सुकिआँ मुरझाँदे,*
*पर इह बूटा फुल सुकिआँ मुरझाइआ।*

गुरवाणी के अन्दर स्त्री के 32 गुणों (दया, नम्रता, लज्जा, प्यार आदि) का जिक्र किया गया है -

*बतीह सुलखणी सचु संतति पूत ॥*
*आगिआकारी सुघड़ सरूप ॥* अंग - 371

सम्माननीया माता जी के जीवन में से इन गुणों की झलक व्यवहारिक रूप में स्पष्ट दिखाई पड़ती है।

आओ! इस दिशा की तरफ अपने ध्यान को केन्द्रित करने की कोशिश करें कि रतवाड़ा साहिब भी अमीर विरासत से भरपूर संस्था है। साहिब श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की अपार कृपादृष्टि की बदौलत पाँचों प्यारों के मुखी भाई साहिब भाई दया सिंह जी द्वारा शुरू की गई यह श्रृंखला हरखोवाल तथा राड़ा साहिब के सम्प्रदाय के नाम से सिक्ख पन्थ में बड़े प्यार व सम्मान से जानी जाती है। प्यारे महापुरुष सन्त वरियाम सिंह जी तथा उनकी जीवन संगिनी माता रणजीत कौर जी इस संस्था के मुखी होने के नाते, आप जी ने विरासती पदचिन्हों में से ही इस संस्था की स्थापना की और इसीलिए अपने बहुमूल्य व गौरवमयी इतिहास तथा विरासत के साथ जुड़ी रहकर यह संस्था अन्य सबको भी उसी के साथ जोड़ने के कृत संकल्प व निरन्तर यत्नशील हैं।

*भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह, प्रबन्ध सम्पादक*
*'आत्म मार्ग'*

# श्री हरिक्रिशन धिआईऐ ...

## ( अवतार पर्व श्री गुरू हरिकृष्ण साहिब जी - 6 अगस्त 2018 )

*प्रिंसिपल हरिभजन सिंह*

श्री गुरू नानक देव जी तथा उनकी ज्योति अन्य गुरू साहिबानों के जीवन चरित्र, एक ही माला के मनके होते हुए भी अपनी-अपनी जगह पर इतने विचित्र व भेद तथा भावपूरित हैं कि इन्सानी बुद्धि दंग रह जाती है। उन्हें देखता व उनकी विचार करता हुआ एक सरल व श्रद्धावान मन आश्चर्यचकित होकर किन्हीं दिव्य व अर्शी मण्डलों में खो सा जाता है ।

239 वर्ष तथा नौ महीनों के अल्पकालिक गुरु काल में प्रत्येक गुरू साहिब ने आदि में ही तय की गई विधि व युक्ति के अनुसार जीवन के किसी न किसी विशेष पहलू (पक्ष) अथवा पहलुओं (पक्षों) को उजागर किया तथा जिज्ञासुजनों के लिए जीवन युक्ति की युक्तियाँ बतलाईं। यह सिलसिला उस समय तक जारी रहा जब तक कि लगभग 230 वर्ष बाद सन् 1699 ई. की पावन बैसाखी वाले दिन एक पूर्ण मनुष्य खालसा का सृजन करके उसे नौ-दस वर्षों तक अपनी देखरेख में परिवक्व न कर दिया गया। मानव बुद्धि चकित कर देने वाला चमत्कार यह है कि गुरूओं के केवल शरीर ही बदले जबकि ज्योति और युक्ति पूर्ववत् ही रहे। ज्योति और युक्ति के आगे बढ़ने में न तो शरीरों का परिवर्तन ही बाधक हुआ और न ही आयु का बड़ा या छोटा होना। शेख सादी द्वारा दर्शाई गई इस सच्चाई का सबसे बड़ा प्रमाण इसी गुरू चरित्र से प्राप्त होता है।

*'बजुरगी ब-अकल, न बसाल।'*

(भावार्थ महिमा या बड़प्पन निर्मल बुद्धि के गुणों पर निर्भर है न कि केवल बड़ी उम्र पर)

यही कारण है कि यदि 94 वर्ष की वृद्धावस्था में श्री गुरू अमरदास जी, श्री गुरू नानक देव जी द्वारा चलाए गए निर्मल पन्थ का प्रचार, प्रसार व उसे परिपक्व करते हुए दिखाई पड़ते हैं तो ठीक उसी प्रकार से बाल गुरू श्री हरिकृष्ण जी भी उसी शाह मार्ग पर गुरुमुख की सहूलियत तथा सुख शान्ति के लिए नए मील पत्थर स्थापित करते हुए दिखाई पड़ते हैं।

आओ! संसार के अन्दर घटित इस अजूबे को समझने तथा किसी दिव्य सरूर में आनन्दित होने के लिए 'बाला प्रीतम' जी के विचित्र जीवन चरित्रों पर एक विहंगम दृष्टि डालने का प्रयास करें -

आपका अवतार सावन माह के कृष्ण पक्ष में संवत् 1713 तदनुसार जुलाई 1656 ई. को 'शीश महल' कीरतपुर (हुशियारपुर) में श्री गुरू हरि राए साहिब जी के घर में माता क्रिशन कौर जी के माध्यम से हुआ। आप जी की छोटी सी जीवन यात्रा में घटित कुछ प्रमुख घटनाओं का ब्यौरा व उनका महत्व इस प्रकार से है कि -

1) गुरुगद्दी - गुरू घर की यह मर्यादा शुरू से ही रही है कि यहाँ पर गुरुगद्दी, सांसारिक रीति के विपरीत योग्यता के आधार पर ही प्रदान की जाती है। श्री गुरू जी के भाई राम राए जी बड़े ही सयाने, चतुर व नीतिवेत्ता तो थे ही, साथ ही उन्हें सिक्ख संगत और मसन्दों के बीच भी बड़े ही सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। जब औरंगजेब ने गुरू हरिराए साहिब जी को दिल्ली बुलाया तो गुरू जी ने अपने स्थान पर राम राए जी को ही भेजा और साथ ही बहुत अधिक सावधान रहने की भी हिदायत दी। लेकिन दूसरी तरफ राम राए ने बादशाह की प्रसन्नता हासिल करने की नाकाम कोशिश की और साथ ही गुरू नानक देव जी की वाणी की एक तुक 'मिटी मुसलमान की' के स्थान पर 'मिटी बेईमान की' कहने की घोर अवज्ञा की। उनके इस अक्षम्य अपराध के कारण गुरु हरि राए साहिब जी ने दोबारा उसे कभी मुँह नहीं लगाया यानि कि उसे हमेशा के लिए त्याग दिया।

गुरवाणी का इतना अधिक सम्मान, उसूलों पर पहरा देने की रीति तथा अत्यन्त दृढ़ता, सिक्ख इतिहास का एक सुनहरा पन्ना भी है और गुरू जी के मार्ग पर चलने के लिए एक प्रकाश स्तम्भ भी है।

2) दिल्ली यात्रा - श्री हरि राए जी की नीति यह थी कि 'नहि मलेश को दरशन दै हैं'। आप जी ने श्री गुरू हरिक्रिशन जी को, अक्टूबर 1661 ई. में गुरुगद्दी देने के बाद भी इसी नीति को अपनाने की आज्ञा दी। राम राए को इस बात का पता था, इसीलिए बादशाह भी इस बात से अनजान नहीं था। यही कारण था कि बादशाह ने स्वयं इस आदेश को लिखने की अपेक्षा राज जय सिंह के हाथों से दिल्ली आकर दर्शन देने के लिए गुरू जी को पत्र लिखवाया लेकिन गुरू जी ने इस निमन्त्रण को अस्वीकार कर दिया। हाँ, जब दिल्ली की संगत के द्वारा दर्शन देने का प्रार्थना पत्र, राजा के अहिलकारों द्वारा पढ़कर सुनाया गया तो फिर गुरू जी

ने कहा कि जहाँ पर संगत याद करेगी, वहाँ पर हम अवश्य पहुँचेंगे।

दिल्ली के मार्ग में घटित घटनाओं में से यह घटना बहुत ही बड़ी, अलौकिक व सतगुरू जी की प्रतिभा को बढ़ाने वाली है -

गुरू जी ने पहली रात पंजोखरा (अम्बाला) में व्यतीत की। वहाँ का अहंकारी पण्डित लाल चन्द, आप जी को मिला और कहने लगा, आप अपने आपको गुरू हरि कृष्ण कहलवाते हो और बहुत बड़े बनते हो, उन्होंने तो श्रीमदभागवत गीता की रचना की थी लेकिन आप उसके अर्थ ही करके दिखला दो और साथ ही मेरे साथ शास्त्रार्थ कर लो ।

गुरू घर में दरगाह से ही प्राप्त हुई नम्रता के धारणी, सतगुरू जी बोले, प्रेमीपुरुष! हम तो अकालपुरुष के सेवक हैं, कला तो उसी की चलती है। हम तुम्हारे साथ शास्त्रार्थ तो बाद में करेंगे। पहले तुम अपने नगर में से कोई अपनी मर्जी का व्यक्ति ले आओ, श्री गुरू नानक देव जी की कृपा के द्वारा वही गीता के अर्थ करके तुम्हारी सन्तुष्टि करवा देगा।

पण्डित लाल चन्द अपने नगर गया और झीवर (कहार) जाति के छज्जू को, जो कि बहुत ही मूर्ख व निरक्षर था, अपने साथ ले आया। सतगुरू जी ने अपनी कृपा के द्वारा उसे निहाल कर दिया तथा आशीर्वाद देते हुए उसे कहा कि वह, पण्डित जी की तसल्ली करवाए। गुरू जी ने छज्जू के नेत्रों में अपने नेत्र डाले और उसके सिर पर अपनी छड़ी रख दी। पण्डित जी ने उससे गीता के कठिन से कठिन श्लोकों के अर्थ पूछे जिनके, उसने अत्यन्त बाखूबी जवाब देकर पण्डित जी को निरुत्तर कर दिया। पण्डित इस अलौकिक शक्ति को देखकर सतगुरु जी के चरणों में गिर पड़ा तथा गुरू जी से क्षमा याचना करने के बाद उनका सिक्ख बन गया।

**3) दिल्ली विश्राम** - दिल्ली में गुरू जी राजा जय सिंह के बंगले में, जहाँ पर कि आजकल गुरुद्वारा बंगला साहिब जी सुशोभित हैं, ठहरे। बादशाह ने दर्शनों की इच्छा प्रकट की। उस समय आप जी ने पिता जी द्वारा किए आदेश की रौशनी में उत्तर भेज दिया कि उनका बड़ा भाई बादशाह जी के पास ही है, इसलिए राजनैतिक मसलों के बारे में उन्हीं के साथ बातचीत कर ली जाए। प्रभु भक्तों तथा सांसारिक लक्ष्मीपुत्रों का पारस्परिक मेल क्या हो सकता है? दूसरी बात यह है कि हमारे पास संगत तथा रोगियों की सेवा करने से ही फुर्सत नहीं मिल पाती है। गुरू जी ने बादशाह जी को उपदेश हेतु यह शबद लिखकर भिजवा दिया -

*किआ खाधै किआ पैधै होइ ॥*
*जा मनि नाही सचा सोइ ॥*
*किआ मेवा किआ घिउ गुड़ु मिठा*
*किआ मैदा किआ मासु ॥*
*किआ कपड़ु किआ सेज*
*सुखाली कीजहि भोग बिलास ॥*
*किआ लसकर किआ नेब खवासी आवै महली वासु॥*
*नानक सचे नाम विणु सभे टोल विणासु ॥*

*अंग - 142*

जब शहजादा मुअज्जम दर्शनों के लिए आया तो उसे गुरू जी ने आत्मिक उपदेश देकर निहाल कर दिया। जब राम राए जी को गद्दी न दिए जाने के सम्बन्ध में बात चली तो गुरू जी ने इस सम्बन्ध में श्री गुरू नानक देव जी से ही चली आ रही रीति व चुनाव की कसौटी की तरफ इशारा करते हुए शहजादे को समझाया कि राम राए ने किस प्रकार से बादशाह से दोस्ती बरकरार रखने के लिए श्री गुरू नानक देव जी की वाणी को बदला और किस प्रकार से गुरुगद्दी के बारे में उसका दावा झूठा है।

## 4) करामाती शक्ति की परख

शहजादे के साथ हुई उपर्युक्त विचार से बादशाह गुरू जी की सयानप का कायल तो हो ही गया लेकिन इस्लामी विचारधारा का धारणी होने के कारण उसने गुरू जी की करामाती शक्ति को भी परखना चाहा और उसने यह कार्य राजा जय सिंह के सुपुर्द कर दिया। राजा जय सिंह इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु गुरू जी को अपने महलों में यह विनय करके ले गया कि वहाँ पर पटरानी तथा अन्य परिवार उनके दर्शन करने के लिए लालायित है। महलों में पहुँच कर गुरू जी को कहा गया कि वे परिवार में से पटरानी की पहचान करें। आप जी (श्री गुरू हरि क्रिशन महाराज जी) अन्य सभी के सिर पर छड़ी रखते हुए यह कहते गए कि यह पटरानी नहीं, लेकिन जब आपने पटरानी के सिर पर छड़ी रखी तो कहा कि यह है - पटरानी। इसके बाद आप पटरानी की गोद में पुत्र की भांति बैठ गए और पुत्र की मनोकामना पूरी होने का वर दिया।

5) ब्रह्मलीन होना - उन दिनों में दिल्ली में बुखार तथा चेचक की बीमारी फूट पड़ी। सतगुरू जी ने रोगियों की, दिन-रात एक करके सेवा की, उनके पावन दर्शन करके तन व मन के सारे रोग दूर होते थे। रोगियों के रोग दूर करने के लिए आप जी ने बंगले के साथ में एक हौद बनवाई जहाँ से चरणामृत पीकर लोग निरोग होने लग पड़े। गुरु प्रताप सूरज ग्रन्थ के अनुसार गुरू जी ने फुरमान किया कि -

*चरनाम्रित हमरा जो पीवै॥*
*सो जन तुरत रोग बिन थीवै॥*
*जिने चुबूचे दा जल पीए॥*
*सो उबरिओ, गुर जस बच थीए॥*

आप जी ने अपनी सांसारिक यात्रा सात साल आठ

*(शेष पृष्ठ 55 पर)*

# नौवें रत्न - सन्त ईशर सिंह जी महाराज, राड़ा साहिब

*( श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जुलाई, पृष्ठ - 47 )*

## अन्तिम तैयारियाँ

अन्तिम दिनों में सन्त जी महाराज बिछुड़ी रूह के मिलाप तथा वैराग्य और वियोग के वचन किया करते थे। आत्मज्ञानी को मौत का भय नहीं होता। मौत का रहस्य क्या है? वह एक एक को खाती है, परन्तु वह सत्पुरुषों की दासी बनकर सेवा करती है, फिर उनकी अपनी इच्छानुसार ही देह का बाहरी रूप बदलकर, उन्हें आत्म अभेदता का परमानन्द प्रदान करती है।

एक दिन दोपहर के समय, सरदार सौदागर सिंघ जी के परिवार ने प्रार्थना की, ''सच्चे पातशाह की कृपा है जो संगतों की महान सेवा करने का समय मिला है। कृपा करो, ऐसी सेवा हर समय मिलती रहे।'' आप जी ने कहा, ''बीबी, वर मांगना आसान है पर उसका पालन करना मुश्किल हो जायेगा। संगतें तो इतनी आयेंगी कि तुम हैरान रह जाओगे।''

एक दिन बाद ही बीबी ने फिर कहा, ''यहाँ पर बाकी सन्तों ने अपने-अपने स्थान बनवा लिये हैं। यदि कृपा करें तो कोई अपना स्थान भी बन जाये, जहाँ पर लोग इकट्ठे होकर आप जी की याद, दिल में ताज़ा कर लिया करेंगे।''

बाबा जी ने फरमाया, ''गुरमुख बीबी रानी! तुम्हारा घर ही हमारी सबसे अच्छी तथा सदीवी याद बन गया है। जहाँ लोग हर समय हमें याद कर लिया करेंगे। तुम्हारा हमारा रिश्ता अब दीन और दुनियाँ दोनों ही लोकों का बन गया है, यह टूट नहीं सकता। लोग तुम्हारे ही द्वारा हमें याद किया करेंगे। इस स्थान के भाग्य खुल जायेंगे। यह सदा के लिये लोगों के लिये सम्मान का स्थान बन गया है।''

25-8-1975 की शाम को वैराग्य की बाढ़ ही आ गई। कीर्तन की सुरें, जवानी के समय के तरानों को भी मात कर गईं। जत्थेदार महेन्द्र सिंघ ने तीन चार बार सन्त महाराज की ओर बड़े गौर से देखा। वह अनुभव कर रहे थे कि अब कोई अनहोनी घटना घटित होने वाली है। ऊँचे स्वरों में संगत, सन्त महाराज के साथ-साथ चल नहीं सकती थी। आखिर समाप्ति में गुरू सतोतर पढ़ने से पहले, सन्त जी महाराज ने पहले की तरह यह नहीं कहा कि आखिरी दीवान इस स्थान का समाप्त हो रहा है, बल्कि फ़रमान किया, ''यह अन्तिम दीवान है।'' न ही यह कहा कि कल को अमृत प्रचार होगा और फिर आराम करेंगे। बल्कि सदा के बोलों से विपरीत कहा, ''अब शरीर की गाड़ी आगे चलने में असमर्थ हो रही है। अब तो लम्बी छुट्टी होने वाली है, संगत ने जो सेवा की है, तकलीफ उठाई है, उसके लिये बहुत धन्यवाद।'' अगले प्रोग्राम को बताए बिना ही गुर सतोतर आरम्भ कर दिया। लोगों ने इस बात को अनुभव नहीं किया, पर जत्थेदार महेन्द्र सिंघ के मन में गाँठ पड़ गई कि सन्त महाराज ने जीवन पर्यन्त दीवानों की समाप्ति उपरान्त कुछ बातें अगले कार्यक्रम के बारे में बताने की परम्परा क्यों तोड़ दी?

फिर रात को चरण दबाते समय, सन्त महाराज जी से पूछ ही बैठा कि इसमें क्या रहस्य है, परन्तु सन्त जी ने बात को टाल दिया और कहा, ''जत्थेदार, यदि भेद बता दें तो अभी ही सौ बखेड़े खड़े हो जाएँगे। फिर अरदासें, प्रार्थनाएं और तरले होंगे कि कोई कला दिखाओ। कोई हुक्म की रज़ा में उलट फेर करो, समय को लम्बा करो। परन्तु हमने शरीर के लिये कोई भी कार्यवाही नहीं करनी। जो कार्य महापुरुषों ने हमसे करवानें का वायदा किया था, वह उनकी कृपा से सम्पूर्ण हो गया। अब और गीता को बढ़ाने का कोई लाभ नहीं। फिर हँस पड़े, ''जत्थेदार! कर्ज़ा लेते समय जो नेत्र हुआ करते हैं, वे वापिस करते समय वही निगाह रहती है या नहीं?'' तब जत्थेदार ने कहा, ''महाराज! वापिसी के समय विरले की ही निगाह कायम रह सकती है। हर कोई मुनकर होने के बराबर रह जाता है।'' बाबा जी उठकर बैठ गये और बोले, ''जत्थेदार! अब हमने प्रभु से प्राप्त हुआ यह घोड़ा भी छोड़ना हो, तब सवार की तरह उतर कर एक तरफ हो जायेंगे।''

''खैर! वाहिगुरू जी की कृपा के कारण कोई भी समय ऐसा नहीं आया, जब शरीर पराधीन हो गया हो, पर अब तो समय ही नहीं है। छोटे सन्तों का संशय उचित ही लगता

है कि परदेस जाकर, फिर घर वापिस आने की उम्मीद नहीं है। चलो, अब निजधाम ही चले जाना है, परदेस में भी क्या रखा है?'' अन्तिम बात जो सन्त महाराज जी ने कही, वह सभी की निशा कर गई, ''अच्छा भाई! तुम भी कहा करोगे कि हम भी उनके साथ कहाँ-कहाँ तक घूमते रहे थे, चलो, बस अब आराम करो, हमने भी आराम करना है, क्या पता फिर समय ही न मिल सके? सफर लम्बा है।''

26 अगस्त को प्रातःकाल, सदा की तरह स्नान किया और फिर चाय का कप पीकर समाधिस्थित हो गये। दूसरी बार चाय, दो घंटे के पश्चात, साथ दो टोस्ट भी ले लिये। साथ ही विशेष सेवक ने, आप जी को तिलक भी लगा दिया जो रोज़ाना की क्रिया का एक भाग था। फिर आप समाधि में टिक गये तथा निजी सेवक, मास्टर महेन्द्र सिंघ जी को साथ लेकर अगले दिन के दीवान की जगह देखने के लिये रवाना हो गया। यह भी अनहोनी तथा अनावश्यक बात थी कि खास सेवक दीवान देखने जाए जो कि उसकी सेवा का हिस्सा नहीं था। पर सन्त महाराज ने जो कौतुक दिखाना था, उसे कौन रोक सकता था?

पहले प्रतिदिन सात बजे सन्त जी महाराज वेदान्त की कोई पुस्तक या फिर विचार पुस्तक रोज़ ही सुनते थे। आज वीर सिंघ ने दरवाजा देखा, तो खुला था। पर महात्मा समाधि स्थित बैठे थे। सीधे बैठे थे, सेवक की हिम्मत बुलाने की न पड़ सकी। पौने नौ बजे जत्थेदार जी वापिस आए। तब वीर सिंघ ने कहा, ''आज सन्त महाराज जी न तो उठे हैं और न ही कोई कथा ही सुनी है। वे हिलजुल भी नहीं रहे, अडोल बैठे हैं।''

जत्थेदार जी घबराये हुए पहुँचे। हाथ लगाते ही शीश एक ओर लुढ़क गया। जत्थेदार जी ने उन्हें सीधा करके, लिटा कर फिर श्वासों की गति को जानना चाहा, पर एक श्वांस शायद वह दशम द्वार या त्रिकुटी पर जुड़ते समय अटका हुआ था, वह बाहर आया या फिर श्वांस आने का भ्रम हुआ, परन्तु शरीर को छोड़कर वे चले गये थे। साथ वाले प्रेमियों के हाथों के तोते उड़ गये, फिर हुक्म के अनुसार डाक्टर करम सिंघ जी को फोन तथा चरणजीत सिंघ को दिल्ली तार द्वारा सूचना भेजी कि तुरन्त पहुँचो।

डाक्टर करम सिंघ जी ने स्वास्थ्य विभाग से सर्टिफिकेट बनवाया और हार्टफेल का केस कर रिपोर्ट बनवाई। दिल्ली तार मिलने पर जत्थेदार सन्तोख सिंघ ने प्रैस तथा रेडियो पर समाचार भेज दिया जो इस प्रकार था।

''सन्त ईशर सिंघ महाराज राड़ा साहिब इग्लैंड यात्रा के दौरान हार्टफेल होने के कारण चलाना कर गये।''

सरदार सौदागर सिंघ तथा उसकी धर्म पत्नी हैरान थे कि हमने वरदान मांगा था, उन्होंने उदारता की सीमा पार करके वर को फलीभूत किया, परन्तु उन्हें सुरत तभी आई जब वह देने वाले ने दिये गये वचनों की पूर्णता हित, आपा ही उस स्थान पर लगा दिया। बीबी ने धाड़ मारते हुए कहा, ''बाबा जी! हम तो घर को तेरा घर इसलिये बनाने की इच्छा करते थे कि तेरी तथा तेरी संगत की सेवा में, हर समय दीवान की महान आनन्दमयी घड़ियाँ बिता सकें। पर मालिक! आपने वायदा किया था कि तुम्हारा रिश्ता सदीवी हो गया। दुनियां वाले जीवन के रहते-रहते ही बिछुड़ जाते हैं, परन्तु साध सज्जन तो 'मोइआ न जाई छोड़' वाले सज्जन हैं। पक्के जीवन मृत्यु के साथी, बाबा माफ कर दो, हमारे वचन झूठे हो जायें। मर कर जीवन के बाद अगली दुनियाँ के मेल की अपेक्षा, इसी जीवन के छोटे से समय के मेल को ही तरजीह दी जा सकती है।''

परन्तु बाबा जी का मौन, सदीवी मौन ही, उनकी महानता तथा दिये गये वचन की पूर्णता का प्रकटीकरण था। कुछ दिन पहले ही ऐसा घटित हो चुका था। परन्तु डाक्टर प्रीतम सिंघ जी ने फोन पर टमाटरों का जूस, दो चम्मच मुँह में डालने की आज्ञा दी थी, तब महापुरुषों की स्वंय की नहीं, बल्कि शरीर की कमज़ोरी का प्रभाव था। परन्तु आने पर फ़रमान किया, महात्मा का जीवन भी अजीब तरह की रचना का हुआ करता है। वे सेवकों की प्रत्येक प्रार्थना तथा इच्छा की पूर्णता हित जीवित रहते हैं। लोक पीड़ा दूर करते हुए, वे स्वंय पीड़ा का शिकार हो जाते हैं। वह स्वंय अतर सिंघ जी महाराज की वार्ता बताया करते थे कि जब उनके चरणों में जख्म का आप्रेशन होता, वे मौज़ में बैठे रहते तथा कई बार सेवकों की पीड़ाएं सुनकर हँस पड़ते और फ़रमान करते, ''सारी आयु लोगों को आशीषें तथा दर्द बांटते रहे, फिर उसका सारा ही दर्द एक ही बार में इकट्ठा होकर यदि हमारे शरीर में प्रवेश करे, तब हम उस जीवन को साक्षी रूप

होकर, ही देखते हैं। इस शरीर के जिसके अधम, नीच तथा पापी या फिर अति श्रद्धा तथा भावना भरपूर लोगों के महान सिदक तथा प्यार भी देखे हैं, उनका प्रभाव भी पड़ा है, फिर धर्मी को दिया गया आर्शीवाद, उसके लिये की गई अरदास का असर स्वाभाविक ही पापी, नीच तथा अधम जीव अथवा असन्त, अवगुणी तथा नास्तिक तक को पहुँचता है।'' सो जिस महान आत्मा ने सारी आयु कभी कोई किसी शक्ति से समझौता नहीं किया, हर मुसीबत को हंसते-हंसते प्रवान किया, तथा हर तप, साधन तथा लोक पीड़ा को दूर करने का प्रयत्न किया, बेशक वे स्वंय ही उन गुणों से हीन हो सकते थे।

जंगलों को गुलज़ार तथा कल्लरों को कश्मीर का गुलमर्ग बनाकर, प्रभु की दुनियाँ को नई नवेली बनाने वाले ने, आखिर में मौत का सौदा तथा समझौता करने से इन्कार किया था। साथ खड़े हुए मित्र, चल रही बातचीत से घबरा कर वापिस जाने की तैयारी कर लेते। परन्तु आपने सौदागर सिंघ के परिवार को वचन दिया कि तुम्हारा यह घर लोगों के लिये प्यार का काबा बनेगा। फिर उस दिये गये वचन की पूर्णता की हद ही तो थी जब कि सारा जत्था दूसरे स्थान पर जाने की तैयारी कर रहा था, रिहायश भी बदली ही जानी थी। तभी शारीरिक चोला, वचन बद्ध होकर उसी स्थान को दे दिया, जिस स्थान के साथ उन्होंने, जीवन मरण का सम्बन्ध जोड़ने का वचन दिया था।

उधर इंगलैण्ड, शोक सागर में गोते खा रहा था। इधर भारत में विरह के कारण लोग कुरला रहे थे। रात को किसी भी घर में रोटियाँ नहीं बनीं। बाहर भी अन्धेरा ही था, दिल की दुनियाँ भी सोई पड़ी थी। मैं सच कहता हूँ कि उनका बताया गया, शबद सुरत मार्ग जो सदा ही हर चिन्ता तथा दुख को दूर करने में समर्थ था, उस दिन सहाई नहीं हो पा रहा था। अतः आखरी मुकाम करमसर ही था, जहाँ पहुँचकर मन को कोई हौंसला मिल सकता था। सो करमसर की ओर ही भाग चले। सभी विरहायुक्त तथा दर्दों के मारे दीवाने, जिनका सहारा एक मात्र सन्त महाराज के दीदार थे, फिर उनके द्वारा दिया गया उपदेश ही सदीवी टेक उनके पास थी।

आज करमसर में लाखों ही व्याकुल रूहें तड़प रही थीं। एक दूसरे की जान पहचान की चीखों, दर्दों का कारण बनी दिखाई देती थी। एक दूसरे को मिलकर, बिना बोले ही दिल के जख्मों में से पीड़ा बाहर उमड़-उमड़ कर आती थी। होंठ फड़कते थे, परन्तु मुँह से कोई बात नहीं निकलती थी। इस प्रकार दुख और बिछोड़े से भेदित हुए लोगों का एक उमड़ता हुआ सागर, करमसर के चारों ओर दिखाई दे रहा था। लांगरी चौकसी के साथ, उस पावन हस्ती की आज्ञा का पालन कर रहे थे कि कोई भी मनुष्य किसी समय भी भूखा नहीं जाना चाहिए। अब उसने हुक्म करने के लिये नहीं आना। परन्तु दी हुई आज्ञा तथा लांगरी सिघों को दिये गये वचन, सदीवी अमर रखते हैं।

दीवान में विरह वेदना, पीड़ा तथा ह्रदय भरे तराने उठ रहे थे। हर एक अपने तथा सत्पुरुषों के सम्बन्ध में विचार पेश कर रहा था। परन्तु मनुष्य के ज़ज़बे उमड़-उमड़ पड़ते थे। जब कोई विरहायुक्त शब्द की धुन उठती थी। 'रोवां झीणी बाण' कथनी और करने लायक ही नहीं, हर कोई उसे अपने ही मन की आवाज़ जानता था।

अन्त में, सन्त महाराज जी की तार मिलने के पश्चात सरदार चरणजीत सिंघ कोका कोला वाले, दिल्ली से सख्त बीमारी की हालत में हवाई जहाज का सफर करके लन्दन पहुँचे। यात्रा के कागज़ पत्रों आदि की तैयारी डाक्टर करम सिंघ जी ने पहले ही करवा ली थी। मृतक शरीर के लिए बहुत ही कीमती बक्सा, संगत ने 1200 पौण्ड का सन्दल की कीमती लकड़ी से तैयार करवाया था, जो हर समय एक रस दमक तथा खुशबू को कायम रख सकता था। मुँह के स्थान पर एयर कन्डीशन बक्से पर शीशा फिट था। इसके अन्दर कम से कम 15 दिन कोई बाहरी नुक्स नहीं पड़ सकता था। लन्दन से 20 से अधिक सन्त, सेवक तथा कई सज्जन जैसे कि सरदार ईश्रर सिंघ जी कलसी, जिन्हें सन्त महाराज ने आप ही यह सेवा सौंपी थी कि वह शरीर को करमसर पहुँचाएंगे, साथ ही उसी जहाज द्वारा दिल्ली को चल पड़े थे। 30 अगस्त को सुबह ही, सन्त जी महाराज का शरीर पालम हवाई अड्डे पर उतरा। आम मनुष्यों तथा सरकारी कर्मचारियों को अमन कायम रखने के लिये काफी बड़ा प्रबन्ध और कष्ट उठाना पड़ रहा था। यह पहला अवसर था कि प्रधान मन्त्री शास्त्री जी के मृत शरीर के दिल्ली पहुँचने पर, बाद में किसी व्यक्ति के अन्तिम दर्शन हित, इतना जन समूह उमड़ पड़ा

हो।

तथा छोटे सन्त किशन सिंघ जी महाराज के प्रबन्ध के अनुसार शरीर, तथा समूह संगतों सहित गुरूद्वारा शीश गंज से नमस्कार करके तथा गुरूद्वारा कमेटी द्वारा हार तथा दोशाला लेकर काफिला चल पड़ा। जी. टी. रोड के हर मुकाम तथा शहर कस्बे में संगतों का बड़ा भारी इन्तज़ाम था। हर जगह संगतें दर्शन हित तथा भेंट लेकर प्रतीक्षा कर रही थी। खन्ना में तो इतनी भीड़ थी कि जलूस को चलने में घंटा लग गया। जी. टी. रोड से करमसर वाली सड़क का टुकड़ा तो मानो मनुष्यों से एक तार के रूप में जुड़ा हुआ दिखाई देता था। करमसर पहुँचने तक इस जलूस के साथ सैकड़ों ही कारें तथा ट्रक, बसें शामिल हो चुकी थी। करमसर के अन्दर हर तरफ मनुष्य के सिरों का महान सागर दिखाई देता था। सरकारी आंकड़ों के अनुसार यह संख्या उस समय के अनुसार दस लाख से अधिक होगी। जिस समय सन्त जी महाराज का मृत शरीर दर्शनों हेतु दीवान में लाया गया, उस समय लोगों के जोश की सीमा ही पार कर गई। दर्शन भेंट, माया की गिनती ही लाखों तक पहुँच चुकी थी। अन्त में कोई वश न चलता देखकर, सन्त महाराज के शरीर वाला बक्सा अन्दर ले आए और फिर अन्तिम तैयारियों के लिये दाखिल कर दिया गया।

जब तपोस्थान में बक्सा ले गये, तब मेरे मुँह से निकला कि जब सन्त महाराज शरीर के मालिक थे, तब इस तपोस्थान में राजा रंक कोई भी समय लिये बिना दाखिल नहीं हो सकता था। आज फिर इतिहास दोहराया गया। शरीर चाहे मृत था परन्तु पाबन्दी लगा दी गई, जो वह सुरजीत होकर, इसी जगह पर रखा करते थे।

अगले दिन प्रात: काल 31 अगस्त को अन्तिम जलूस करमसर से चलकर श्री किरतपुर साहिब, आनन्दपुर साहिब होता हुआ बिभौर साहिब पहुँच गया। पंजाब सरकार की ओर से अन्तिम संस्कार हित, सरकारी रस्म के अनुसार पुलिस के दस्तों ने तोपों को उलटी करके सलामी दी तथा सरकार की ओर से मुख्य मन्त्री ज्ञानी जैल सिंघ जी तथा प्रदेश कांग्रेस की ओर से सरदार निरंजन सिंघ तालिब, शिरोमणी कमेटी की ओर से ज्ञानी महेन्द्र सिंघ तथा श्री अकाल तख्त के जत्थेदार साधु सिंघ भौरा ने दोशाले भेंट किये। सन्त महाराज का शरीर, इस छेदों वाले बक्से में रखकर उनकी क्रिया के तमाम अंश छोटी कृपाण, कछहरा, तथा अन्य वस्तुएं जो उनकी रहत का अंग थी, उनकी आज्ञानुसार लोगों के देखते-देखते ही सजाये गये। जो तसब्बी तथा कट्टरपंथी सिखी के दावेदारी के लिये चश्में बसीरत थे कि सन्त महाराज कलगीधर महाराज जी के अनन्य सेवक, उनकी सिखी के महान पहरेदार तथा पूर्ण गुरसिख थे। गुरूद्वारा साहिब में कड़ाह प्रसाद तैयार हो रहा था। सन्त मीहा सिंघ जी सिआड़ वाले, जो बाबा नन्द सिंघ जी महाराज कलेरां वालों के सेवक थे, सन्त महाराज जी के साथ अति स्नेह रखते थे, उन्होंने अन्तिम अरदास की तथा शरीर को गहरे पानी की लहरों के सुपुर्द कर दिया। सन्त महाराज के बक्से से बाहर निकल कर, हल्के फूल पानी के ऊपर तैरने लगे जो संसार को बता गये कि वह हर बन्दिश से स्वतन्त्र होकर, पूर्ण पावन महक तथा सुन्दरता का रूप धारण कर गये हैं, जो कभी भी नाशवान नहीं है।

पाठ भोग तथा दस्तार बन्दी

सात सितम्बर को उस समय की अन्तिम तथा सरकारी तथा गैर सरकारी हस्तियों ने जिस दिन सारी कौम के नुमाइन्दे तख्त साहिबान के जत्थेदार, श्री हरिमन्दिर के हैड ग्रन्थी ज्ञानी किरपाल सिंघ जी, सन्त बचन सिंघ जी बिहंगम जत्था, मस्तुआणा के जत्थेदार कलेरां वाले, सन्त भिन्डरा वाले तथा मेहता चौक के दोनों ज्ञानी, गि. दलीप सिंघ जी अमृतसर, गि. अमीर सिंघ जी का डेरा, सन्त सुरजीत सिंघ जी, सन्त निरंजन सिंघ जी, सन्त बलदेव सिंघ जी, सन्त मनी सिंघ जी हरिद्वार, पण्डित शेर सिंघ विरक्त, पण्डित गुरदीप सिंघ तथा अन्य सोढी बेदी, भले कुल के चमकते सितारे निर्मले उदासीन तथा नामधारी सम्प्रदाय की ओर से सरोपे तथा दस्तारें लेकर प्रतिनिधि पहुँचे थे।

लंगर में दो सौ से अधिक देगें कड़ाह प्रसाद तथा सैकड़ों ही बोरी आटा पका था। फिर चाय दूध चीनी की गिनती ही नहीं कि कितना खर्चा हुआ था।

*( गिआनी मेहर सिंघ जी रचित पुस्तक*
*नौ रतन में से धन्यवाद सहित )*

# स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार
## (Inspired Thoughts of Swami Ram)

*डा. स्वामी राम जी*

*अनुवादक - शमशेर सिंह 'कोमल'*

*( श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जून, पृष्ठ - 62 )*

अन्दर की शान्ति व खुशी, ये दोनों चीजें प्रत्येक के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। जितनी जरूरी ये चीजें प्राचीन समयों में थीं, उतनी ही जरूरी ये आज के समय में हैं। यह समझना बहुत ही आवश्यक है कि हम खुश कैसे रह सकते हैं। हम हमेशा यह सोचते रहते हैं लोग किसी अन्य जगह पर प्रसन्न हैं और किसी अन्य जगह पर ही लोग कहीं अधिक प्रसन्न हैं लेकिन यह बात ठीक नहीं है। वास्तविकता यह है कि प्रत्येक व्यक्ति बेचैन भी है और अप्रसन्न भी है। इसका मुख्य कारण यह है कि मनुष्य ने प्रसन्नता के श्रोत को ही नहीं समझा है और न ही उसे जाना है। तुम कहाँ पर रहते हो, बाहरी संसार में क्या है, तुम्हारे पास क्या है, इसका कोई महत्व नहीं है, जब तक कि तुम आन्तरिक रूप से शान्त नहीं हो और जब तक तुम शान्त नहीं हो, तब तक तुम खुश हो ही नहीं सकते हो।

इसे समझने के लिए तुम्हें दो चीजों को समझने की नितान्त आवश्यकता है। एक है तुम्हारा अन्दर और दूसरा है तुम्हारा बाहर। इसी प्रकार से जीने की भी दो धारणाएँ हैं। एक धारणा है कि स्वयं को बाह्य संसार में खुश रखो तो फिर तुम्हारा अन्दर भी खुश रहेगा। दूसरी धारणा यह है कि तुम अपने अन्दर को खुश रखो फिर यह खुशी बाहर भी प्रकट होगी। लेकिन एक मार्ग इन दोनों में ही है, जिसे कि तुम दोनों ही कर सकते हो। तुम स्वयं को बाहरी संसार में भी खुश रख सकते हो। बस इसके लिए तुम्हें अपनी मनोवृत्ति को ठीक रखने की जरूरत है। तुम संसार में किस प्रकार से विचरण करते हो, अपना काम किस प्रकार से करते हो, किस प्रकार से बोलते हो, इसके साथ-साथ तुम आन्तरिक तौर पर खुश रह सकते हो। वास्तव में ऐसा तुम उस सत्य के साथ जुड़े रह कर सकते हो जिसे कि परमात्मा कहा जाता है और जो मन, शरीर व इन्द्रियों से परे है। तुम्हें वह सत्य तभी समझ में आ पाएगा, जब तुम दोनों को ही अच्छी तरह से जान व समझ लोगे।

हम सभी लोग शान्त रहना चाहते हैं और सभी ही खुश रहना चाहते हैं। इसीलिए तो हम वस्तुओं का उपभोग करना चाहते हैं, वस्तुओं व पदार्थों का स्वाद लेना चाहते हैं। हम यह सब कुछ इसीलिए करते हैं ताकि हमें खुशी व शान्ति मिले लेकिन प्रायः होता यह है कि हम उन वस्तुओं व पदार्थों का उपभोग करते हुए अपेक्षाकृत और अधिक अशान्त हो जाते हैं। यह सोचने की कोशिश करो और देखो कि कोई एक भी खुशी, एक भी सुख, ऐसा है जो कि स्थाई सुख प्रदान कर सकता है? नहीं, ऐसा नहीं हो सकता है, यह सम्भव ही नहीं है। उदाहरण के तौर पर तुम्हारे पास एक घड़ी है जो कि तुम्हें अत्यन्त प्रसन्नता देती है, लेकिन फिर वह कहीं खो जाती है तो फिर वह घड़ी तुम्हारे लिए बहुत अधिक दुख का कारण बन जाती है। तुम सांसारिक चीजों को बहुत अधिक सुखदाई मानते हो, तुम्हें ऐसा प्रतीत होता है कि अमुक चीज प्राप्त करके तुम्हें बहुत अधिक शान्ति व खुशी प्राप्त हो जाएगी लेकिन ऐसा कभी नहीं होता है। सांसारिक वस्तुएँ तुम्हें कभी भी खुशी और शान्ति नहीं दे सकती हैं। बाह्य संसार की चीजें तुम्हें खुशी व शान्ति दे ही नहीं सकती हैं। मानसिक शान्ति के बिना तुम कभी भी खुश नहीं रह सकते हो।

अतः आओ! सबसे पहले यह देखें कि हमारा मन किस प्रकार से अशान्त होता है अथवा वह किस प्रकार से बेचैन रहता है। यदि हम अपने मनोभावों को समझ लें तो फिर हम खुश रहना सीख सकते हैं। संसार के अन्दर बहुत सारे लोग ऐसे मौजूद हैं जो कि जीवन को भोगते हैं, स्वादानुभूति करते हैं, खुश रहते हैं, शान्त रहते हैं और स्थिर रहते हैं तथा वे सदा ही इस अवस्था में रहते हैं। इसका कारण यह है कि उन्होंने अपने आन्तरिक और बाह्य संसार में पुल बना लिया है। प्रायः लोग इन दोनों स्थितियों में से एक में ही फँस कर रह जाते हैं। जो संसार में फँस जाते हैं वे अपनी अशान्ति के कारण को समझ ही नहीं पाते हैं। जो दूसरी तरफ वाले हैं वे अपनी अशान्ति के कारण को जान जाते हैं और समय के अन्तराल के साथ उसे दूर कर लेते हैं और इस प्रकार वे आन्तरिक और बाह्य अशान्ति से मुक्त रहते हैं।

वेद, जो कि सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं, बतलाते हैं कि जब

तुम्हारी इन्द्रियाँ ठीक हैं, तुम्हारा मन शान्त है और तुम्हारे अन्दर कोई द्वन्द्व नहीं है तो इसका तात्पर्य है कि तुमने ज्ञान प्राप्त कर लिया है। वास्तव में ज्ञान का मार्ग जागृति का मार्ग है। वैसे यह बहुत छोटा है लेकिन फिर भी कठिन बहुत है। जब हम यह सोचते हैं कि कोई बाहर से आकर हमें जागृत करेगा, ज्ञान का प्रकाश प्रदान करेगा तो यह असम्भव बात है। जब तक तुम अपनी जिम्मेदारी स्वयं नहीं लेते हो, स्वयं को नहीं समझते हो, अपनी अवस्था को नहीं समझते हो, तब तक तुम्हें प्रसन्नता की प्राप्ति नहीं हो सकती है। तुम्हें अपने आपको समझना पड़ेगा, जानना पड़ेगा, तभी मंजिल की प्राप्ति हो सकेगी।

## दोनों संसारों का जोड़

भले ही आन्तरिक व बाह्य संसार में फर्क है लेकिन ये दोनों पूर्णतः पृथक नहीं हैं। यही कारण है कि हमें इन दोनों को जोड़ना पड़ेगा और दोनों को जोड़ने के लिए पुल बनाना पड़ेगा। यदि तुम्हें बाह्य संसार में विचरण करना नहीं आता है तो तुम खुश नहीं रह सकते हो। तुम्हारा जीवन, तुम्हारे रिश्ते, एक ही बात है। तुम इन्हें पृथक नहीं कर सकते हो। किसी न किसी प्रकार से, कहीं न कहीं, प्रत्येक व्यक्ति, किसी के साथ सम्बन्ध रखता है यानि कि वह जुड़ा हुआ है, यहाँ तक कि स्वामी या योगी भी अपने अभ्यास के साथ जुड़ा हुआ है। स्वामी के सांसारिक रिश्ते नहीं होते हैं, यह बात तो ठीक है लेकिन वह अपने साधकों के साथ व विद्यार्थियों के साथ जुड़ा हुआ है और वह उनकी तरक्की के लिए कार्य करता है। हमें अपने रिश्तों को बनाकर रखना चाहिए, यह बहुत आवश्यक बात है। यदि हम अपने रिश्तों को अच्छा बनाकर नहीं रखते हैं तो हम कभी भी शान्त नहीं रह सकते हैं। यदि हम अपने कर्तव्यों का निर्वाह बखूबी नहीं करते हैं तो भी हमारे लिए वह एक समस्या बन जाती है क्योंकि हम जहाँ कहीं भी चले जाएँ, तो हमारा मन तो हमारे साथ ही रहेगा और मन ही सारी समस्याओं की जड़ है।

तुम्हारे बीच से बहुत सारे लोग कहेंगे कि मैंने तो अपनी तरफ से बहुत अच्छा किया है, बाह्य संसार में सब कुछ किया है लेकिन वह फिर भी खुश नहीं है। एक बात हमेशा याद रखो कि रिश्तों के बीच में बहुत बार अहंभाव आकर खड़ा हो जाता है। उदाहरण के लिए दो लोग इकट्ठे रहना चाहते हैं लेकिन उनकी हउमै बीच में आकर खड़ी हो जाती है। एक कहता है कि मुझे यह चाहिए और दूसरा कहता है कि मुझे वह चाहिए। इस अहंभाव के कारण ही दोनों के बीच समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं। यह समझने की बात है कि रिश्तों के बीच अहंभाव सबसे बड़ी रुकावट है। आज के समय में हउमै सबसे बड़ी समस्या है। इसका कारण यह है कि बचपन से ही, इसे हल करने का हमें प्रशिक्षण नहीं दिया जाता है। सभी की इच्छाएँ तो होती ही है लेकिन यदि हम सभी लोग उन्हें पूरी करने लग पड़ेंगे तो स्वाभाविक है कि अशान्ति उत्पन्न हो जाएगी।

तुम्हें दूसरे लोगों से खुशी की उम्मीद नहीं करनी चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति पूछता है, क्या आप मुझे प्यार करते हो? इस बात की तो जरूरत ही नहीं होती है। तुम स्वयं को ही देख सकते हो कि तुम दूसरे को कितना प्यार करते हो। तुम दूसरे को मत पूछो कि वह तुम्हें कितना प्यार करता है। वह प्यार नहीं बल्कि एक उम्मीद होती है और प्रायः दूसरों से बहुत अधिक उम्मीद करते हो। तुम केवल प्यार करो न कि दूसरे से सवाल पूछो। आज सारा संसार दुखी है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति पूछता है तुम मुझे प्यार करते हो? तुम दूसरों से यह उम्मीद करते हो कि वे तुम्हें प्यार करें लेकिन तुम दूसरों को प्यार नहीं करते हो। प्यार का तात्पर्य उम्मीद रखना नहीं बल्कि प्यार का तात्पर्य है – सचेतनता। यदि तुम यह जान जाओ, समझ जाओ कि प्रत्येक के दिल में अनन्तता है, परमात्मा है तो तुम उसे स्वाभाविक रूप से प्यार करोगे, फिर तुम यह कह सकोगे कि मैं तुम्हें प्यार करता हूँ लेकिन तुम्हारे शरीर, मन या इन्द्रियों को नहीं अपितु मैं तुम्हारे अन्दर निवास कर रहे परमात्मा या जागृत ज्योति को प्यार करता हूँ। हम सब लोग एक दीपक की तरह से हैं। तुम्हारे अन्दर की ज्योति ठीक उसी प्रकार की है जिस तरह से कि मेरे अन्दर की ज्योति है और मैं उसी ज्योति को प्यार करता हूँ। जब तुम दूसरों को प्यार करते हो तो तुम स्वयं को ही प्यार करते हो और जब यह बात समझ में आ जाती है तो फिर यह बहुत ही सरल हो जाता है। अतः अपनी धारणा को बदलो कि जीवन क्या है और जीवन की रुचि को बदलो। जीवन को एक कविता की तरह से सौन्दर्ययुक्त बनाओ।

---

*( पृष्ठ 48 का शेष )*

महीने तथा चौबीस दिनों में सम्पूर्ण की और आप जी 30 मार्च सन् 1664 ई. को दिल्ली में साकार से निराकार हो गए।

अन्तिम समय में आप जी ने पाँच पैसे व नारियल हाथ में लेकर अपनी बाँह को तीन बार ऊँचा करके घुमाया और कहा, 'बाबा बकाला'।

गुरू जी द्वारा इस प्रकार का संकेत करना तथा सिक्खों को सही गुरू ढूंढ़ने के लिए परीक्षा में डालना भी, उन्हें दी जाने वाली शिक्षा और उपदेश का ही एक भाग था।

सतगुरू जी की मन तथा तन के रोगों को दूर करने वाली शक्तियों को अनुभव करते ही श्री दशमेश जी ने फुरमान किया है कि –

*श्री हरि किशन धिआईऔ जिस डिठै सभि दुख जाइ।*
*(वार श्री भगउती जी की)*

## रतवाड़ा साहिब में महापुरुषों के प्रवचनों का कार्यक्रम

प्रत्येक रविवार रतवाड़ा साहिब

( 12.00 बजे से 4.00 बजे तक )

पूर्णमाशी - 26 अगस्त, दिन रविवार।

( रात्रि 07.00 बजे से 10.00 बजे तक )

संक्रान्ति - भाद्रपद, 17 अगस्त, दिन शुक्रवार।

( प्रातः 5.30 बजे से 8.00 बजे तक )

अमृत संचार - महीने के प्रथम रविवार को गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब में सुबह 11.00 बजे होता है, लेकिन अगस्त माह में 8 अगस्त को ही अमृत संचार होगा।

## INTERNET MEDIA AND LIVE TELECAST

Website : www.ratwarasahib.in

Website : www.ratwarasahib.org

Instagram : RATWARA SAHIB (https://instagram.com/ratwara.sahib/)

You Tube : https://www.youtube.com/user/babalakhbirsingh

Facebook : https://www.facebook.com/ratwarasahib1

Twitter : https://mobile.twitter.com/ratwarasahib13

Live Audio Link 1 - https://www.awdio.com/Ratwara Sahib

Live Audio Link 2 - https://mixlr.com/ratwara-sahib

E-mail :- sratwarasahib.in@gmail.com

***Contact - 9569455861, 9417912900, 9814612900***

# आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यूिवल या दसवंद पंजाब एंड सिंध बैंक की किसी भी शाखा द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में भेजी जा सकती है।

## भारत (INDIA)

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यूिवल भेजने के लिए -

**VGRMCT / Atam Marg Magazine**
**S/B A/C No. 12861000000003** **RTGS/IFSC Code - PSIB0021286**
**Branch Code - C1286**

दसवंद भेजने के लिए -

**Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust**
**SB A/C No. 12861100000005** **RTGS/IFSC Code - PSIB0021286**
**Branch Code - C1286**

## विदेश (ABROAD)

**Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust**
**Punjab National Bank** **SB A/C No. 0779000100179603**
**RTGS/IFSC Code - PUNB0077900** **Branch Code - 077900**

यदि चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा राशि भेजनी हो तो ऊपरलिखित खातों अनुसार **Gurdwara Ishar Parkash Ratwara Sahib, P.O. Mullanpur Garibdas. Distt S.A.S. Nagar (Mohali) - 140901** पर भेजने की कृपा करें। यदि **Online** राशि भेजनी हो तो राशि की जानकारी देते समय अपना नाम व पूरा पता मोबाइल नं. +91-98889-10777 पर **SMS** भेजें जी।

---

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि यदि आपने अभी तक आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की सदस्यता ग्रहण नहीं की है तो आप कृप्या अधोलिखित प्रारूप पत्र को भरकर सदस्यता ग्रहण करने की कृपा करें। यदि आप पहले से ही सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं, तो पुनर्नवीनीकरण हेतु इस प्रारूप पत्र के साथ आवश्यक चैक/ड्राफ्ट "VGRMCT/ATAM MARG MAGAZINE" के नाम पर प्रेषित करने की कृपा करें।

Subscription form ✓ ☐ नई सदस्यता ☐ पुनर्नवीनीकरण ☐ आजीवन सदस्यता

within India

| Subscription Period | By Ordinary Post/Cheque | By Registered Post/Cheque | | Annual | Life |
|---|---|---|---|---|---|
| 1 Year | Rs. 300/320 | | U.S.A. | 60 US$ | 600 US$ |
| 3 Year | Rs. 750/770 | | U.K. | 40 £ | 400 $ |
| 5 Year | Rs. 1200/1220 | | Europ | 50 Euro | 500 Euro |
| Life | Rs 3000/3020 | | Australia | 80 Aus $ | 800 Aus $ |

जनवरी ☐ फरवरी ☐ मार्च ☐ अप्रैल ☐ मई ☐ जून ☐ जुलाई ☐ अगस्त ☐ सितम्बर ☐ अक्तूबर ☐ नवम्बर ☐ दिसम्बर ☐

नाम/Name पता/Address.................................................................................

.................................................................................

.................................................................................Pin Code............. Phone ............... E-mail :..........................

# सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल, रतवाड़ा साहिब

समय - सुबह 9.30 बजे से 2.00 बजे तक (रविवार से शुक्रवार)

डाक्टरों का समय - सुबह 10.00 बजे से 12.00 बजे तक

दूरभाष नं. 98786-95178, 92176-93845

| डा. का नाम | विशेषज्ञ | दिन |
|---|---|---|
| 1. डा. जसबीर कौर | जनरल मैडिसन | सोमवार |
| 2. डा. गुरिंदर कौर कंग | एम. डी. (गाइनी) | सोमवार |
| 3. डा. कुलदीप सिंह कंग | एम. डी. (आँखों के विशेषज्ञ) | सोमवार |
| 4. डा. हरबंस सिंह | अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन | मंगलवार |
| 5. डा. तेजिंदर सिंह | जनरल मैडिसन | मंगलवार |
| 6. जे.पी.आई. अस्पताल मोहाली के डाक्टर | आँखों के विशेषज्ञ | मंगलवार |
| 7. डा. जतिन्दर सिंह तथा डा. कोमलप्रीत कौर | दाँतों के विशेषज्ञ | मंगलवार |
| 8. श्री माइकल जी | एक्स-रे विशेषज्ञ | मंगलवार तथा वीरवार |
| 9. डा. भगत सिंह मक्कड़ | जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि | बुद्धवार |
| 10. डा. जे. एस. गुजराल | जनरल मैडिसन/शिशु रोग विशेषज्ञ | बुद्धवार |
| 11. डा. आर. एस. संधू | अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन | वीरवार |
| 12. डा. संतोष अनेजा | जनरल मैडिसन | वीरवार |
| 13. डा. एस. के. बांसल | जनरल मैडिसन | शुक्रवार |
| 14. डा. बरिन्दर सिंह | जनरल मैडिसन तथा त्वचा रोग विशेषज्ञ, एअरो स्पेस मैडिसन | शुक्रवार |
| 15. डा. भगत सिंह मक्कड़ | जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि | रविवार |
| 16. डा. जिंदल | जनरल मैडिसन | रविवार |
| 17. डा. गुरप्रीत कौर गिल | होम्योपैथिक | बुद्धवार |
| 18. बीबी हरनीत कौर | फिजियोथैरेपिस्ट | सोमवार तथा शुक्रवार |

## -: लैबोरेटरी टैस्ट तथा अन्य सुविधाएँ :-

1. खून टैस्ट, 2. सारे खून सैल काउंट टैस्ट 3. ब्लड शुगर टैस्ट, 4, किडनी टैस्ट, 5. लीवर टैस्ट, 6. लिपिड परोफाइल टैस्ट, 7. थायराइड टैस्ट, 8. हिमोग्लोबिन टैस्ट, 9. पेशाब टैस्ट, 10. स्टूल टैस्ट, 11. ई.सी.जी., 12. एक्स-रे (क्ष-किरण)

**सारे लैबोरेटरी टैस्ट आधे शुल्क पर किये जाते हैं तथा मरीज को दवाई मुफ्त दी जाती है।**

## जरूरी सूचना

प्रत्येक रविवार को अस्पताल खुला रहेगा। समय 11.00 से 1.00 बजे तक। प्रत्येक शनिवार को अस्पताल बन्द रहेगा।

मई महीने से पूर्णमाशी के समागम दिन की जगह रात को हुआ करेंगे। समय शाम 7.00 बजे से रात 10.00 बजे तक।

# विश्व गुरमत रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट

## के मुख्य संस्थापक प्यारे महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तकें

यह पुस्तकें श्री गुरू ग्रन्थ साहब जी के गूढ़ सिद्धान्तों को सरल रूप में स्पष्ट करके जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इनकी विषय वस्तु के रूप में नाम, सेवा व स्मरण की विधियों को प्रस्तुत करते हुए जन साधारण की भाषा का अत्यन्त सरल, मार्मिक व हृदयस्पर्शी प्रयोग किया गया है। यह दुर्लभ पुस्तकें, प्रत्येक जिज्ञासु व साधक के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में हैं। अध्यात्मिक सुख व शान्ति प्राप्त करने हेतु आप इन्हें प्राप्त करके स्वयं पढ़ें तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। यह सभी पुस्तकें गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहब में आपकी सेवार्थ उपलब्ध हैं -

| हिन्दी | |
|---|---|
| 1. सुरति शबद मार्ग | 70/- |
| 2. किव कुड़ै तुटै पालि | 35/- |
| 3. बात अगंम की - सात भागों में | 400/- |
| 4. किव सचिआरा होइए - भाग पहला | 35/- |
| 5. किव सचिआरा होइए - भाग दूसरा | 65/- |
| 6. किव सचिआरा होइए - भाग तीसरा | 100/- |
| 7. होवै आनन्द घणा | 30/- |
| 8. बाबाणियाँ कहानियाँ | 50/- |
| 9. सुरतिआं उपजै चाउ | 40/- |
| 10. सर्व प्रिय गुरू गोबिंद सिंह जी | 10/- |
| 11. भक्त प्रहलाद | 10/- |
| 12. अमृत फुहार | 10/- |
| 13. अगम अगोचर का मार्ग | 70/- |
| 14. जपुजी साहिब सटीक | 15/- |
| 15. अमर ज्योतियाँ | 15/- |
| 16. अमर गाथा | 100/- |
| 17. वैशाखी | 10/- |
| 18. साजन चले प्यारिआ | 10/- |
| 19. अविनाशी ज्योति - भाग 1 | 90/- |
| 20. रूहानी गुलदस्ता | 70/- |
| 21. चउथै पहरि सबाह कै | 60/- |

| English Version | Price |
|---|---|
| 1. Baisakhi | Rs. 5/- |
| 2. How Rend The Veil of Untruth | Rs. 70/- |
| C. Discourses on the Beyond -1 | Rs 50/- |
| 4. Discourses on the Beyond -2 | Rs. 50/- |
| 5. Discourses on the Beyond -3 | Rs. 50/- |
| 6. Discourses on the Beyond -4 | Rs. 60/- |
| 7. Discourses on the Beyond -5 | Rs. 60/- |
| 8. The way to the imperceptible | Rs. 80/- |
| 9. The Lights Immortal | Rs. 20/- |
| 10. Transcendental Bliss | Rs. 70/- |
| 11. How to Know Thy Real Self-(Vol-1) | Rs. 80/- |
| 12. How to Know Thy Real Self-(Vol-2) | Rs. 80/- |
| 13. How to Know Thy Real Self-(Vol-3) | Rs. 110/- |
| 14. The Dawn of Khalsa Ideals | Rs. 10/- |
| 15. A Glimpse of His Holiness - Baba ji | Rs. 5/- |
| 16. Divine Word Contemplation Path | Rs. 150/- |
| 17. The Story of Immortality | Rs. 260/- |
| 18. Why not Contemplate the Lord | Rs. 200/- |

ऊपरलिखित पुस्तकें आप जी मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा रतवाड़ा साहिब से मंगवा सकते हैं या ट्रस्ट के अकाउंट में राशि जमां करवा कर मोबाइल नं. **9417214391, 8437812900, 9417214379** पर सूचित कर सकते हैं। **Bank Name : Pb & Sind Bank, A/c Name. VGRMCT/ATAM MARG MAGAZINE, S/B A/C No. 12861000000003, RTGS/IFSC Code - PSIB0021286, Branch Code - C1286**

# How to become true to the Creator

*Sant Waryam Singh Ji*
*English Translation: Prof. Beant Singh*

*(Continued from P. 76, issue July, 2018)*

> *'The Lord spontaneously accomplishes the tasks of those, to whom His Name is dear.'*
> *P. 638*

**ਅਚਿੰਤ ਕੰਮ ਕਰਹਿ ਪ੍ਰਭ ਤਿਨ ਕੇ**
**ਜਿਨ ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਪਿਆਰਾ ॥**

So, with the reply to his letter, that devotee went to the holy man. Suddenly, he said, "Much time has passed. I had told you to deliver the letter and come back after getting its reply. How is it that you are not even ready to go?" He said, "Sir! the reply to your letter is with me. Kindly read it." As the holy man caught hold of the letter, he was surprised to think: "It takes twelve hours to cover a distance of 40 miles. So twelve hours for going and twelve hours for the return journey, plus sometime for taking food and rest. How has he brought the reply so soon?" He said, "My dear! It is beyond my understanding how you have brought the reply so quickly." He replied, "Sir, I haven't brought the reply. It is my '*Pareh, Pareh*' Ji, who has brought the reply." The holy man asked in amazement, "Whom are you calling '*Pareh! Pareh!*'?" He said, "Sir! you had given me the '*Gurmantar* of *Pareh! Pareh!*" The holy man had forgotten it completely. The devotee reminded him, "Sir! it was on the day when you had asked me to come at eight o'clock in the morning to receive the '*Gurmantar*' (Guru-given chant). On that very day, the king was also to come to see you. Standing outside your cottage, you were waiting for me, and when, in hurry, I reached near the carpets spread in front of your cottage, you very kindly gave me the chant – '*Pareh! Pareh!*'" The holy man was puzzled and surprised at this. After sending him away, to comprehend this riddle, he went into deep contemplation and became absorbed in God's devotional worship. He used to experience God's transcendent form pervading all the time. At that moment, he heard God's voice from heaven: "O holy man! don't be surprised. This name of '*Pareh! Pareh!* [Away! Away!] is my Name because I am away from and beyond all the visible world, the entire nature and every object. I am beyond 'the beyond' and my name is: 'Infinite Transcendent God.' So, this devotee has worshipped my 'Infinite Name'. I am always pleased at seeing the devotional worship of my devotees. So, bound by his love and devotion, I myself brought the reply to your letter." These are tales narrated by perfect holy men who had realized the Ultimate Spiritual Reality, which go to prove that by having complete faith in the Guru (Holy Preceptor), a devotee can swim across the world ocean. Therefore, he who does not laud his Guru (Holy Preceptor), and concealing him (Guru) shows off his own self – 'I am everything, while my Guru is nothing' – can never tread and progress on

the path of spirituality.

*Brahmgyani* Sant Gurbachan Singh Ji in his book *'Gurmukh Parkash Granth'* has provided some material for fashioning the holy Word of the 'True Mint', in which he has stated –

*'They do not laud their own merits;*
*Describe they not their own religious attainment.'*
ਅਪੁਨੇ ਗੁਣ ਕੀ ਸਿਫਤ ਨਾ ਕਰਨੰ॥
ਧਰਮ ਨਿਜ ਜਸੁ ਹੇਤ ਨ ਬਰਨੰ॥

By engaging in spiritual endeavour, man acquires many virtues. Intelligent and enlightened persons continue praising such merits. The holy man of merit, on hearing such praises is filled with humility. He is of the considered opinion: "People praise me for nothing. It is the grace of the Guru who has given me the strength and ability to discourse on God, blessed me with an excellent brain or intellect, knowledge and education. It is he who ought to be praised and lauded."

Revered holy congregation! he who indulges in self-adulation cannot be a wayfarer of the path of spirituality. He can cheat the world all right but it is not pleasing to God. Now-a-days, it is generally seen that common householders are not tired of praising themselves. During elections, it has been seen that candidates praise themselves profusely even if they have taken huge bribes and done many wrongs during their rule. Ignoring all these facts, they indulge in self-praise. In former times, if somebody praised himself, he was dubbed as 'self-applauding'. But today, it is a common habit that everybody is busy heaping praises in self-praise. They describe their miraculous feats in detail. If an utterance happens to be made spontaneously, it is a different matter, but certainly, it does not behove a holy man to describe his miraculous spiritual powers in detail.

Bhai Gurdas Ji says –

*'In this age (Kalyuga) only devotional love and worship is acceptable and not 'yagya' and 'hom' (sacrificial ritual in which offerings are burnt).*
*In this age, God takes into account only His devotional worship done with humility.'*
*Bhai GurdasJi, Var 1/16*

ਭਾਉ ਭਗਤਿ ਪਰਵਾਨ ਹੈ
ਜੱਗ ਹੋਮ ਤੇ ਪੁਰਬ ਕਮਾਈ।
ਕਰਕੇ ਨੀਚ ਸਦਾਵਣਾ
ਤਾਂ ਪ੍ਰਭੁ ਲੇਖੈ ਅੰਦਰ ਪਾਈ।

*'Sans the Guru, virtues shine not and sans virtues Lord's devotional service cannot be performed.'* *P. 67*

ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਗੁਣ ਨ ਜਾਪਨੀ
ਬਿਨੁ ਗੁਣ ਭਗਤਿ ਨ ਹੋਇ॥

When man praises his merits, he is totally oblivious of the fact that the repository of all virtues is God Himself. He alone gets them on whom the Lord confers–

*'On the meritless O Nanak, He does merit confer, and the meritless He makes prosper.'*
*P. 2*

ਨਾਨਕ ਨਿਰਗੁਣਿ ਗੁਣੁ ਕਰੇ
ਗੁਣਵੰਤਿਆ ਗੁਣੁ ਦੇ॥

God is the storehouse of all merits and virtues. What one ought to say is this: 'O Lord! it is your boundless grace that you have conferred merits on me due to which the world is praising me. It is you who grant understanding unto me. Of all Thy boons, if you take away just one, man is left of no use and importance. If a man suffers from paralysis, what can he do? It is God's grace that he has a healthy body. All the gifts are God-given; they are invaluable. It is God who bestows intellect and wisdom, but when

his bad days come, his wisdom is destroyed–

*'By the Lord's grace does wisdom abide in the heart and by His will leaves the body.'*
*(Proverb)*

*ਹੋਣ ਹਾਰ ਹਿਰਦੇ ਬਸੀ ਗਈ ਸਰੀਰੋਂ ਬੁੱਧ।*

So, all the virtues and merits in man are God-bestowed. A virtuous person should not praise his merits even by mistake. He should regard his merits as the gift of God–

*'The pious or holy never describe their religious attainments.'*

*ਧਰਮ ਨਿਜ, ਜਸੁ ਹੇਤ ਨ ਬਰਨੰ।*

A pious or holy person has many virtues. When he employs them in his daily life, then he comes to be known as a holy man. These qualities include: patience, forgiveness, mercy, modesty, purity, charity, contentment, politeness, service etc. A holy man is one who has completely restrained the tendency to slander others and he is wedded to four subtle brides, namely, compassion, happiness in others' well-being, friendship and hope. As a result, he neither slanders others, nor harbours enmity and envy against anyone. He loves his equal, praises his superior and helps the poor. Instead of becoming inimical towards anyone, he adopts a forgiving attitude and gradually withdraws from him. Guru Sahib has said that meritless persons depart from the world after losing their life in a gamble. On the other hand, God's devotees imbibe virtues as per the *Gurbani* edict –

*'Lust, wrath, intoxication with self and envy*
*All these in our gamble we lost.*
*Truth, content, compassion and righteousness –*
*To all these in our home we accorded entry.'*
P. 379

*ਕਾਮ ਕ੍ਰੋਧ ਮਾਇਆ ਮਦ ਮਤਸਰ*
*ਏ ਖੇਲਤ ਸਭਿ ਜੂਐ ਹਾਰੇ॥*
*ਸਤੁ ਸੰਤੋਖੁ ਦਇਆ ਧਰਮੁ ਸਚੁ*
*ਇਹ ਅਪੁਨੈ ਗ੍ਰਿਹ ਭੀਤਰਿ ਵਾਰੇ॥*

Guru Sahib has cautioned us again and again to trade in virtues. He advises us not remember others' faults or demerits because everybody has one quality or the other. Ignoring his faults, we should imbibe his virtues, as per the *Gurbani* edict –

*'Should one bear a casket of fragrant merits, occasionally one must open it, the fragrance to take in.*
*Should one's friends bear merits, must these be shared.*
*Sharing merits, discarding demerits should one tread life's way.*
*Wearing silks of merits, decking oneself, one should occupy one's place on the stage.'*
P. 765

*ਗੁਣਾ ਕਾ ਹੋਵੈ ਵਾਸੁਲਾ*
*ਕਢਿ ਵਾਸੁ ਲਈਜੈ॥*
*ਜੇ ਗੁਣ ਹੋਵਨਿ ਸਾਜਨਾ*
*ਮਿਲਿ ਸਾਝ ਕਰੀਜੈ॥*
*ਸਾਝ ਕਰੀਜੈ ਗੁਣਹ ਕੇਰੀ*
*ਛੋਡਿ ਅਵਗਣ ਚਲੀਐ॥*
*ਪਹਿਰੇ ਪਟੰਬਰ ਕਰਿ ਅਡੰਬਰ*
*ਆਪਣਾ ਪਿੜੁ ਮਲੀਐ॥*

When man lives by imbibing these virtues, he becomes pleasing to God –

*'With faults within me lodged am I pining –*
*How without merit may one reach one's true home?*
*Those with merit, through their merit with the Lord find union –*
*How with love may I to them be united?*
*Such as they must I become, by contemplating in my heart the Lord.*
*The self with demerits is full – abiding therewith too are merits.*
*Without the holy Preceptor's guidance are not manifested merits*
*Till one to the holy Word be devoted.'*
P. 936

*ਮੈ ਤਨਿ ਅਵਗਣ ਝੁਰਿ ਮੁਈ*
*ਵਿਣੁ ਗੁਣ ਕਿਉ ਘਰਿ ਜਾਹ॥*
*ਗੁਣੀਆ ਗੁਣ ਲੇ ਪ੍ਰਭ ਮਿਲੇ*
*ਕਿਉ ਤਿਨ ਮਿਲਉ ਪਿਆਰਿ॥*
*ਤਿਨ ਹੀ ਜੈਸੀ ਥੀ ਰਹਾਂ*

*ਜਪਿ ਜਪਿ ਰਿਦੈ ਮੁਰਾਰਿ॥*
*ਅਵਗੁਣੀ ਭਰਪੂਰ ਹੈ*
*ਗੁਣ ਭੀ ਵਸਹਿ ਨਾਲਿ॥*
*ਵਿਣੁ ਸਤਗੁਰ ਗੁਣ ਨ ਜਾਪਨੀ*
*ਜਿਚਰੁ ਸਬਦਿ ਨ ਕਰੇ ਬੀਚਾਰੁ॥*

It is by meeting the true holy Preceptor that virtues are imbibed. So, imbibing superior virtues or qualities is very essential. This too should be kept in mind that virtues are obtained in the holy company of the True Guru. The True Guru grants understanding of the Name Divine which is full of all the virtues. Therefore, virtues or merits are the gift of God. If someone praises his qualities, he is not a wise person. On the other hand, all the demerits or faults are like shackles round one's neck. If the Name Divine is recited and contemplated with the Guru's grace, these demerits can be annulled –

*'Saith Nanak: All evils or sins are like chains thrown round the neck.*
*These by good qualities are snapped, who are our true brothers and helpers.'* *P. 595*

*ਨਾਨਕ ਅਉਗੁਣ ਜੇਤੜੇ ਤੇਤੇ ਗਲੀ ਜੰਜੀਰ॥*
*ਜੇ ਗੁਣ ਹੋਨਿ ਤ ਕਟੀਅਨਿ ਸੇ ਭਾਈ ਸੇ ਵੀਰ॥*

Just one virtue of 'compassion' is found pleasing by God, such as –

*'Showing compassion to sentient beings is more acceptable to God than bathing at sixty-eight places of pilgrimage and giving all kinds of charities.'* *P. 136*

*ਅਠਸਠਿ ਤੀਰਥ ਸਗਲ ਪੁੰਨ*
*ਜੀਅ ਦਇਆ ਪਰਵਾਨੁ॥*

Guru Sahib has accorded a very high position to 'compassion' or 'pity'. For God's recognition and realization, Guru Sahib has told us a very lofty abode. If there is pity or compassion in the heart and one considers all creatures as God's own image, one spontaneously does deeds of charity. He who slaughters animals for his food, his thinking too becomes brutish. His act of killing animals thoughtlessly is very painful. He will appreciate the cruelty of deed if he imagines a doe that feeds its two little ones stealthily. If somebody shoots the doe, how will its little ones find their feed? They fall a prey to some jackal or leopard. This is a sin which that thoughtless person commits for his food. What was the fault of those little ones? Similarly, birds are also killed for food while their chicks die of neglect. These are grave sins. By eating flesh, first one's temperament becomes harsh and cruel. Then man becomes oblivious of God who is the creator of all, and who has produced food for man whom He (God) has made the crowning wonder, the chief among all beings. It is not the work of the leader to rob and plunder his subjects. God has conferred the leadership of all creatures on man. Such is the *Gurbani* edict –

*'Other creatures are thy water-carriers (slaves),*
*In this world, the supremacy is with thee.'* *P. 374*

*ਅਵਰ ਜੋਨਿ ਤੇਰੀ ਪਨਿਹਾਰੀ॥*
*ਇਸੁ ਧਰਤੀ ਮਹਿ ਤੇਰੀ ਸਿਕਦਾਰੀ॥*

All other species are meant to serve man. Some creatures yield nectarine milk. The bees collect honey. Horses serve man in fighting battles and wars. Cows provide rivers of milk. They need man's kindness and mercy. They should not be slaughtered for food. It is no mark of religiosity and righteousness. Man is so cunning that he kills animals in the name of sacrifice to gods to eat its flesh, and calls it religion. There is a reference in *Gurbani* which says: 'My dear! if you describe killing of animals for food as religion, then what will you describe as irreligion or impiety? If you call

yourself as highly exalted and religious, whom will you call a butcher? Therefore, my dear, give up these excuses to kill animals and cause suffering to them. It is right and proper to be kind and merciful to harmless and innocent animals. Those creatures can be killed which are harmful to life and crops, such as germs and insects. If the crops are not protected from insects, the farmer is regarded as negligent. If a king does not protect his subjects, he is guilty. If army soldiers do not guard their country, they are considered negligent of their duty. In the same way, germs and bacteria causing diseases have to be tackled and destroyed. But there are creatures which are useful to man and have love and devotion for their master. It is a mark of irreligion and impiety to kill them for food. That is why Guru Sahib's edict is –

*'Slaughter of animals you dub as religion -*
*Then brother! tell what is irreligion?*
*Each other you style as saints –then who are to be called as butchers?'* P. 1103

ਜੀਅ ਬਧਹੁ ਸੁ ਧਰਮੁ ਕਰਿ ਥਾਪਹੁ
ਅਧਰਮੁ ਕਹਹੁ ਕਤ ਭਾਈ॥
ਆਪਸ ਕਉ ਮੁਨਿਵਰ ਕਰਿ ਥਾਪਹੁ
ਕਾ ਕਉ ਕਹਹੁ ਕਸਾਈ॥

Therefore, showing compassion and mercy is a very superior virtue. Compassion is pleasing to Lord God. It is a cardinal virtue in man, which creates peace and sympathy within him. The quality of sympathy or compassion is very essential to know the Lord -

*'Then alone is the mortal deemed to be true, when he receives the true instruction.*
*He shows mercy to the living beings and gives something in charity.* P. 468

ਸਚੁ ਤਾ ਪਰੁ ਜਾਣੀਐ
ਜਾ ਸਿਖ ਸਚੀ ਲੇਇ॥
ਦਇਆ ਜਾਣੈ ਜੀਅ ਕੀ
ਕਿਛੁ ਪੁੰਨੁ ਦਾਨੁ ਕਰੇਇ॥

After causing pain and suffering to the living creatures, when man suffers the consequences of his evil deeds, he weeps and wails a lot because by using his power he has slaughtered these creatures for his food. Howsoever strong and powerful you may become by eating non-vegetarian food, you will have to repent when you are called to account.

*Refrain: O my soul! thou shalt weep and wail*
*When you will be called to account ...*

ਧਾਰਨਾ – ਰੋਵੇਂਗੀ ਜ਼ਿੰਦੇ
ਜਦੋਂ ਲੇਖਾ ਦੇਣਾ ਪੈ ਗਿਆ

*'Enjoying revelments, man himself becomes a heap of ashes and his soul passes away.*
*When the worldly man dies, a chain is thrown round his neck and he is led away.*
*There, his good and bad deeds are read out to him, and seating him, his account is explained to him.*
*When thrashed, he finds no place of shelter, but hears his bewailings now.*
*The blind man has wasted away his life.'*
P. 464

ਆਪੀਨੈ ਭੋਗ ਭੋਗਿ ਕੈ
ਹੋਇ ਭਸਮੜਿ ਭਉਰੁ ਸਿਧਾਇਆ॥
ਵਡਾ ਹੋਆ ਦੁਨੀਦਾਰੁ
ਗਲਿ ਸੰਗਲੁ ਘਤਿ ਚਲਾਇਆ॥
ਅਗੈ ਕਰਣੀ ਕੀਰਤਿ ਵਾਚੀਐ
ਬਹਿ ਲੇਖਾ ਕਰਿ ਸਮਝਾਇਆ॥
ਥਾਉ ਨ ਹੋਵੀ ਪਉਦੀਈ
ਹੁਣਿ ਸੁਣੀਐ ਕਿਆ ਰੂਆਇਆ॥
ਮਨਿ ਅੰਧੈ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇਆ॥

So, the names of those persons who practised sympathy and compassion in their life, are remembered with great love and respect even today. Should however, a powerful person show sympathy or pity, he becomes eligible to receive its fruit at the Divine Portal. In this context, we find

mention of a man named Subkatddin in Afghanistan. Once he caught a doe's fawn. As he was carrying it away, its mother followed him. Observing the pathetic state of the doe, he felt pity and released its little one. It went running to its mother. At night he had a dream in which he saw an angel coming to put crown on his head. He (angel) said, "O Subkatddin! God has blessed you with the kingship of India because He has liked and approved of your act of sympathy." Subkatddin was a slave. He conquered India and founded the 'Slave Dynasty'. That is why, Guru Sahib says –

*'Cause suffering to no being: thereby with honour return to your true Home.' P. 322*

**ਦੂਖ ਨ ਦੇਈ ਕਿਸੈ ਜੀਅ**
**ਪਤਿ ਸਿਉ ਘਰਿ ਜਾਵਉ ॥**

So, some beasts are preserved species, for example, tiger and elephant. He, who kills a tiger, is punished. But nobody bothers about the preservation of other animals. Deer are killed for food indiscriminately. Violent men have killed generations of them. But my dear! always remember that you are not going to stay in the world for ever. There is a story narrated about King Dhritrashtra. He had eaten hundred chicks of s swan couple. As a Divine punishment, his hundred sons got killed in the Mahabharata war. Lord Krishna resolved the doubts and questions troubling his mind. Guru Sahib has mentioned even some spiritual embellishments to gain God's pleasure and favour, as is the Gurbani edict –

*'In thy eyes put collyrium of fear, and with love deck thyself.*
*Then alone would one be reckoned happily – wedded, when her Spouse bears love for her.' P. 722*

**ਭੈ ਕੀਆ ਦੇਹਿ ਸਲਾਈਆ**
**ਨੈਣੀ ਭਾਵ ਕਾ ਕਰਿ ਸੀਗਾਰੋ ॥**
**ਤਾ ਸੋਹਾਗਣਿ ਜਾਣੀਐ ਲਾਗੀ**
**ਜਾ ਸਹੁ ਧਰੇ ਪਿਆਰੋ ॥**

At another place, referring to the adornments of happily-wedded souls approved and accepted by the Lord Spouse, Guru Sahib has said –

*'With every breath, remember I my Lord and never go to another's door.*
*Obtaining the accredited vision of the Guru, shed I my self-conceit and worldly love.*
*I embellish myself with truthfulness, contentment, compassion and piety.*
*Fruitful has become my married life, O Nanak, by becoming pleasing to my Lord.'*
*P. 812*

**ਸਾਸਿ ਸਾਸਿ ਨਹ ਵੀਸਰੈ**
**ਅਨ ਕਤਹਿ ਨ ਧਾਵਉ ॥**
**ਸਫਲ ਦਰਸਨ ਗੁਰੁ ਭੇਟੀਐ**
**ਮਾਨੁ ਮੋਹੁ ਮਿਟਾਵਉ ॥**
**ਸਤੁ ਸੰਤੋਖੁ ਦਇਆ ਧਰਮੁ**
**ਸੀਗਾਰੁ ਬਨਾਵਉ ॥**
**ਸਫਲ ਸੁਹਾਗਣਿ ਨਾਨਕਾ**
**ਅਪੁਨੇ ਪ੍ਰਭ ਭਾਵਉ ॥**

Guru Sahib has approved of the embellishment of sympathy or compassion for becoming pleasing to God. Regarding good deeds or good way of life, Guru Sahib says–

*'The purest action is to act in the way of charity, contentment and compassion:*
*Discarding egoism, be the dust of the feet of all –*
*This, by the grace of the Formless Lord comes.' P. 812*

**ਸਤੁ ਸੰਤੋਖੁ ਦਇਆ ਕਮਾਵੈ**
**ਏਹ ਕਰਣੀ ਸਾਰ ॥**
**ਆਪੁ ਛੋਡਿ ਸਭ ਹੋਇ ਰੇਣਾ**
**ਜਿਸੁ ਦੇਇ ਪ੍ਰਭੁ ਨਿਰੰਕਾਰੁ ॥**

So, in this way, practising piety is a way of life. The qualitites mentioned above are essential for leading a pious life. This piety should be practised to please God and not to win praise for oneself. We should not practise any religious sham to win people's praise.

*'Don't cause suffering to any living being.*
*Pardon the sin of the weak.'*

ਦੁਖ ਕਿਸੇ ਨਹਿ ਜੀਵ ਕੋ ਦੇਨਾ।
ਨਿਰਬਲ ਕਾ ਅਪਰਾਧ ਸਹਿ ਲੇਨਾ।

**If God has blessed a man with power and authority, it becomes his duty that, considering the world as God's own form and image, he should give joy and peace to all. He should be ever prepared to practise virtue and do good to all, and he should not cause pain and suffering to any living being even by mistake. Guru Sahib says, "My dear brother! by doing evil deeds and causing pain and suffering to living beings, you will not become pleasing to God. Such a one loses his honour in the Divine court, and great insult and humiliation is heaped on him."**

**"This is because this human body is the field of actions. As man sows, so does he reap. Man should not forget that he leaves the physical frame all right, but the soul abiding in it carries with itself the good and bad deeds done by him. If he loses the capital of virtues, then carrying the burden of demerits, he has to climb a very steep valley. Reaching the Lord's True court, his deeds are accounted and appraised because such is the practice laid down by the Timeless One, God –**

*'The Righteous Judge is under command to sit and administer even-handed justice.*
*The evil souls professing love for duality; they are thy subjects.'* P. 38

ਧਰਮ ਰਾਇ ਨੋ ਹੁਕਮੁ ਹੈ
ਬਹਿ ਸਚਾ ਧਰਮੁ ਬੀਚਾਰਿ॥
ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਦੁਸਟੁ ਆਤਮਾ
ਓਹੁ ਤੇਰੀ ਸਰਕਾਰ॥

**In the court of the Righteous Judge go those who ask for the reward of their virtuous deeds. Secondly, go those bound in chains, who by their evil deeds have caused pain and suffering to other living beings. The Guru's edict is –**

*'Creating the beings, God has installed the Righteous Judge to record their accounts.*
*There, only the truth is adjudged as true, and the sinners are picked up and separated.*
*The false find no place there and they go to hell with blackened faces.*
*They, who are imbued with Thy Name win, O Lord.*
*They who are cheats, they lose the day.*
*God has installed Dharamraja (Righteous Judge) to record their accounts.'* P. 463

ਨਾਨਕ ਜੀਅ ਉਪਾਇ ਕੈ
ਲਿਖਿ ਨਾਵੈ ਧਰਮੁ ਬਹਾਲਿਆ॥
ਓਥੈ ਸਚੇ ਹੀ ਸਚਿ ਨਿਬੜੈ
ਚੁਣਿ ਵਖਿ ਕਢੇ ਜਜਮਾਲਿਆ॥
ਥਾਉ ਨ ਪਾਇਨਿ ਕੂੜਿਆਰ
ਮੁਹ ਕਾਲੈ ਦੋਜਕਿ ਚਾਲਿਆ॥
ਤੇਰੈ ਨਾਇ ਰਤੇ ਸੇ ਜਿਣਿ ਗਏ
ਹਾਰਿ ਗਏ ਸਿ ਠਗਣ ਵਾਲਿਆ॥
ਲਿਖਿ ਨਾਵੈ ਧਰਮੁ ਬਹਾਲਿਆ॥

**Guru Sahib says: "O mortal! now you are committing sins in concealment, but in the Divine Court all your sins will be revealed. Then you will have to weep and wail over your evil deeds because only your deeds – good and evil – will accompany you after death." Such is the *Gurbani* edict -**

*'Leaving comely raiment and beauty in this world, man departs.*
*Man himself obtains the fruit of his bad and good deeds.*
*One may issue one's heart-desired commands here, but he shall proceed by the narrow lane hereafter.*
*All-naked, when he goes to hell, he, then, looks very hideous indeed.*
*He regrets the sins he committed.'* P. 470

ਕਪੜੁ ਰੂਪੁ ਸੁਹਾਵਣਾ
ਛਡਿ ਦੁਨੀਆ ਅੰਦਰਿ ਜਾਵਣਾ॥
ਮੰਦਾ ਚੰਗਾ ਆਪਣਾ
ਆਪੇ ਹੀ ਕੀਤਾ ਪਾਵਣਾ॥
ਹੁਕਮ ਕੀਏ ਮਨਿ ਭਾਵਦੇ

*ਰਾਹਿ ਭੀੜੈ ਅਗੈ ਜਾਵਣਾ॥*
*ਨੰਗਾ ਦੋਜਕਿ ਚਾਲਿਆ ਤਾ*
*ਦਿਸੈ ਖਰਾ ਡਰਾਵਣਾ॥*
*ਕਰਿ ਅਉਗਣ ਪਛੋਤਾਵਣਾ॥*

**In this context, there is an illustrative story that when the Kauravas lost the war of Mahabharata, the five Pandva brothers alongwith Lord Krishna went to console King Dhritrashtra. He asked Lord Krishna, "Why am I blind by birth? "What is that former deed due to which I am living my life in blindness?" Lord Krishna said, "O king! In the 104th birth prior to the present one, one day you were playing with children. Children were sporting with grasshoppers. You also caught hold of a grasshopper. Plucking a thorn from a bush, you pierced its eyes through and through, and then threw it away. It died suffering in agony. As a result thereof, you have had to spend your life in blindness because according to Divine Providence, no deeds of man, good or bad, remain concealed from God. In the Divine Court, all deeds of man are revealed, as is the *Gurbani* edict –**

*'Behind closed doors and numerous screens*
*man with others' women has indulgence.*
*When the celestial Reckoners (Chitra and Gupta) call thy reckoning,*
*Who then shall give thee cover?'* *P. 616*

*ਦੇਇ ਕਿਵਾੜ ਅਨਿਕ ਪੜਦੇ ਮਹਿ*
*ਪਰ ਦਾਰਾ ਸੰਗਿ ਫਾਕੈ॥*
*ਚਿਤ੍ਰ ਗੁਪਤੁ ਜਬ ਲੇਖਾ ਮਾਗਹਿ*
*ਤਬ ਕਉਣੁ ਪੜਦਾ ਤੇਰਾ ਢਾਕੈ॥*

**This man has to suffer punishment for his sinful and evil deeds. Then he weeps and wails. Therefore, man should not cause pain and suffering to other living beings. That is why, it has been said –**

*'Don't cause pain and suffering to any living being.'*
*ਦੁਖ ਕਿਸੇ ਨਹਿ ਜੀਵ ਕੋ ਦੇਨਾ।*

**Beyond that, holy men have opined and advised –**

*'Pardon the sin of the weak.'*
*ਨਿਰਬਲ ਕਾ ਅਪਰਾਧ ਸਹਿ ਲੈਨਾ।*

**This sentiment is called forgiveness.**

**Once, Maharaja Ranjit Singh was passing through a place. Close by, little children were shaking off berries from jujube trees by pelting brick-bats at them. A brick-bat hit the Maharaja (king) on his shoulder. His bodyguards caught hold of the guilty child and produced him before the king. Maharaja Ranjit Singh inquired into the entire matter. He not only forgave the child, but also gave him two villages as fief, and said to his retinue, "Look, these children hit the tree with brick bats, and the tree gives them fruit. Now that they have hit me, I should also give them something." What a noble conduct and character! It is worth reflecting.**

**Maharaja Ranjit Singh fought big battles and wars all his life, but in his entire life, he did not sentence even a single person to death. He left so much territory to the defeated enemy as was enough for him to lead a life of dignity. The entire prop of the weak is God Himself. None else in the world is capable of supporting him and giving him sustenance. Looting, beating, harassing and humiliating the weak is not a praiseworthy deed. Rather, it is considered very ignoble. In this context, there is a proverb which is quite prevalent–**

*'Evil is the killing of the poor, evil is his curse.*
*From a goatskin (bellows) even iron is reduced to dust.'*

*'My dear! from deceit remain ever free.*
*For serving the Guru, sacrifice thy body,*

*mind and property.'*

ਬੁਰਾ ਗਰੀਬ ਕਾ ਮਾਰਨਾ,
ਬੁਰੀ ਗਰੀਬ ਕੀ ਆਹ
ਮੂਏ ਬਕਰੇ ਕੀ ਖਾਲ ਸੇ,
ਲੋਹਾ ਭਸਮ ਹੋ ਜਾਏ।
ਅਕੁਟਲੰ ਰਹਿਣਾ ਨੀਤ ਪਿਆਰੇ
ਗੁਰ ਸੇਵਾ ਤਨ ਮਨ ਧਨ ਵਾਰੇ।

**Crookedness, which is called deception and trickery also, is a serious flaw in man's character. Such persons are at variance in thoughts, words and deeds. Outwardly they smile and show friendship, but in their mind they contemplate evil and destruction. There are many vices and foibles in life about which the *Gurbani* edict is:**

*'Themselves, they give not even a palmful of water,*
*But slander him who brought down the Ganges.'* P. 332

ਆਪਿ ਨ ਦੇਹਿ ਚੁਰੂ ਭਰਿ ਪਾਨੀ॥
ਤਿਹ ਨਿੰਦਹਿ ਜਿਹ ਗੰਗਾ ਆਨੀ॥

**Such persons do not give even a palmful of water to others. They never fulfil anybody's need. On the contrary, they feel pleased at another's suffering who is in need. King Bhagirath practised meditations and penances and thereby brought down the Ganges from the heavens and made it flow in the plains of India for its welfare and prosperity. But deceitful and cunning persons do not desist from slandering even a noble person who brought down the Ganges. Although, with the descent of the Ganges, millions of people got pure water, crops prospered, many cities came to be founded on its banks and it became the pride of India, yet people do not desist from slandering the person who brought it down from the heavens.**

*'Sitting and rising, crooked is their way.*
*Ruined themselves, to others too they bring ruin.'* P. 332

ਬੈਠਤ ਉਠਤ ਕੁਟਿਲਤਾ ਚਾਲਹਿ॥
ਆਪੁ ਗਏ ਅਉਰਨ ਹੂ ਘਾਲਹਿ॥

**All the time, sitting or standing, they behave in a deceitful manner. They themselves are worthless, and they make others also follow in their footsteps. Such persons do not know anything except arguing, quarreling and treachery. Even if Brahma (Creator) himself comes, they do not listen to him. They do not heed the greatest scholar and intellectual. They ruin themselves and lead others also to ruin. They themselves remain involved in sinful sensual pleasures and ruin others also with their ill advice. They laugh at others even though their own life may be inferior to others.' Kabir Sahib says that he feels ashamed of those who lead such a life. The complete hymn is as follows.'**

*'Besides foul discussions, such know not any other:*
*Even Brahma's word they believe not.*
*Ruined themselves, others too they bring to ruin.*
*In a house on fire (the body full of the fire of passions) are they asleep.*
*Making fun of others, themselves they are of defective vision (one-eyed).*
*Kabir at sight of such is ashamed.'* P. 332

ਛਾਡਿ ਕੁਚਰਚਾ ਆਨ ਨ ਜਾਨਹਿ॥
ਬ੍ਰਹਮਾ ਹੂ ਕੋ ਕਹਿਓ ਨ ਮਾਨਹਿ॥
ਆਪੁ ਗਏ ਅਉਰਨ ਹੂ ਖੋਵਹਿ॥
ਆਗਿ ਲਗਾਇ ਮੰਦਰ ਮੈ ਸੋਵਹਿ॥
ਅਵਰਨ ਹਸਤ ਆਪ ਹਹਿ ਕਾਂਨੇ॥
ਤਿਨ ਕਉ ਦੇਖਿ ਕਬੀਰ ਲਜਾਨੇ॥

**These vices or demerits do not let man take even a single step on the path of spirituality. Therefore, using great caution, man should remain free from deceit in life, and by rendering service to the Guru, he should attain his primary goal for which the *'jeev'* (individual soul, sentient being) has come into the world. Such is the Guru's**

edict–

*'By service and devotion in this world shall ye get a place at the Divine Portal.*
*Then, says Nanak, in joy may you gambol.'*
*P. 26*

***ਵਿਚਿ ਦੁਨੀਆ ਸੇਵ ਕਮਾਈਐ॥***
***ਤਾ ਦਰਗਹ ਬੈਸਣੁ ਪਾਈਐ॥***
***ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਬਾਹ ਲੁਡਾਈਐ॥***

**Therefore, we should ask for service from the Lord. By rendering devoted service alone can the chief goal of life be attained–**

*'Beg this boon of the Lord:*
*Service of God's devotees, company of the holy,*
*And attainment of the Supreme state by repetition of the Name Divine.' P. 1298*

***ਐਸੀ ਮਾਂਗੁ ਗੋਬਿਦ ਤੇ॥***
***ਟਹਲ ਸੰਤਨ ਕੀ ਸੰਗੁ ਸਾਧੂ ਕਾ***
***ਹਰਿ ਨਾਮਾਂ ਜਪਿ ਪਰਮ ਗਤੇ॥***

**This edict too occurs in *Sri Guru Granth Sahib* –**

*'Come sister-friends! to God's devotes we repair and in their service engage.*
*Discarding egoism, grind we grain and wash their feet.*
*By discarding egoism is suffering ended;*
*The ego should not one display.*
*Take shelter with God, thus acquiring honour.*
*In what the Lord does find joy.' P. 457*

***ਆਉ ਸਖੀ ਸੰਤ ਪਾਸਿ***
***ਸੇਵਾ ਲਾਗੀਐ॥***
***ਪੀਸਉ ਚਰਣ ਪਖਾਰਿ***
***ਆਪੁ ਤਿਆਗੀਐ।।***
***ਤਜਿ ਆਪੁ ਮਿਟੈ ਸੰਤਾਪੁ***
***ਆਪੁ ਨਹ ਜਾਣਾਈਐ॥***
***ਸਰਣਿ ਗਹੀਜੈ ਮਾਨਿ ਲੀਜੈ***
***ਕਰੇ ਸੋ ਸੁਖੁ ਪਾਈਐ॥***

**Spiritual knowledge is not gained without rendering devoted service to the Guru (Holy Preceptor) and one cannot follow the path of devotional worship either. Such is the *Gurbani* edict –**

*'Without serving the Guru, Lord's meditatioin is embraced not.*
*How can man of himself know the Lord?*
*Slandering others he abides in hell. Within him is the obscure spiritual darkness.'*
*P. 1013*

***ਗੁਰ ਸੇਵਾ ਬਿਨੁ ਭਗਤਿ ਨ ਹੋਵੀ***
***ਕਿਉ ਕਰਿ ਚੀਨਸਿ ਆਪੈ॥***
***ਨਿੰਦਾ ਕਰਿ ਕਰਿ ਨਰਕ ਨਿਵਾਸੀ***
***ਅੰਤਰਿ ਆਤਮ ਜਾਪੈ।।***

**Guru Sahib exhorts us to engage in service by offering one's self, life and pelf at the Master's feet, as is the *Gurbani* edict–**

*'God's devotees may I serve with drawing water, waving of fan, grinding of grain;*
*Rubbing their feet their dust on my forehead may rub.' P. 881*

***ਹਉ ਪਾਣੀ ਪਖਾ ਪੀਸਉ ਸੰਤ ਆਗੈ***
***ਪਗ ਮਲਿ ਮਲਿ ਧੂਰਿ ਮੁਖਿ ਲਾਈਐ॥***

**Joy and peace are obtained by rendering service to the Guru and by singing God's laudation in the company of the holy is attained an exalted status. He liberates himself as well as his family. Guru Sahib says –**

*'Devotion to the Master brings joy imperishable.*
*One lauding God in holy company,*
*And meditating on the Name Divine,*
*Shall himself be saved and those related to him be also saved.' P. 362*

***ਗੁਰ ਕੀ ਸੇਵਾ ਸਦਾ ਸੁਖੁ ਪਾਏ॥***
***ਸੰਤਸੰਗਤਿ ਮਿਲਿ ਹਰਿ ਗੁਣ ਗਾਏ॥***
***ਨਾਮੇ ਨਾਮਿ ਕਰੇ ਵੀਚਾਰੁ॥***
***ਆਪਿ ਤਰੈ ਕੁਲ ਉਧਰਣਹਾਰੁ॥***

**And –**

*'Liberated am I myself, liberated my associates, liberated my whole family.*
*At the Divine court, full of purity, is made fruitful service to the Master, Divinely - inspired.' P. 814*

***ਆਪਿ ਮੁਕਤੁ ਸੰਗੀ ਤਰੇ ਕੁਲ ਕੁਟੰਬ ਉਧਾਰੇ॥***
***ਸਫਲ ਸੇਵਾ ਗੁਰਦੇਵ ਕੀ ਨਿਰਮਲ ਦਰਬਾਰੇ॥***

***(... to be continued)***

# Information on Joint Pain and Osteoarthritis

## Osteoarthritis Overview

As we age, it is common for us to begin to have joint pains. A very frequent reason for joint pains is a condition called osteoarthritis. In osteoarthritis, the cartilage in the joints (which normally protects bones from rubbing together) wears down, and bone spurs can form (see image below).

Common symptoms of osteoarthritis include pain, stiffness, some loss of joint motion, and changes in the shape of the affected joints. Although osteoarthritis can affect almost any joint, it most often affects the hands, knees, hips, feet, and spine.

Osteoarthritis is a chronic condition that gradually worsens over time; however, there are several measures that may slow its progression and control symptoms.

## Osteoarthritis Risk Factors

A number of factors can increase the risk of developing osteoarthritis; most people with osteoarthritis have 1 or more of these factors:

1) Age—Advancing age is one of the strongest risk factors for osteoarthritis. The condition rarely occurs in people younger than age 40, but at least 80% people over age 55 years have some evidence of this disorder.

2) Gender—For unknown reasons, women are 2-3 times more likely than men to develop osteoarthritis.

3) Obesity—People who are obese are at high risk of developing osteoarthritis. Weight loss may reduce this risk.

4) Sports—The risk of osteoarthritis is increased in those who participate in certain sports that predispose to joint injury. This includes wrestling, boxing, cycling, gymnastics, and soccer; by contrast, running does NOT appear to increase the risk of osteoarthritis.

## Osteoarthritis Symptoms

The symptoms of osteoarthritis usually begin after age 40 and can vary considerably from one person to another:

1) Pain—The main symptom of osteoarthritis is pain that is worse with activity and relieved by rest. The pain usually occurs near the affected joint; however, in some cases, the pain may be referred to other areas. For example, the pain of osteoarthritis of the hip may actually be felt in the lower thigh or at the knee.

2) Stiffness—Morning stiffness is a common symptom of osteoarthritis. This stiffness usually resolves within 30 minutes of rising, but it may recur throughout the day during periods of inactivity. Some people also note a change in symptoms related to weather.

3) Swelling—Osteoarthritis may cause swelling from accumulation of excess fluid in the joint.

4) Crackling or grating sensation—This sensation that occurs with moving the joint

likely occurs because of roughening of the normally smooth surfaces inside the joint.

5) Bony outgrowths—These bony protuberances can be felt under the skin near joints and typically enlarge over time.

## Osteoarthritis Diagnosis

There is no single sign, symptom, or test that can diagnose osteoarthritis. Instead, the diagnosis is based on several factors, including a person's age, history, and symptoms such as pain, early morning stiffness lasting for a short time, crackling or grating sensation in the knee when going up or down stairs, and hard bony enlargement over a joint.

## Osteoarthritis Treatment

*I. Without Medications*

1. Weight loss—obesity and being overweight are strongly linked to development of arthritis of the knee and worsening of the disease over time. Even a small amount of weight loss lowers your risk and higher amounts (10% of body weight) may decrease your pain by up to 50% when achieved through combination of diet and exercise.

2. Physiotherapy—Physiotherapy and exercise improves flexibility and strengthens the muscles around your joints. Patients who exercise regularly despite their arthritis will have less pain than those who are inactive.

3. Orthoses, canes, and walkers—Splints that mobilize the joints (keep them from bending) can reduce pain and inflammation. Canes and walkers can reduce the stress on joints and make it easier to perform daily tasks.

*II. With Medications*

1. Topical treatments—Topical nonsteroidal anti-inflammatory drugs (NSAIDs) applied to skin over joint can help relieve pain for OA involving hands and knees. Topical capsaicin, which is an active substance in hot chili pepper, is a cream that can help some people with hand and knee osteoarthritis as well.

2. Nonsteroidal anti-inflammatory drugs (NSAIDs)—Oral NSAIDs (ibuprofen, naproxen, celecoxib) can help relieve pain AND reduce inflammation in the joint. However, they should be used at the lowest effective dose for the shortest duration possible because of potential side effects, which include stomach ulcers, heart disease, and kidney disease.

3. Acetaminophen—May have some very small benefits but is usually not significantly effective for relief of osteoarthritis pain.

4. Joint injections—Steroid injections are occasionally recommended for some people who still have significant pain that has not responded to weight loss, exercise, and other medications.

*III. Surgery*—Surgery is usually limited for severe osteoarthritis that significantly limits your activities and that did not respond to other arthritis treatments.

# The Discourse of Sant Ji

*Sant Waryam Singh Ji*

*(Continued from P. 85, issue July, 2018)*

**There is a parable relating to this fact too. In the Golden Age, once upon a time there was a very powerful king named Paras Nath. He conquered all the rulers of the world and put them in his jail. He took counsel with his minister, saying, I have defeated one lakh rulers and taken them prisoners. So I want to perform *Rajmedh Yagya* (a sacrifice that could be performed only by the ruler who claimed to be the king of the whole world). His wise minister said, your majesty, there is left one king, to whom you have paid no attention. His power is so great that not to talk of men, even the gods accept defeat at his hands. The king said, why did you not tell me about that king before? Now tell me quickly, where that extraordinary ruler lives, how much army he has, what are his weapons, so that I may vanquish him without any loss of time. The minister said, 'Your majesty! that king (ruler) rules inside the hearts of all men. He is called king Mind. The warriors of his army are indomitable. They are very powerful. They upset the penances of those who practise austerities. They break the *jap* of those, who are repeating God's Name. They drag to earth those who have risen upto the heaven. Their army generals are named anger, covetousness, illusion, pride, jealousy, backbiting, falsehood, false hope, fear etc. Till you subdue this great king, you can't qualify to be called a world-conqueror. So, sir, first conquer that ruler'. Hearing this, Paras Nath put in his maximum efforts; he took to breathing exercises and with the power of breath practised transcendental meditation right up to the tenth gate (crown of head). But whenever he ended his meditations, his mind would relapse into its old restless activities. Thus the desires were gone, but he could not control his mind. At last he lost all hope and according to his statement, he burnt himself in fire in infamy.**

**On hearing this, the Nawab entreated Guru Maharaj thus: Nanak, Holy Sir, what is the obstacle that does not permit the mind to enter the home of concentration. I have strong inner urge. I make an obeisance at your feet and petition you to take pity on this poor thing and take me under your charge. Kindly favour me with telling about the obstacles that come in the path of establishing control over the mind. Then Guru Nanak, the Emperor, ordained thus. This restlessness is the nature of the mind -**

*At times, the mind soars high up and at times it falls to the nether regions.*
*The greedy mind remains not steady and searches for wealth etc. in all the four directions.*

***ਕਬਹੂ ਜੀਅੜਾ ਊਭਿ ਚੜਤੁ ਹੈ ਕਬਹੂ ਜਾਇ ਪਇਆਲੇ ।।***
***ਲੋਭੀ ਜੀਅੜਾ ਥਿਰੁ ਨ ਰਹਤੁ ਹੈ ਚਾਰੇ ਕੁੰਡਾ ਭਾਲੇ ।।*** ***ਅੰਗ - 876***

*This body is a puppet of mammon. In it is infused the evil ego.*
*In coming and going, birth and death an apostate loses honour.*

***ਇਹੁ ਸਰੀਰੁ ਮਾਇਆ ਕਾ ਪੁਤਲਾ ਵਿਚਿ ਹਉਮੈ***

ਦ੍ਰਸਟੀ ਪਾਈ॥
ਆਵਣੁ ਜਾਣਾ ਜੰਮਣੁ ਮਰਣਾ ਮਨਮੁਖਿ ਪਤਿ ਗਵਾਈ॥ ਅੰਗ - 31

Guru Ji continued, Nawab Ji, the world goes on studying and studying. It never puts those concepts into practice. Since there are countless desires lurking in the mind, it is never at ease. Whether we are waking or sleeping.

What is this desire? In this connection, Rishi Vashisht Ji told Ram Ji thus; any objective that is pursued with strong determination, without caring for its antecedents or consequences giving all importance and passion to it, called desire. Man forgets his real spiritual self, because of this obstacle of the desires.

In this connection, there is a fable : One king went to dinner at the invitation of another king. During the dinner, he over-drank strong intoxicating liquors and lost his consciousness. Under its influence, the king started talking nonsensical words. Hearing it, the wise minister brought the king back to his own palace. As he was entering his palace, he found security guard soldiers marching up and down, performing their duty. The king asked a soldier, 'what are you doing?' He replied, I am on watch duty, round the palace, to protect the king. Hearing this, the king said, I too am a soldier. Now I shall work on watch duty, you take rest. And demanded his (soldier's) uniform.

Seeing the unconscious state of the king, the minister secured for him another uniform of the soldier. The king started patrolling on his feet. After sometime, he recovered his consciousness and recognized himself. He put down the (soldier's) rifle. The minister intervened, your Majesty, under the influence of strong intoxicating drinks, you forgot your exalted position, wore the soldier's uniform and began patrol duty of the soldier. The king enquired, are there others too who too forget themselves thus? The minister said, your Highness, not to talk of an individual or two, the whole world has forgotten itself, under the strong intoxication of Maya (illusion) and one regards oneself just as the individual consciousness and lower still, regards one self nothing more than the body of flesh. Because of so many desires in the mind, one sees not God in all and all in God Who is Immanent in all things, but regards 6 ft body as the whole reality.

This philosophy has been expounded by Krishan Maharaj thus -

O Arjun, son of Kunti whatever thing a man keeps on remembering all through life remains in his thought at the time of his abandoning the body. To that state alone he goes, which he was thinking at the time of death. The strong emotions of life manifest themselves at the time of death. He gets his destiny according to that. This is the advice of Gurbani, strengthening this point -

*At the last moment, he who thinks of wealth and dies in such a thought, is born again and again as the serpent species.*
*At the last moment, he who thinks the Lord, and if he dies in such a thought;*
*Says Tirlochan, that man is emancipated and the yellow-robed Lord abides in his heart.*

ਅੰਤਿ ਕਾਲਿ ਜੋ ਲਛਮੀ ਸਿਮਰੈ ਐਸੀ ਚਿੰਤਾ ਮਹਿ ਜੇ ਮਰੈ॥
ਸਰਪ ਜੋਨਿ ਵਲਿ ਵਲਿ ਅਉਤਰੈ॥
ਅੰਤ ਕਾਲਿ ਨਾਰਾਇਣੁ ਸਿਮਰੈ ਐਸੀ ਚਿੰਤਾ ਮਹਿ ਜੇ ਮਰੈ॥
ਬਦਤਿ ਤਿਲੋਚਨੁ ਤੇ ਨਰ ਮੁਕਤਾ ਪੀਤੰਬਰੁ ਵਾ ਕੇ ਰਿਦੈ ਬਸੈ॥ ਅੰਗ - 526

If these strong desires are kept in check

**and one is submerged in the sweet remembrance of dear God even though for one moment, even then one achieves the blessed state. Such is the example of the Ajamil, the sinner. The whole life, he went on committing sins. But at the last moment, his desires cried a halt, and he directed all his attention to God, weaving himself in the Name of the Almighty. He got an exalted state, which is often beyond the reach of even great yogis. So great is the influence of the desires, that their memory is not obliterated even through the succession of births.**

**Once upon a time, Shri Ram Chander Ji was gracing the assembly with his presence. Rishi Vashishtha was giving a discourse. A large number of audience was listening to his sermon. All of a sudden, Shri Ram Chander Ji clapped his hands and started laughing very loudly. Rishi Vasishth interrupted his discourse and asked Ram the cause of this strange behaviour. Rama replied that he had laughed on seeing that worm, that was trying to climb the wall. "But this can't be the whole cause of your loud laughter. Kindly explain the cause of your behaviour, for the enlightenment of the whole audience and remove their doubts. Ram said, Gurdev ere this, this worm has sat on the throne of Indra 14 times. On completing his term, he was hurled down into the world of miseries and troubles and in low births. Now its two legs are broken. In his mind, he still cherishes the ambition to be born a human being once again after completing 84 lakh births. Then he hopes to perform 101 sacrifices (yagyas) and become Indra again. (The belief was that anyone who completes more than a hundred yagyas becomes Indra, the ruler of the universe, dethroning the old incumbent). I laughed at his folly, said Ram. He does not know that there is a state even higher than that of Inder, from which there is no return to the world of miseries and troubles.**

**So Guru Nanak *Padshah* told the Nawab, that man's mind is so vitiated by desires that he cannot have concentration of mind even for a moment. The desires are of various kinds. Caught in these, he feels miserable and remains rotating in the various births, like the pots of the Persian wheel well, that keep on going up and down all the time. The chief ambitions (desires) are the following -**

**1. Desire for son - He who has no male issue wanders over many places, in the hope of having a son. To that end, he does not feel any shyness in resorting to anti-religious actions - if he can have a son. There is such a reference in Vichar Sagar.**

*The Hindu, who has no faith in the mausoleums worships the graves in the hope of getting a son. He approaches Syeds, Khwajas, Peers and Faquirs (all Muslim holy men) he folds his hands to them. He worships many kinds of ghosts and Bhairos (a deity), he goes to prohibited lands or to the cremation grounds in pursuit of his objective. He wears many magical charms and talismen. These he has hung round his neck (in the hope of getting a son).*

***ਜਾ ਕੋ ਹਿੰਦੂ ਕਬਹੁੰ ਨਹਿ ਮਾਨੇ।। ਪੁਤ੍ਰ ਹੇਤ ਤਹਿ ਇਸ਼ਟ ਪਛਾਨੇ।।***
***ਸਯਦ ਖਵਾਜਾ ਪੀਰ ਫਕੀਰਾ।। ਮਾਨਤ ਜੋਰਤ ਹਾਥ ਅਧੀਰਾ।।***
***ਭੈਰਉ ਭੂਤ ਮਨਾਵਤ ਨਾਨਾ।। ਧਰਤ ਸ਼ਿਵਾਬਲ ਭੂਮੀ ਮਸਾਨਾ।।***
***ਔਰ ਯੰਤ੍ਰ ਤਾਵੀਜ ਘਨੇਰੇ।। ਲਿਖ ਮੜਵਾਵੇ ਪੂਤ ਗਲ ਗੇਰੈ।।*** ***ਵਿਚਾਰ ਸਾਗਰ***

**If finally he does beget a son, then a whole series of problems begin, the baby's**

rearing up, terrible anxiety if he falls ill; great worry if the boy turns out to be a good-for-nothing; his education and so on. So there is no end to the desires.

**2. Desire for Wealth -** In order to amass wealth, one goes to foreign countries, resorts to frauds and deceptions, he turns a pick-pocket, indulges in corruption and takes to many other deceptions. In this connection, there is the story of King Karoon. He had such a mad passion for accumulating money, that collecting all the money from his subjects, he had filled forty big stores. He did not leave a single rupee with any person.

Once in order to test if still any rupee had been left with any person, he sent his daughter riding a horse-carriage, travelling all over the town. He issued a proclamation that if any person produces a rupee, his marriage would be solemnized with the princess. Hearing this proclamation, one boy went to his mother and persisted in demanding a rupee. Even when the mother explained the awkward situation the boy did not agree. In desperation, the mother told him that a rupee coin had been put in the mouth of his dead father, when he was buried. So go, dig up his grave and retrieve that rupee. The boy acted accordingly and gave that money to the king's guards in the hope of being married to the princess. Instead, in pursuance of the schemes made by King Karoon he was arrested. On interrogation, he gave out the truth. Accordingly the king ordered all the graves to be dug out to take out a rupee each from the mouth of the dead. He had such an irresistible desire for money. Man does not realize that one day he would have to quit the world and all the hoarded wealth would be left behind here. If one had such a powerful desire for amassing the wealth of the Name of God, he could achieve the highest states. Like this, if one has such a strong desire for wealth at the time of his death, then one is reborn as a serpent.

**3. Desire for the body -** This consists of decorating the body, busying it in the enjoyment of different juices and salts, regarding oneself nothing other than the body. This is bodily passion. In this connection, Guru Maharaj ordains that one can never achieve peace of mind by more and more enjoyments -

*Even though, thou cohabit with hundreds of thousands of ladies and rule over the nine regions of the world.*
*Even then, without the True Guru, thou shalt not obtain happiness and receive births over and over again.*

*ਜੇ ਲਖ ਇਸਤਰੀਆ ਭੋਗ ਕਰਹਿ ਨਵਖੰਡ ਰਾਜੁ ਕਮਾਹਿ।।*
*ਬਿਨੁ ਸਤਗੁਰ ਸੁਖੁ ਨ ਪਾਵਹੀ ਫਿਰਿ ਫਿਰਿ ਜੋਨੀ ਪਾਹਿ।। ਅੰਗ - 26*

Under this desire, one employs this invaluable body not for accumulating God's Name, but uses it for different pleasures and enjoyments. He wastes his opportunity (this birth) and then repents.

**4. Desire to win Public opinion -** Everyone in the world wishes that all should praise him, no one should censure him even by mistake. But such a thing never happens, the whole society never wholly praises any person. There are in the world too many fault finders too, as the following tale proves:

Sri Ram Chander Ji, after winning the war of Lanka had returned to his capital Ayodhya, along with Sita Ji. A washerman taunted him. The story goes like this. One day, a washerman's wife received the news

that her father was seriously ill. She immediately went to her father's house, which was nearby, without asking the permission of her husband, who was at the far-away washing ghat.

After enquiring about her father's health she returned home without any loss of time. But the washerman, her husband, stopped her from entering the house. Just at that time, Sri Ram Chander Ji was wandering in cognito to study the true feelings of the public, at first hand. Noticing this quarrel, Ram Chander Ji intervened and asked the washerman as to why he was not permitting his wife to enter the house. He disclosed his complaint, namely that she had gone to her father's house, without asking his permission. On enquiring the woman pleaded that the washing ghat was too far away, while her father's village was nearby. After enquiring about his health, she had immediately returned home. On hearing this, Sri Ram Chander Ji said, good man, this is no fault. You kindly give her permission to enter the house. At this the washerman made the reply, you consider me to be like Ram Chander, who brought home his wife Sita, after she had stayed at Ravan's house for nine months. Learning this adverse public opinion, Sri Ram sent Sita on her second exile.

Again once upon a time Ram along with brother Lakshman went to the forest. There he saw a farmer, who was wearing on his head a steel helmet; round his neck too, he was wearing a web of iron; and in his feet he was wearing full boots of leather. Over his bullocks too, he had cast a netted covering of coarse cloth. Ram enquired of him why he was wearing such a strange uniform. He replied, Sir, a bird with a very sharp beak lives in this place. If it swoops on one, it pulls out flesh from the body. So I have cast the nets over myself and the bullocks. The why of wearing these full boots is that in this area lives a scorpion, whose bite is fatal. On hearing this, Ram Chander Ji suggested, you leave this place and settle at some other place. We will help you in this. You would be able to live there in peace. The farmer took this suggestion ill; and replied, you consider me to be like Ram Chander? No one leaves his land or his wife. So I cannot act on your advice. Hearing this, Ram Chander Ji told his brother Lachhman thus: now tell me, on one side are people, who look upon my leaving Sita as a good thing, on the other side, there are people who regard the leaving of Sita as a gross evil thing.

So great men ignore the opinions of different people. They are neither afraid of public censure, nor are they attracted by the praises of the people.

There is a parable, relating to it. One rich businessman sent his son to Bhagat Nam Dev to receive education. In the evening when it was time for the child to go home, Nam Dev removed all the ornaments that the child was wearing and kept them in safe custody. Seeing all ornaments gone, the seth's wife jumped to the suspicion that Nam Dev had taken the child's ornaments. She mentioned this to her neighbouring woman and she to another and yet to another. The rumour spread all over the town and Nam Dev received bad opinions of the people.

Next day, when the seth went to Nam Dev's house alongwith his child , Saint Nam Dev told him never to send the child for

instructions wearing gold ornaments; lest someone should commit the murder of the child, for the greed of ornaments. He returned to the father the bundle containing all the ornaments. Returning home the Seth told his wife that saint Nam Dev had removed the child's ornaments to save his life and kept them in safe custody. He gave that packet of ornaments to his wife. The Seth's wife reported this fact to her neighbour, she to other neighbours and so on. Thus Nam Dev got praises from all in the town. Someone asked Nam Dev, yesterday you were the subject of the censure of all, today all are praising you. What is the secret? Nam Dev was sitting near a heap of ashes. He filled his fists with ashes. Throwing the right handful of ashes, he said, this is for those who were criticizing me yesterday. The left handful of ashes he threw and said, this on the head of those who were all praise for me today. We have no dislike of those who dispraised me, nor regard for those who are now loud in my praises. It is necessary for the seeker to rise above the desire for public opinion.

**5. Desire for holy scriptures -** Some have a great desire to be well read in the religious books and to sing praises of God with a very mellifluous voice.

There was once a musician named Bharadwaj. He had a constant desire to sing hymns in his mellifluous voice. One great man lifted him out of this desire and told him, mere singing will not suffice, you should attain true knowledge. Narad and Durvasa (sages) were always busy studying holy texts. The sage told Narad, you are like a ladle (long spoon) that is always stirring among different foods, but it has no taste of those foods. In the same way, one who stops at reading scriptures only generally remains bereft of true knowledge. So try to understand the text that is worth consideration. You have not understood the true thoughts of the scriptures. As Guru Maharaj has ordained.

*He may continue reading for his entire life and may study with every breath of his.*
*Nanak, only one thing, God's Name is of account and all else is but to prate and prattle in pride.*

ਪੜੀਐ ਜੇਤੀ ਆਰਜਾ ਪੜੀਅਹਿ ਜੇਤੇ ਸਾਸ।।
ਨਾਨਕ ਲੇਖੈ ਇਕ ਗਲ ਹੋਰੁ ਹਉਮੈ ਝਖਣਾ ਝਾਖ।।
ਅੰਗ - 467

Understanding these texts, you should meditate on God and realize the Truth. Rishi Durvasa used to carry his books on his head. Narad said, here comes an ass laden with burden (of books). He asked Durvasa Ji, why do you carry these books on your head as the donkey carries a load? Try to understand Truth out of these.

Guru Maharaj taught the following lesson to enlighten the world -

*Many Shashtras and many Simirtis, have I seen and searched them all.*
*Nanak, they equal not Lord God's invaluable Name.*

ਬਹੁ ਸਾਸਤ੍ਰ ਬਹੁ ਸਿਮ੍ਰਿਤੀ ਪੇਖੇ ਸਰਬ ਢਢੋਲਿ।।
ਪੂਜਸਿ ਨਾਹੀ ਹਰਿ ਹਰੇ ਨਾਨਕ ਨਾਮ ਅਮੋਲ।।
ਅੰਗ - 265

**6. Dirty desires or desire for show of religious performance -** Taking out short texts (of 40 verses) of magic and charm, seeking to bring people under one's control after gaining control over ghosts and devils is called the desire to show off one's religious achievements.

Similarly there can also be the desire to do good to others. This comes naturally to

God-realized great souls. They lead such a life, about which Guru Maharaj commands in -

*As everything is underneath Truth, the living with the Truth is superior to all.*

ਸਚਹੁ ਓਰੈ ਸਭ ਕੋ ਉਪਰਿ ਸਚੁ ਆਚਾਰੁ॥
ਅੰਗ - 62

Good men do good to others not out of any motive. Their life's conduct is like the rose that spreads sweet fragrance around them. Out of these temperament, good to others comes spontaneously. On the other hand, doing good to others is also a desire. Sage Vyas got an inspiration that he should at times be born in the world to give true interpretation of the holy texts. He would get true salvation with the body after doing good to the world for a whole *kalpa,* which consists of 4,32 crore years. Bound by this desire, he would keep being born in the world for uncounted ages.

Thus Guru Nanak expounded to Nawab Daulat Ali Khan that just as a stubborn horse can be controlled by bridle in the mouth, similarly to control the mind, it is very necessary to have a perfect Guru, from whom to learn shabad (holy writ). With that learning of shabad, the mind comes under control and thereafter can't forsake the sweet taste of the shabad. The upshot of all this is that after one's mind has been brought under complete control then one takes to the praises of God, single mindedly and with full concentration. One repeats the Name of God (jap) and our conscious mind rises to higher and higher stages and reaches one's eternal home; and achieves permanent bliss, forever and forever. This is the transparent drop about which Guru ordains -

*Kabir, the pure rain-drop of heaven mixes with the dust.*
*Millions of wise men have striven and failed. It can be separated not.*

ਕਬੀਰ ਨਿਰਮਲ ਬੂੰਦ ਅਕਾਸ ਕੀ ਲੀਨੀ ਭੂਮਿ ਮਿਲਾਇ॥
ਅਨਿਕ ਸਿਆਨੇ ਪਚਿ ਗਏ ਨਾ ਨਿਰਵਾਰੀ ਜਾਇ॥
ਪੰਨਾ - 1375

*Kabir, the immaculate drop from the sky has fallen on the filthy ground.*
*Know thou thiswise, that without the saints' association, it becomes, like the ashes of furnance.*

ਕਬੀਰ ਨਿਰਮਲ ਬੂੰਦ ਅਕਾਸ ਕੀ ਪਰਿ ਗਈ ਭੂਮਿ ਬਿਕਾਰ॥
ਬਿਨੁ ਸੰਗਤਿ ਇਉ ਮਾਂਨਈ ਹੋਇ ਗਈ ਭਠ ਛਾਰ॥
ਅੰਗ - 1374

This spotless drop, after getting out of the dirt of Maya (illusion) enters one's eternal home by the power of shabad, becomes one with God and merges in Him. Prayers to God, performed with concentration of mind bear fruit. The seeker must have unshakeable determination and unshakeable love of the quest.

Then taking shelter under Guru's shabad, one can complete the inner journey according to the law and then he lives in one's eternal home forever.

## CHAPTER - III

# The experience of Spiritual Devotion

Once the seekers came to the great Guru, the Tenth Master, from far off lands. The congregation made the submission, Great Sir, according to your command, we study the holy texts (Bani), we practise *Japa* (repetition of Name) of the Name of God,

*(... to be continued)*

# ਆਤਮ ਮਾਰਗ ਦੀ ਨਵੀਂ ਮੈਂਬਰਸ਼ਿੱਪ ਅਤੇ ਰਿਨੀਊਵਲ ਅਤੇ ਪੁੱਛਗਿਛ

**ਸ਼੍ਰੀ ਮਾਨ ਸੰਤ ਬਾਬਾ ਵਰਿਆਮ ਸਿੰਘ ਜੀ ਮਹਾਰਾਜ ਰਤਵਾੜਾ ਸਾਹਿਬ ਵਾਲਿਆਂ ਦੁਆਰਾ ਲਿਖਤ ਪੁਸਤਕਾਂ, ਗਾਇਨ ਕੀਤੀਆਂ ਸ਼ਬਦ ਗੁਰਬਾਣੀ ਕੀਰਤਨ ਦੀਆਂ ਕੈਸਟਾਂ, CD.'S, VCD.'S, DVD.'S MP3 ਦੇ ਆਪ ਜੀ ਹੇਠ ਲਿਖੇ ਐਡਰੈਸਾਂ ਤੋਂ ਮੰਗਵਾ ਸਕਦੇ ਹੋ ਜੀ।**

For all enquiries about 'Atam Marg' viz. renewal, new membership, non-receipt of the magazine etc. and also for procuring audios, videos & CDs; and books authored by Sant Waryam Singh Ji, please contact the following

## England (U.K.)

**For U.K. renewal of Atam Marg Magazine please forward cheque £ 40.00 payable to A.M.S.S.E.C.T. (U.K.) 9 Elizabeth Road, Walsall, West Midlands WS5 3 PF**

**Atam Marg Spiritual Scientific Educational Charitable Trust (U.K.)**
**9 Elizabeth Rd.,**
**Walsall West Midlands, WS5 - 3PF U. K.**

**Contact : Mrs. Gurbax Kaur,**
**Mr. Jagtar Kulair : Tel : 0044-1212002818**
**Fax : 0044-1212002879**
**Voicemail : 0044-8701654402**
**Raj Mobile : 0044-7968734058**
**Email : info@atammarguk.com**

## U.S.A.

**Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust,**
**Contact : Baba Satnam Singh Ji Atwal,**
**2755, Guildhall Dr., San Jose,**
**Ca - 95132, U.S.A**
**Phone :- 001-408-263-1844,**
**vgrmctusa@yahoo.com**

**S. Baldev Singh Grewal**
**Fremont, U.S.A - 001-510-249-9456**

## Canada

**Bhai Sarmukh Singh Pannu**
**Phone - 001-604-433-0408**

**Bhai Parmjit Singh Sandhu**
**Cell: 001-250-600-3072**

**Bhai Tarsem Singh Bains**
**Cell : 001-604-862-9525, Phone : 001-604-599-5000**

IN INDIA
09417214391, 09417214379 09814612900, 9417214378
Email: **atammarg1@yahoo.co.in**

## Australia

**Bibi Jaspreet Kaur**
**Cell : 0061-406619858**
**Email :- jaspreetkaur20@hotmail.com**

## Foreign Membership

| | Annual | Life |
|---|---|---|
| U.S.A. | 60 US$ | 600 US$ |
| U.K. | 40 £ | 400 £ |
| EUROPE | 50 Euro | 500 Euro |
| AUS. | 80 AUD$ | 800 AUD$ |
| CANADA | 80 CAN$ | 800 CAN$ |